CORE
Metadata, citation and similar papers at core.ac.uk
Provided by Etheses - A Saurashtra University Library Service

Saurashtra University

Re – Accredited Grade 'B' by NAAC
(CGPA 2.93)

Bheda, Bharatkumar V., 2010, *मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र*, thesis PhD, Saurashtra University

http://etheses.saurashtrauniversity.edu/id/eprint/247

Copyright and moral rights for this thesis are retained by the author

A copy can be downloaded for personal non-commercial research or study, without prior permission or charge.

This thesis cannot be reproduced or quoted extensively from without first obtaining permission in writing from the Author.

The content must not be changed in any way or sold commercially in any format or medium without the formal permission of the Author

When referring to this work, full bibliographic details including the author, title, awarding institution and date of the thesis must be given.

Saurashtra University Theses Service
http://etheses.saurashtrauniversity.edu
repository@sauuni.ernet.in

© The Author

"मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र"

(सौराष्ट्र विश्व विद्यालय की पीएच.डी. (हिन्दी)
उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध–प्रबंध)

प्रस्तुत कर्ता

भरतकुमार वी. भेडा

हिन्दी विभाग
सौराष्ट्र विश्व विद्यालय
राजकोट.

निर्देशिका

डॉ. गीताबहन डी. दवे

पूर्वअध्यक्षा, हिन्दी विभाग
श्री कणसागरा महिला कॉलेज
राजकोट

२०१०

पंजीकरण दिनांक ३१ जुलाई, २००७ पंजीकरण नं. ३६५९

प्रमाणपत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **भरतकुमार वी. भेडा** ने सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट की पीएच.डी. पदवी के लिए मेरे निर्देशन एवं निरीक्षण में **''मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र''** शीर्षक शोध–प्रबंध तैयार किया है । इस शोध–प्रबंध में इन्होंने उक्त विषय का यथाशक्ति अध्ययन, अनुशीलन एवं शोध–परक विश्लेषण, विवेचन करके वैज्ञानिक ढंग से मौलिक निरूपण किया हैं ।

साथ ही, यह शोध–प्रबंध अथवा इसका कोई अंश अब तक न तो प्रकाशित हुआ है और न ही इसका कहीं कोई उपयोग हुआ है ।

राजकोट

दिनांक : / /2010

निर्देशिका

डॉ. गीताबहन डी. दवे
पूर्वअध्यक्षा
हिन्दी विभाग,
कणसागरा महिला कॉलेज,
राजकोट (गुजरात)

अनुक्रमणिका

	पृ. सं.
भूमिका	
प्रथम अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	१–२१
द्वितीय अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का परिचयात्मक अध्ययन	२२–६२
तृतीय अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र के विविधरूप	६३–१७४
चतुर्थ अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्रों की विशेषताएँ ।	१७५–२६६
पंचम अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में निरूपित नारी–समस्याएँ ।	२६७–३३३
उपसंहार	३३४–३४१
परिशिष्ट	३४२–३४५

☼ ग्रंथानुक्रमणिका
- (अ) आधार ग्रंथ
- (ब) सहायक ग्रंथ
- (क) शब्द कोश
- (ड) पत्र–पत्रिकाएँ

भूमिका

(1) विषय का नामकरण

(2) प्रस्तुत विषय की प्रेरणा

(3) प्रस्तुत विषय के अध्ययन की आवश्यकता

(4) प्रस्तुत विषय का महत्व

(5) प्रस्तुत विषय की सीमा–व्याप्ति

(6) सामग्री संकलन

(7) प्रस्तुत शोध–अध्ययन की विशेषताएँ

(8) कृतज्ञताज्ञापन

भूमिका

हिन्दी साहित्य की शक्तिशाली साहित्यिक विधा के रूप में, उपन्यास विधा उभरकर सामने आयी है । शरू से लेकर आजतक के हिन्दी उपन्यासों ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है । उसमें सामायिक जीवन के विविध पहलूओं, विविध रूपों, विभिन्न स्तरो पर प्रकाश डाला और मनुष्य की आशा-आकांक्षा, दु:ख-निराशा, कर्तव्य और आदर्श का अधिकाधिक यथार्थ विवेचन पाया जाता है । पीछली शती में उपदेश कथाओं के रूप में आरंभ हूई हिन्दी की औपन्यासिक परंपरा प्रेमचन्द के आदर्शोन्मुख यथार्थवाद को पार करती हुई, सामाजिक यथार्थ के निकट पहुँच गयी है । वर्णन, घटना, समाज, व्यक्ति और मन के पडावों से होता हुआ हिन्दी उपन्यास निरंतर मंजिल की ओर अग्रसर है ।

उपन्यास यथार्थ परिवेश में मानव-जीवन की अभिव्यक्ति बनकर, मनुष्य की आंतरिकता का अन्वेषण करके, मानवता की प्रतिष्ठा तथा मानव मूल्य की मर्यादा निश्चित करता है । विशेषकर नारी और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध रहा है । समग्र मानव-जीवन की अनमोल नीधि के रूप में नारी को स्थापित किया गया है । नारी समाज की मुख्य धरोहर है । क्योंकि नारी पात्र के बिना समाज की कल्पना करना, असंभव है । नारी के सामाजिक मूल्यों की परख समाज और साहित्य के पल-पल परिवर्तित परिवेशों से ही हो सकती है । उपन्यास में जीवन का समग्र चित्रांकन होने के कारण नारी के विविध पारिवारिक एवं

सामाजिक रूपों का सम्यक चित्रण मिलता है । आधुनिकयुग की नारियाँ अब परम्परागत निषेधों में बँधकर जीवन-यापन करना कदापि पसंद नहीं करती है । फलस्वरूप विभिन्न परम्पराओं और सम्बन्धों के बीच में तादात्म्य स्थापित करने में असफल होती है । परिणामतया विविध शोषण का शिकार बनकर रह जाती है । उनकी पीडा, कुण्ठा, दु:ख-दर्द और त्रासदी की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम उपन्यास ही है । हिन्दी उपन्यासों में नारी के माता, पत्नी, प्रेयसी, बहन आदि अनिवार्य रूपों को नारी प्राचीनतम सोच एवं व्यवहारूपन में ढालने के बजाय आधुनिक परिवेश की परिपाटी पर नाप का प्रयास किया गया है । प्रस्तुत शोध-प्रबंध में मैंने नारी के विविधरूप, उनकी विशेषताएँ, नारी जीवन से उठनेवाली समस्याएँ आदि का विश्लेषण मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के सन्दर्भ में किया हैं ।

प्रस्तुत विषय की प्रेरणा :

वैसे तो आत्मस्फूरणा ही सिद्धि प्राप्ती का प्रेरकबल है । किन्तु परिवेश अवश्य असरकर्ता होता है । हिन्दी भाषा में मीठाश एवं ममत्व अद्‌भूत संगम है । अत: सातवीं कक्षा से ही हिन्दी भाषा के प्रति मेरा लगाव रहा है । हिन्दी विषय को लेकर अनुस्नातक, एम.फिल. की पढाई पूर्ण करने बाद, मेरे आदरणीय वडील ने पीएच.डी. करने का सुझाव दिया । वैसे तो पीएच.डी. करना मेरा लक्ष्य था ही अत: लक्ष्य की ओर कार्यरत होने के लिए कटिबद्ध हुआ और मेरे श्रद्धेय गुरूवर

डॉ. बी. के. क्लासवाजी को पीएच.डी. के संदर्भ में मिलने गया था । उन्होंने मूझे डॉ. गीताबहन दवे का नाम सूचित किया था ।

एम.फिल. के अभ्यासक्रम में मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों पर काम करने के बाद विस्तृतफलक पर नारीपात्रों का विश्लेषण करने की महेच्छा से मैं डॉ. गीताबहन दवे से मिला । उन्होंने बड़े ही उत्साह, प्रेम एवं सौहार्द के साथ शोधार्थी के रूप में मेरा स्वागत किया । बाद में विषय संबंधी चर्चा का दौर चला । तो मैंने एम.फिल. के विषय को विस्तृतीकरण करने की बात रखी थी । कुछ सुझावों के बाद उन्होंने आशीर्वाद सह अनुमति प्रदान की । इस प्रकार गुरूजनों के शुभाशिष के साथ मेरा ''मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों मे नारीपात्र'' विषय पर शोध-कार्य आरंभ हुआ ।

प्रस्तुत विषय के अध्ययन की आवश्यकता :

नारी विश्व साहित्य के लिए रोचक विषय रही है । क्योंकि नारी मानव की समस्त समस्याओं का निराकरण होते हुए भी स्वयं एक बहुत बड़ी रहस्यमय पहेली रही हैं । कोई धर्म, संहिता, सामाजिक विधान या राजनैतिक समाधान नारी को उसकी जंजीरों से मुक्त नहीं कर सका । हिन्दी उपन्यास साहित्य नारी के विभिन्न रूपों, समस्याओं और धारणाओं को आधार बनाता रहा है । इस सत्य को सरल ढंग से विश्लेषित करने का प्रयास इस शोध-प्रबन्ध के द्वारा किया गया है ।

पुष्पाजी का सृजन क्षेत्र विशेषतः नारी विषयक ही रहा है । जिनमें मध्यम वर्ग एवं निम्नवर्ग की नारियों का साम्प्रत समय के विस्तृतफलक को ध्यान में रखकर चित्रण देखने को मिलता है । उनके उपन्यासों के अध्ययन के माध्यम से नारी जीवन के विविध पहलूओं एवं आज के युग में नारी के बदलते रूपों पर प्रकाश डाला जा सकता है । पुष्पाजी के उपन्यासों की नारी न तो प्रसाद की श्रद्धा है, न गुप्ताजी की अबला । वह पूर्णतया रणचण्डी का स्वरूप धारण करके, परंपरा विध्वंशक के रूप में परिलक्षित होती है ।

पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में विशेषकर ग्रामीण एवं शहरी नारीजीवन के वृतांत को उजागर किया है । नारी जीवन में उठनेवाली विभिन्न समस्याओं का हल, लेखिका ने आधुनिकयुगीन पृष्ठभूमि पर ढूँढने का प्रयास किया है । लेखिका ने नारी उत्कर्ष को बढावा देने के साथ–साथ बोल्डनेस परिदृश्य से नारी शरीर के महत्व को सिद्ध किया है । नारी को जगत की जननी कहा जाता है । अतः प्रस्तुत शोध–प्रबंध द्वारा राष्ट्र निर्माण में नारी की भूमिका को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है ।

प्रस्तुत विषय का महत्त्व :

किसी भी राष्ट्र की पहचान उसकी चारित्रिक विशेषताओं पर निर्धारित है । उत्कर्ष चरित्र ही राष्ट्रीय भू–भागों को उज्जवलित करता है । इनमें चाहे नारी हो या पुरूष पात्र । वैसे तो ज्ञान की दिशा सर्वांगी

से एकांगी की ओर प्रस्थान करती है और एक ही समय में सर्वत्र ज्ञान को अर्जित करना असंभव-सा है । लेकिन जनरलाईझेशन को स्पेश्यलाईझेशन में परिणत अवश्य कर सकते है ।

आदम और इवा, सृजित मानव-जगत, आज जिस दशा और दिशा में उन्मुख हैं, उसमें इवा का अंश आज भी उसी आदिम स्थिति का प्रतिनिधित्व कर रहा है । विश्व एक गाँव बन चुका है । ऐसे साम्प्रत समय में नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण बदल गया हैं, कहीं कम, तो कहीं ज्यादा । आधुनिक युग में नारी शिक्षा, फैशन और पाश्चात्य प्रभाव से नारी चेतना उभरी है । शहरी नारी और ग्रामीण अंचलों की नारियों का तुलनात्मक रूप मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का मूल स्वर रहा है । पुष्पाजी ने समाज के सामने प्रश्न उठाया है कि क्या नारी सिर्फ शरीर ।

पुष्पाजी के नारी चरित्र परंपरागत सोच की आधारशीला नहीं बनते । परंपरा के कंधे पर बन्दूक रखते हुए, आधुनिक समय प्रवाह में विलीन होते है । अतः इस शोध-प्रबंध के माध्यम से आज के पुरूष प्रधान समाज में नारी-संघर्ष की दिशा क्या हो सकती है ? आज की घोर व्यावसायिक जिन्दगी में उपभोगवादी व्यवस्था के शीर्ष पुरूष क्या सचमुच नारी को मुक्त देखना चाहता है ? क्या नारी की ऐसी कोई शारीरिक मांग नहीं होती जिसकी पूर्ति वह स्वतः नहीं कर सकती ? आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त नारी का शारीरिक शोषण के साथ समझौता नहीं होता ? क्या नारी पुरूषों की अनुज ही बन सकती है ? क्या नारी पुरूषों की अग्रज नहीं बन सकती ? आदि प्रश्नों का उतर ढूँढने का

प्रयास उक्त शोध–प्रबंध में मैंने किया है । मेरे अन्वेषण से नारी संबंधी कई तथ्य उभरें है, जो निस्संदेह हर दृष्टि से परिवार, समाज एवं राष्ट्र के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते है ।

प्रस्तुत विषय की सीमा–व्याप्ति :

ज्ञान के सागर का कोई अंतिम बिन्दु नहीं है । शोध–परक अध्ययन में शोधार्थी जितनी गहरी तनम्यता से कार्य करेंगा । उसके लिए ज्ञान की नई – नई परतें दैदिप्यमान होती जायेंगी । किन्तु शोधार्थी विषयतांतर के दोष से बच सके, इस हेतु शोध–प्रबंध के विषय की कतिपय सीमा निश्चित कर लेना शोधार्थी के लिए आवश्यक है ।

'मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्र' विषय स्वतः ही नारी संबंधी चित्रण की परिसीमा निर्दिष्ट करता है । प्रस्तुत शोध–प्रबंध में आधुनिक समाज का नारी के प्रति क्या दृष्टिकोण रहा है । महिला एवं पुरूष उपन्यासकार की समीक्षा में नारी का स्थान क्या हो सकता है साथ ही नारी के बदलते रूप एवं नैतिक मानदंडों में बदलाव को चित्रित करते हुए, नारी चेतना का चित्रण प्रस्तुत विषय की सीमा है । आज के नारी चरित्रों की समस्याओं का चित्रण एवं समाधान प्रस्तुत विषय की व्याप्ति हें । नारी–चित्रण के साथ नारी के आधुनिक क्रिया–कलापों, विचार, व्यवहार आदि के बारे में विश्लेषण करने का मेरा नम्र प्रयास हैं ।

सामग्री संकलन :

शोध–विषय के लिए आवश्यक सामग्री–संकलन करना, मानों कठनिईयों का सामना करना है । किन्तु रूचिकर विषय की शोध का उत्साह, कठनिईयों को अगण्य बनाता हैं । मन–पसंद विषय की आवश्यक शोध–सामग्री मूझे, मेरे परम आदरणीय एवमं परम श्रद्धेय गुरूवर डॉ. गीताबहन दवे को सहायता से प्राप्त हुई है । तत्पश्चात् कणसागरा महिला कॉलेज के ग्रंथालय, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय के ग्रंथालय राजकमल प्रकाशन – दिल्ली, वाणी प्रकाशन – दिल्ली, जयभारती प्रकाशन – इलाहाबाद, किताबघर – दिल्ली आदि । इन सब के अलावा मेरे शोध विषय की महत्त्वपूर्ण सामग्री मेरे गुरूवर डॉ. गीताबहन दवे के पर्सनल ग्रंथालय से उपलब्ध हुई है । एक तो मेरे मार्गदर्शक है और दुसरे रूप से सामग्री संकलन मे सहायक की भूमिका भी निभायी है ।

इस प्रकार आवश्यक शोध सामग्री–संकलन करने मे परेशानियों से जूझना अवश्य पडा । किन्तु जरूरी एवं महत्वपूर्ण सामग्री की प्राप्ती, मेरे जूझारूपन को प्रोत्साहित करती रही है । विशेषतः मैत्रेयी पुष्पा से टेलिफोनिक बातचीत भी हुई है । पुष्पाजी से समय–समय पर जरूरी सुझाव मिलते रहे हैं । इसके परिणाम स्वरूप यह शोध–प्रबंध प्रस्तुत हो सका ।

प्रस्तुत शोध–अध्ययन की विशेषताएँ :

वैसे तो शोध–प्रबंध में वर्णित नारी–विषयक अनुसंधान अपने आप में कोई नया नहीं है । लेकिन नवीन तथ्यों की परिपाटी पर, नवीन

लेखिका के साहित्य को विश्लेषित करना मेरा प्रयास रहा है । एक ओर से अनुसंधान निरंतर प्रक्रिया है । जिसके अंतर्गत पूर्ववर्ती शोधार्थीओंने नारी को विभिन्न दृष्टिकोण से विश्लेषित किया है । मेरी यह शुभ भावना का श्रेयस्कर दृष्टांत ही विशेषता बनती हैं ।

१. आलोच्य नारीवादी साहित्यकार के उपन्यास साहित्य का अध्ययन करने का प्रथम प्रयास है ।

२. पुष्पाजी के उपन्यास-साहित्य में नारीपात्रों की महत्ता प्रतिपादित करने का प्रथम प्रयास हैं ।

३. यह विषय अपने आप में एक मौलिक अनुसंधान है, क्योंकि शायद इस पर अभी तक मेरी लघुशोध के अलावा उपलब्ध साहित्य नहीं है ।

४. भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण से पुष्पाजी के उपन्यासों की नारी चेतना को चित्रित करना ।

५. स्त्री प्रेरणास्रोत - जीवनदायिनी है, फिर भी उसके अस्तित्व को मिटाने की कोशिश क्यों ? यह जागरूकता समाज के समक्ष रखना ।

६. नारी के विविध रूप एवं उनके व्यक्तित्व को समाज के समक्ष प्रस्तुत करना ।

७. परिवार एवं समाज की विषयमताओं से लड़ती हुई नारी क्या आज के युग की जरूरतों के अनुसार खुद को ढाल पाई है या नहीं ? इस प्रश्न को विश्लेषित करने का प्रयास ।

८. पुष्पाजी के उपन्यासों में वर्णित विभिन्न समस्याओं का अध्ययन विश्लेषण करने का प्रयास किया है ।

९. उपभोक्तावादी पूंजी बाजार और मीडिया ने मिलकर नारी का वस्तुकरण कर दिया है । सौंदर्य प्रतियोगिता और भ्रूणहत्या जैसी घटनाएँ होती ही रहती हैं । तब नारी क्या चाहती है ऐसे विचारों के प्रति समाज एवं पाठकों को जाग्रत करने का मेरा प्रयास रहा है ।

ऐसे विचारों का संगृहीत हार्द उपर्युक्त शोध-प्रबंध की विशेषताएँ है ।

कृतज्ञताज्ञापन :

मेरी दृष्टि से कृतज्ञताज्ञापन को सिर्फ शब्दों में प्रस्तुत किया नहीं जा सकता है । मेरा मन उन गुरूजनों एवं स्वजनों के प्रति सदैव कृतज्ञता से भरा रहेगा । जिनके आशीर्वाद और प्रोत्साहन से मैं यह कठिन साधना को पूर्ण कर पाया हूँ ।

प्रस्तुत शोधकार्य को सम्पन्न करने की दिशा में मुझे जिन समर्थ मनीषियों का, सारस्वतों का असीम स्नेह और मार्गदर्शन मिला है । उनमें सबसे उच्च शिखर पर बिराजमान है परम पूजनीय गुरूवर्य डॉ. गीताबहन डी. दवे, पूर्व विभागाध्यक्षा, कणसागरा महिला कॉलेज, राजकोट जिन्होंने इस दुष्कर कार्य में मेरी समस्याओं व कठिनाईयों के समाधानार्थ सहायता और प्रोत्साहन दिया है । मेरे प्रबन्ध लेखन में उन्होंने

अत्यधिक तत्परता, असीम स्नेह, अमूल्य परामर्शों तथा सुपुष्ट विचारों द्वारा सदैव मेरा मार्गदर्शन किया है । उनके वात्सल्य पूर्ण व्यवहार एवं विद्वतापूर्ण मार्गदर्शन के कारण ही शोध–प्रबंध का अध्ययन कार्य संभव हो सका है । वस्तुतः यह शोध–प्रबंध उन्हीं की कृपा का परिणाम है ।

मेरे परम आदर्श एवं श्रद्धेय गुरूवर डॉ. बी. के. कलासवा, अध्यक्ष, हिन्दी भवन, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट का मैं तहेदिल से आभारी हूँ, क्योंकि उन्होंने मूझे 'मैत्रेयी पुष्पा' पर काम करने का सूझाव एवं प्रेरणा प्रदान की है । जो मेरे लिए विशेष उपलब्धि रही है । परम आदरणीय गुरूवर डॉ. एस. पी. शर्मा (पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी भवन, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट) उनका भी मैं विशेष आभारी हूँ । आदरणीय गुरूवर डॉ. जी. जे. त्रिवेदी का भी आभार व्यक्त करते हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ । डॉ. शैलेष मेहता, डॉ. सामत मकवाना जैसे प्रखर विद्वान गुरूजनों तथा श्रद्धेय महानुभावों का मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर मुझे समय–समय पर विषय संबंधी सूझाव दिए ।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध को पूर्ण करने के लिए सामग्री की सहायता करने के लिए मेरे शोध निर्देशक डॉ. गीताबहन डी. दवे की निजी पुस्तकालय का सहारा प्रदान हुआ था । विशेष तौर पर उनका आभारी हूँ । कणसागरा महिला कॉलेज ग्रंथालय – राजकोट, सौराष्ट्र विश्वविद्यालय का ग्रंथालय, वाणी प्रकाशन, राजकमल प्रकाशन, जयभारती प्रकाशन आदि प्रकाशनों एवं ग्रंथपालों का ऋणी रहूँगा ।

मैं अपने पूज्य माता–पिता और परिवारजनों का सदा ऋणी रहूँगा । जिन्होंने मुझे पीएच.डी. जैसी उच्च शिक्षा प्राप्त करने में सदैव सुविधा एवं प्रोत्साहन दिया हैं । जिनको शब्दों में अंकित करना मेरे लिए असंभव–सा है । विशेषतौर यु.जी.सी. का सदैव ऋणी रहूँगा, जिन्होंने मूझे शोध अध्ययन के लिए फेलोशीप अनायत की है । इस शोध कार्य में टंकन कार्य हेतु प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में जिन्होने मुझे सहायता दी है, मैं उन सबके प्रति आभार व्यकत करता हूँ । अंत में मेरे साथी, दोस्तों को कैसे भूल सकता हूँ । जिनकी बदौलत शोध कार्य पूर्ण हुआ है । ऐसे दोस्तों का आभारी रहूँगा ।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध मेरा विनम्र प्रयास है । उक्त प्रयास से मैं एक शोधार्थी बनकर नारी के विविध रूप एवं समस्या को समझाने में आंशिक मात्र में भी सहायक हो सका तो मैं स्वयं को कृत–कृत्य समझूँगा । यह मेरा विनम्र प्रयास है, इसमें अनेक त्रुटिया संभव है, आशा रखता हूँ कि सुधीजन इनको नगण्य मानकर इस छोटे–से कार्य को स्वीकार करेंगे ।

दिनांक : / /2010 विनीत

राजकोट

भरतकुमार वी. भेडा
हिन्दी विभाग
सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, राजकोट

शोध-प्रबंध परिचय

प्रस्तुत शोध-प्रबंध : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्र को विश्लेषित करने हेतु पाँच अध्यायों में विभक्त किया हैं । प्राक्कथन और उपसंहार विहीन है ।

प्रथम अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तितत्व एवं कृतित्व :

प्रथम अध्याय में पुष्पाजी के व्यक्तितत्व निर्माण के विभिन्न पहलूओं पर विचार किया गया है । उनके व्यक्तितत्व निर्माण में जन्म, शिक्षा, व्यक्तिगत संघर्ष, शादी-ब्याह आदि मुद्दो को लेकर निरंतर कशमक रही है । उन पर शब्दजाल का बूनाव प्रस्तुत किया है । जिनको लेकर उनकी साहित्य यात्रा प्रारंभ हुई है । संक्षेप में कहे तो उनके व्यक्तितत्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है ।

जीवन परिचय

प्रस्तावना

१.१ जन्म

१.२ पारिवारिक परिचय

१.३ शिक्षा व अभ्यास

१.४ व्यक्ति संघर्ष

१.५ शादी-ब्याह / विवाहिक बंधन

☆ **साहित्य यात्रा (कृतित्व)**

प्रस्तावना

१.६ कहानी संग्रह

१.७ उपन्यास

१.८ आत्मकथा

१.९ कवितासंग्रह

१.१० स्त्री-विमर्श

१.११ आवरण-चित्र : सर्वेश

१.१२ पुरस्कार

१.१३ संप्रति

उपसंहार

द्वितीय अध्याय :

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का परिचयात्मक अध्ययन :

द्वितीय अध्याय में पुष्पाजी के उपन्यासों का परिचयात्मक अध्ययन से उनकी कथावस्तु, वातावरण और उद्देश्य को सही अर्थों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया हैं । साथ में अँचल - विशेष में बाँधकर, विध्यांचलो एवं बून्देलखण्डी भाव - भंगिमाओं से अवगत कराने का नम्र प्रयास रहा है ।

२.१ 'इदन्नमम' : एक परिचय : कथासार

२.२ 'चाक' - एक परिचय कथासार

२.३ 'अल्मा कबूतरी' : एक परिचय कथासार

२.४ 'बेतवा बहती रही' - एक परिचय कथासार

२.५ 'अगनपाखी' : एक परिचय कथासार

२.६ 'विजन' - एक परिचय कथासार

२.७ झूलानट - एक परिचय कथासार

२.८ कही ईसुरी फाग - एक परिचय कथासार

२.९ त्रिया-हठ - एक परिचय कथासार

निष्कर्ष

तृतीय अध्याय : मैत्रेयीपुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्र के विविधरूप

तृतीय अध्याय के अंतर्गत पुष्पाजी के उपन्यासों में नारी के शाश्वत रूपों के अलावा विधवा, धर्मगत, कामकाजी, रूढिचुस्त-मुक्त, मुक्त यौनाचारी, राजनीतिज्ञ, दार्शनिक आदि नानाविध रूपों के चित्रांकन के साथ ही कलाकार की नारी-जागृति की व्यापक मीमांसा प्रस्तुत की गई हैं ।

प्रस्तावना

३.१ माता रूप में नारी

३.२ पत्नी रूपी नारी

३.३ प्रेमिका के रूप में नारी

३.४ विधवा के रूप में नारी

३.५ धर्मगत नारी (धार्मिक क्रिया-कलाप करती नारी)

३.६ कामकाजी नारी

३.७ रूढिचुस्त नारी

३.८ रूढिमुक्त नारी

३.९ मुक्त यौनाचारी नारी

३.१० राजनीतिज्ञ नारी

३.११ दार्शनिक प्रभावशाली नारी

निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास में नारी पात्रों की विशेषताएँ :

चतुर्थ अध्याय में पुष्पाजी के उपन्यासों के प्रमुख एव गौण नारीपात्रों की विशेषताओं का विवेचन प्रस्तुत किया है । यहाँ उन नारी चरित्रों की चर्चा की गई है, जो अपनी स्वभावगत विशेषताओं एवं वैचारिकता के कारण केवल पाठकों के दिलो-दिमाग पर ही नहीं, हिन्दी साहित्य में भी अपना विशेष स्थान बनाते हैं ।

प्रस्तावना

४.१ नारी का बाह्य सौन्दर्य

४.२ नारी में वात्सल्य एवं ममत्व

४.३ नारी में परंपरा बिध्वंशता एवं साहसिकता

४.४ बहुजन हिताय और सहानुभूति

४.५ प्रस्तुत नारी चरित्रों में विद्रोहभावना

४.६ नारी-चरित्रों में भारतीय सांस्कृतिक विरासत

४.७ अस्तित्व की सार्थकता एवं अस्मिता संघर्ष

४.८ प्रस्तुत नारी चरित्रों में आधुनिकता

४.९ जूझारूपन एवं अडिंगता

४.१०नारी चरित्रों में मनोवैज्ञानिकता

निष्कर्ष

पंचम अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में निरूपित नारी की समस्याएँ

प्रस्तुत अध्याय के अंतर्गत पुष्पाजी के नारी पात्रों की समस्याओं को चित्रित करने का प्रयास किया गया है । नारी को जन्म से लेकर अपने जीवन की अंतिम साँस तक अनेक प्रकार के शोषण का सामना करना पड़ता है । प्रस्तुत अध्याय में नारी की वैवाहिक प्रेम व यौन सम्बन्धी, विधवा जीवन, नारी स्वतंत्रता, स्त्री-पुरूष सम्बन्ध, नारी शिक्षा, स्त्री समानता, रोजगार-विषयक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण आदि का चित्रण करके, पुष्पाजी की नारी किस प्रकार इन समस्याओं से जूझती है इसका चित्रांकन दिया गया है ।

प्रस्तावना

५.१ अंतर्जातीय विवाह की समस्या

५.२ अनमेल विवाह की समस्या

५.३ नारी शिक्षा की समस्या

५.४ विधवा नारी की समस्या

५.४.१ विधवापन एक अभिशाप

५.५ नारी शोषण की समस्या

५.५.१ स्त्री पर शारीरिक अत्याचारों की समस्या

५.५.२ स्त्री पर बलात्कारी शोषण की समस्या

५.५.३ वेश्यावृति एक समस्या

५.६ नारी स्वातंत्र्य की समस्या

५.७ स्त्री–पुरूष सम्बन्ध की समस्या

५.७.१ पति–पत्नी के सम्बन्धों की समस्या

५.७.२ स्त्री–पुरूष के अवैध या अनैतिक सम्बन्धों की समस्या

५.८ स्त्री–समानता और न्यायिक अधिकारों की समस्या

५.९ स्त्री की रोजगोर विषयक समस्या

निष्कर्ष

उपसंहार

समग्र मूल्यांकन

प्रथम अध्याय
मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१.१ जीवन परिचय (व्यक्तित्व) :

जन्म :

पारिवारिक परिचय :

शिक्षा व अभ्यास :

व्यक्तिगत संघर्ष :

शादी–ब्याह / वैवाहिक बंधन :

१.२ साहित्य–यात्रा (कृतित्व) :

कहानी संग्रह :

उपन्यास :

आत्मकथा :

कविता संग्रह :

स्त्री–विमर्श :

'फैसला' कहानी पर टेलीफिल्म :

आवरण–चित्र : सर्वेश :

पुरस्कार :

संप्रति :

उपसंहार :

प्रथम अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१.१ जीवन परिचय (व्यक्तित्व) :

किसी भी साहित्यकार का साहित्यिक विश्लेषण, व्याख्या एवं मूल्यांकन और जीवनवृतांत को जानने के लिए, उसका जीवन परिचय प्राप्त करना अति आवश्यक और अनिवार्य है । क्योंकि सर्जक के जीवन और व्यक्तित्व के कई पहलू उसके साहित्य को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं । अत: मैत्रेयी पुष्पा के जीवन एवं साहित्य का उल्लेख करना मेरे शोध-प्रबंध के लिए अत्यंत आवश्यक बनता है । जहाँ तक रचनाकार के निजी जीवन को तराशा न जाए, वहाँ तक उसके साहित्य को समझना अति कठीन और गूढ़ रहस्य ही है ।

साहित्य समाज का दर्पण है, चूँकि साहित्यकारों की उत्पत्ति और निर्माण समाज से ही होता है । समाज में घटित हो रही घटनाओं को साहित्यकार हु-ब-हु ढंग से चित्रित करता है । हिन्दी साहित्य जगत् में कितने ही साहित्यकार, अपनी कलम के सिपाही बनकर सेवारत रहे है । साहित्य के माध्यम से समाज में उठनेवाले प्रश्नों को वाणी प्रदान करते हैं । बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध के हिन्दी उपन्यासों में नारी सशक्तीकरण या नारी विषयक, नारी-विमर्श को प्रश्रय देनेवालें उपन्यासों का सृजन हुआ हैं । ऐसा ही नारी विषयक समस्याओं को लेकर कलम चलानेवाली नारीवादी सशक्त लेखिका मैत्रेयी पुष्पा हैं । इन्होंने अपने निजी अनुभवों और अपनी जीवनयात्रा में घटित हुई घटनाओं को साहित्य में उतारा हैं । मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्री व नारी जीवन की नाना

प्रकार की समस्याओं और मनोद्वन्द्वों को विश्लेषित करने का कठीन कार्य किया है । मैत्रेयी पुष्पा के समग्र साहित्य में नारी जीवन के दु:ख, यातना, पीड़ा और घूँटन का चित्रण हुआ है । इस प्रकार मैत्रेयी नारी–विमर्श के क्षेत्र में सशक्त लेखिका के रूप में साहित्य जगत् पर दृष्टव्य होती है ।

जन्म :

हिन्दी साहित्य के इतिहास में बीसवीं शती के उतरार्द्ध में महिला लेखिकाओं में, मैत्रेयी पुष्पा का नाम आदर एवम् सन्मान के साथ लिया जाता है । क्योंकि पुष्पाजी का संपूर्ण साहित्य नारी–विषयक रहा है । ''मैत्रेयी पुष्पा जी का जन्म ३० नवम्बर १९४४ को अलीगढ़ जिल्ले के सिकुर्रा गाँव के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था ।''[१] इनका आरंभिक जीवन झाँसी के खिल्ली गाँव में बीता था ।

पारिवारिक परिचय :

जिस प्रकार आज समाज और देश में मान्यता फैली है कि छोटा परिवार सुखी परिवार । उसी विचार से प्रभावित होकर मैत्रेयी पुष्पा का परिवार छोटा रहा है । चूँकि उनकी माताजी शिक्षित थी । सामाजिक निषेधों एव बंधनों को तोड़कर उन्होंने शिक्षा प्राप्त की थी । – ''मैत्रेयी पुष्पा जी की माता का नाम कस्तूरी देवी और पिता का नाम हीरालाल था ।''[२] मैत्रेयी के बाल्यकाल में ही, उनके पिता का मोतीझला की बिमारी से देहांत हो गया था । यानी पुष्पा को पिता का प्यार एवम् छत्रछायाँ प्राप्त नही हुई थीं ।

मैत्रेयी पुष्पा के परिवार में केवल तीन ही लोग थे । – ''मैत्रेयी जी, उनकी माताजी कस्तूरी देवी और उनके दादाजी, जो पैरों से अपाहिज थे । बचपन में उन्हें 'पुष्पा' नाम से पुकारा जाता था । फलस्वरूप मैत्रेयी के साथ पुष्पा नाम जूड गया । – ''इनकी माँ एक कर्मठ़ और इरादों की मजबूत महिला थीं । पति की मृत्यु के बाद उन्होंने पढ़ने – लिखने की ठानी । गाँव में खूब जग हँसाई हुई, लेकिन अपने इरादों की मजबूत कस्तूरी देवी ने हार नहीं मानी और हाईस्कूल पास किया । जब मैत्रेयी आठ साल की थी; तब उन्हें प्रशिक्षित ग्राम सेविका की सरकारी नौकरी का फरमान आया ।''(३)

उनकी साहसिकता से मैत्रेयी पुष्पा के जीवन में काफि बदलाव आया था । उनकी पहली पोस्टिंग जिल्ला झाँसी में हुई । नौकरी और पढ़ाई के चलते मैत्रेयी के लालन–पालन पर संपूर्ण ध्यान नहीं दे पायी थीं । क्योंकि एक और पढ़ाई का मसला था । तो दूसरी ओर सामाजिक निषेधों को तोडने का मशुबा । उनका बचपन माँ के होते हुए भी माँ के प्यार से वंचित रहा था । चूँकि माताजी तो नौकरी के लिए बाहर चली जाती थी । इसीलिए माँ का प्यार उनके नशीब में नहीं था । पुष्पा के दादाजी ही उनके बचपन का एक मात्र सहारा थे ।

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा का बाल्यकाल अभाव और मातृप्रेम से वंचित रहा है । यद्यपि वह हरदम मातृप्रेम की ईच्छा जताए रहती थी और माताजी उसे पूर्ण करने में असफल रही थीं ।

शिक्षा व अभ्यास :

हमारे समाज में अनपढ़ को पशु के समान माना जाता है । अतः समाज में अपना निश्चित स्थान बनाये रखने के लिए, पुष्पाजी की माताजी ने समाज के विरोध और उसकी अवहेलना को सहते हुए शिक्षा प्राप्त की थी । साथ-साथ बेटी के लिए भी कड़ा रूख अपनाया था । मैत्रेयी पुष्पा का आरंभिक जीवन झाँसी के खिल्ली गाँव में बीता था । लेकिन माताजी की नौकरी के कारण मैत्रेयीजी को पढ़ाने के लिए -'' उन्होंने अलीगढ़ में 'समाज कल्याण बोर्ड' की संयोजिका के यहाँ रखने का फैसला लिया था । जिससे पढ़ाई में बाँधा न पड़े । किन्तु वह अलीगढ़ से अपनी माँ के पास झाँसी आ गयी । वहीं 'मोठ' के 'डी. वी. इन्टर' कॉलेज से बारहवीं कक्षा पास की ।' कॉलेज में मैत्रेयीजी अकेली महिला विद्यार्थिनी थीं ।

वह साईकिल से दस किलोमीटर मोठ तक पढ़ने जाती थी । ''इस प्रकार उन्होंने बुन्देलखण्ड कॉलेज झाँसी बी.ए. और हिन्दी साहित्य से एम.ए. तक की परीक्षा पास की है ।''(४)

पुष्पा जी ने अपनी आत्मकथा 'कस्तूरी कुंडल बसै' में लिखा है कि जब वह अलीगढ़ में 'समाज कल्याण बॉर्ड' की संयोजिका के वहाँ रहती थीं । तब वह अमानुषिक अत्याचारों का भोग बनी थीं। एक बार तो वह बलात्कार का शिकार हो सकती थी । किन्तु प्रतिकार की बदौलत से उसका सामना करके, वहाँ से झाँसी भाग आयी थी । जब कॉलेज में कामांध प्रिन्सीपाल ने मैत्रेयी के साथ शारीरिक छेड़खानी कि

तो, उसके खिलाफ आंदोलन भी किया था । ऐसी यातनाओं, पीडाओं और अमानुषित अत्याचारों का सामना करके उन्होंने अपनी पढ़ाई पूर्ण की थीं ।

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा ने व्यक्तिगत अपमान और अवहेलना को सहकर, अपनी पढ़ाई को पूर्ण किया था । वैस तो एक स्त्री का पुरूषप्रधान या पुरूषअधिकृत वातावरण में पढ़ना, अपने आप में एक बहुत बड़ी उपलब्धि ही है । क्योंकि भूखे शेर की तरह मानव बर्बरता के सामने लड़कर अपने हक एवम् अधिकारों को प्राप्त करने की गुस्ताखी पुष्पाजी ही कर सकती है । वह सामाजिक तौर पर नारी उत्थान एवम् नारी सशक्तीकरण की एक झलक मानी जाती है ।

व्यक्तिगत संघर्ष :

जिस प्रकार सिकन्दर, हिटलर, नेपोलियन बोनापार्ट आदि महान योद्धाओं को देखे तो, उसकी महानता के पीछे उसका व्यक्तिगत संघर्ष छिपा दिखाई देता है । सिकन्दर ने पूरे जगत् पर विजय पाने के लिए अवर्णित संघर्ष किएँ । तब जाकर वह महान योद्धा कहलाया । इसीलिए किसी भी प्रतिष्ठित व्यक्ति की सफलता के पीछे, उनका व्यक्तिगत जीवन संघर्ष छिपा रहता है । उसी प्रकार मैत्रेयी पुष्पा ने निजी जीवन में काफि परेशानियों का सामना किया है । 'मोठ' इन्टर कॉलज में पढ़ते वक्त जातिय समस्याओं का सामना निडरता के साथ किया और अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती रही थीं । मैत्रेयी पुष्पा जी का जीवन सरिता के समान है । जिस प्रकार सरिता कितनी सारी मुश्किलियों एवम्

रूकावटों का सामना करके, अपने लक्ष्य समन्दर से मिलाप करती है । उसी प्रकार पुष्पाजी का लक्ष्य पढ़ना था । तो उन्होंने निजी जीवन यात्रा में आनेवाले रूकावटकर्ताओं का सामना बड़ी निर्भीकता के साथ करके लक्ष्य को प्राप्त किया हैं ।

पुष्पा जी का बचपन ग्रामीण परिवेश में व्यतीत हुआ है । युवावस्था में झाँसी शहर में आ गई थी । क्योंकि माताजी की नौकरी की बदौलत उन्हें कई स्थानों पर घूमना पड़ा था । जिससे वह विविध परिस्थितियों से वाकेफ भी हुई । कॉलेज के शहरी वातावरण मे भी उन्हें अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ा । जैसे – ''मैत्रेयी ने कॉलेज के दिनों से ही लिखना प्रारंभ कर दिया था । उनकी पहली कविता, जिस बाँड़े में वह रहती थीं । उसमें काम करनेवाली महिलाओं के ऊपर लिखी थीं, जो अखबार में छपी थी, जिसे पढ़कर बाड़े के लोग उत्तेजित हो गए और मैत्रेयी जी को वहाँ से कमरा खाली करना पड़ा ।''[५]

मैत्रेयीजी ने कविताओं के माध्यम से बाड़े में रहनेवाली मजदूर महिलाओं की समस्या और उसकी शारीरिक शोषण की गाथा से उन्हें परिचित करवाया था । वह उनका प्रथम साहसिक कदम था । जिसके फलस्वरूप, वह लोगों की नजरों में बूरी हो गई और कमरा खाली करना पड़ा था । किन्तु इस बात से पुष्पा जी को आत्म संतृष्टि थी कि उन्होंने बाड़े की महिलाओं के प्रश्नों को एक नई दिशा जरूर प्रदान की थी ।

मैत्रेयी का जीवन अभावग्रस्ता में ही बीता था । उन्होंने शादी के पहले कभी पारिवारिक सरंक्षण एवम् अपनत्व को प्राप्त नहीं किया था । चुँकि माताजी का जगह-जगह पर तबादला हो जाता था । इसीलिए उनके साथ रहने का अवसर कम प्राप्त हुआ था । फिर भी झाँसी की रानी की तरह, अपने रास्ते में आनेवाले हरेक बवंडारो का जमके सामना किया था । बचपन से लेकर युवावस्था तक उन्होंने अकेले ही अनेक परेशानियों का मुकाबला किया था । इस प्रकार पुष्पा जी विभिन्न परिस्थितियों का सामना करती हुई, अपनी अलग पहचान बनाती रही है । जिससे समाज के पटांगण में और साहित्य की देहलीज पर सशक्त नारीवादी लेखिका के रूप में पहचाना जाता है ।

शादी-ब्याह / वैवाहिक बंधन :

मनुष्य की साहजिक प्रवृति कामेच्छा है । चूँकि मनुष्य का आनुवांशिक लक्षण है, पुत्रोत्पति सृष्टि पर रहनेवाले हरेक जीव की अभिलाषा और मैथुन, आहार और निंद्रा सह सामान्य रूप से समान है । इसीलिए मनुष्य में काम, इच्छा, लगन आदि अविरत संचारी भाव है । परिस्थित एवम् वातावरण के अनुसार यह भाव जागृत हो जाते है । दरअसल मनुष्य में यह भावों का होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है । इन के बिना मनुष्य का जीवन आधे से अधूरा ही है । जिस प्रकार मोहन राकेश कृत नाटक 'आधे अधूरे' में मनुष्य की दैहिक ईच्छाओं की पूर्ति के लिए, एक से अन्य के पास जाना पड़ता है । उसी प्रकार मनुष्य के अंशों में सुषुप्तावस्था के रूपमें कामेच्छा भाव होना अनायास एवमं सहज है ।

मैत्रेयी पुष्पा के आंतरिक जगत् में भी लगन एवम् कामना थी कि उनकी शादी हो, उनका अपना परिवार हो । मैत्रेयी पुष्पा की शादी - २०-२१ वर्ष की अवस्था में अलीगढ़ के एक डॉक्टर के साथ हुई । दरअसल मैत्रेयी जी की शादी कस्तूरीदेवी के खिलाफ थी । उन्होंने माताजी के अनुशासन को तोड़कर, अपनी ईच्छाओं की पूर्ति की थी । माताजी चाहती थीं कि वह शादी-ब्याह के झंझट में न पड़कर नौकरी करे और अपने पैरों पर खड़ी हो । लेकिन मैत्रेयी जी अपने विवाह के पक्ष में थी और उन्होंने खुद अपनी माँ से खुद की शादी के लिए कहा था ।

वैसे तो मैत्रेयीजी ने अपनी आत्मकथा 'कस्तूरी कुंडल बसै' में दो-तीन लोगों के नाम का उल्लेख किया है । जिनके प्रति वह समर्पित थी । किन्तु परिस्थितियों से वश होकर उन्होंने अपने दिल की आवाज को दबाया है । पुष्पाजी के फैसले में आधुनिक और पाश्चात्य विचारों का गहरा प्रभाव दिखाई पड़ता है । क्योंकि शिक्षित होने का मतलब ही प्रतिकार करना है । उन्होंने 'चाक' उपन्यास में लिखा है कि ''शिक्षा से कुसंस्कार और अज्ञानता दूर होती है । जैसे -'' श्रीधर शिक्षा का अर्थ देते हैं - मर्दों के कुसंस्कारों और अहं की अशिक्षा को मिटाना और निजी स्वार्थों से मुक्त होना ।''[६] पुष्पाजी के व्यक्तित्व में विद्रोही विचारधारा रही है, जो साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है । वह विचारधारा आगे चलकर नारी-विमर्श की एक मिशाल बनकर, शोषितों और पीड़ितों के लिए आधार स्तंभ बन गई है । आज के परिप्रेक्ष्य में पुष्पाजी का व्यक्तित्व नारियों के लिए श्रेष्ठतम उदाहरण है । जिन्होंने

अपने अधिकारों एवम् अस्तित्व के लिए पुरूष समाज व्यवस्था के सामने सिर उठाया है । अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए झाँसी की रानी की तरह रणचण्डी बनी है ।

वर्तमान समय में मैत्रेयीजी नोएडा में रहती है और स्वतंत्ररूप से साहित्य सेवा में संलग्न है । मैत्रेयी का लेखनकार्य स्त्री–विमर्श को एक नई पहचान और पृष्ठभूमि देने में सफल भूमिका अदा कर रहा है ।

१.२ साहित्य–यात्रा (कृतित्व) :

साहित्य मानव समाज की भावात्मक स्थिति और गतिशील चेतना की अभिव्यक्ति है । इसी गतिशील चेतना का ही परिणाम है कि हमारे समक्ष नीति, रीति, आदर्श, आचरण, रहन–सहन और परम्परा के प्रतिमान हंमेशा बदलते रहे हैं । बदलाव की यह स्थिति राजनीति, समाज, धर्म, कानून एवं संस्कृति सभी पर समान रूप से विद्यमान है । जैसे – जैसे परिस्थितियाँ बदली हैं, वैसे ही हमारे विधि–विधानों, जीवन मूल्यों परम्पराओं, रूढियों एवं व्यवहारों में व्यापक बदलाव हुए हैं, होते रहेंगे ।

२०वीं शताब्दी के अंतिम दशक की चर्चित कथाकार मैत्रेयी पुष्पा, समकालीन 'स्त्री–विमर्श' का एक सशक्त उदाहरण है । जिन्होंने अपने कथात्मक लेखन से 'स्त्री–विमर्श' को एक नई पृष्ठभूमि प्रदान की है । वैसे तो महिला लेखन की अविच्छिन्न परम्परा रही है । पुष्पाजी ने बेतवा बहती रही से लेकर 'त्रिया–हठ' तक, हिन्दी साहित्य जगत् को नये – नये चरित्र प्रदान किए है । अविरत रूप से शोषण के बहुरूपों को

उजागर किया है । वह अपने आप में संपूर्णतः नवीन एवम् अति विशिष्ट है । ज्ञातव्य है कि पुष्पाजी ने केवल स्त्री-शोषण के अंतहीन सिलसिलों का वर्णन ही नहीं अपितु साथ-साथ स्त्री-मुक्ति के सपनों के अक्स को भी प्रस्तुत किया हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा के संपूर्णतः साहित्य में एक ही स्वर की प्राधान्यता ज्यादात्तर देखने को मिलती है, वह नारी-विषयक समस्या है । क्योंकि जिस वातावरण से पुष्पाजी का सम्बन्ध है, उनको महसूस किया है । उसी बात का हु-ब-हु ढंग से अपने साहित्य में चित्रांकन प्रस्तुत किया है । इस प्रकार नारी समस्याओं को वाणी देकर लिखनेवाली लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पाजी का नाम अग्रसर रहा है ।

पुष्पाजी ने साहित्य की अनेक विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है । जिसका विस्तार से अध्ययन प्रस्तुत शोध-प्रबंध में आलेखित किया गया है ।

कहानी-संग्रह :

समकालीन साहित्य-संसार के केन्द्र में कथा-साहित्य है । इसका कारण इसके निहित जीवन की बहुआयामी जटिलताओं - विषमताओं एवं मानव-यथार्थ की गतिशीलता को पकड़ने की अद्‌भुत शक्ति है । समय के साथ यह स्वयं भी परिवर्तित होता रहा है । इसमें बौद्धिक उर्जा की खपत की ज्यादा गुंजाइश होती है, यानी वह विचार की प्राधनता को लेकर चलता है । जबकि काव्य हृदयगत सच्चाइयों को व्यक्त करता है । महिलावादी चेतना का उभार आधुनिक बौद्धिक

विमर्श से ही संभव हुआ है । यह स्वाभाविक है कि इस बौद्धिक चेतना का पोषण कथा साहित्य के माध्यम से हो । इसी कारण हिन्दी महिला लेखन का प्रबल आधार कथा-साहित्य बना है । कथा-साहित्य की परिवर्तनशीलता और महिला चिंतन का बदलता परिप्रेक्ष्य परस्पर गुँथकर गतिमान है ।

स्वातंत्र्योत्तर कहानी-लेखिकाओं में मन्नु भण्डारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियवन्दा, शिवानी, विजय चौहान, रजनी पन्निकर आदि को नई कहानी आंदोलन के दौरान महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो चुका था । अति आधुनिक युग में नाशिरा शर्मा, मेहरून्निसा परवेज, मैत्रेयी पुष्पा, निरूपमा सेवती आदि है । जैसे - '' वास्तव में इन लेखिकाओं का हिन्दी महिला लेखन के समकालीन संदर्भ में पूर्ववत् महत्त्व है, क्योंकि आधुनिक नारी की बदलती मनःस्थिति, दाम्पत्य सम्बन्ध, कामजन्य प्रेम, नारी मनोविज्ञान की यथार्थ पकड़ के द्वारा नारी के लिए मुक्ति की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का श्रेय इन्हें ही प्राप्त है । इन्होंने जो भूमि प्रदान की; परंपरा, रूढ़ि, नैतिकता आदि के पुरूषसत्तात्मक मूल्यों को उजागर करने का जो दायित्व उठाया, उसी पर आगे चलकर महिला लेखन का विस्तार हुआ है । स्त्री जीवन से संबद्ध अनछूए पहलूओं और कार्यकलापों की साहसपूर्ण ढंग से खुलेपन के साथ समकालीन कहानियों में अभिव्यक्ति हुई हैं ।''[७]

पुष्पाजी ने हिन्दी साहित्य में अपनी अलग पहचान बनायी है । क्योंकि स्त्री जीवन से संबंधित अनछुए पहलूओं को उन्होंने कहानियों

के माध्यम से अभिव्यक्त किया है । जिसमें नई चेतना का संसार होता है । इनके कहानी-संग्रह निम्न प्रकार से है ।

" (१) चिन्हार

(२) गोमा हँसती है

(३) ललमनियाँ

(४) अपना-अपना आकाश

(५) तथा अन्य कहानियाँ"(८)

प्रस्तुत कहानी-संग्रहों में पुष्पाजी ने ग्रामीण यथार्थ और बुंदेलखण्डी परिवेश को समन्वयता के साथ समायोजन किया है । आँचलिकता एवम् सहजता समकालीन लेखन जगत् में इनकी अलग पहचान बनाती है ।

उपन्यास :

उपन्यास मानव जीवन का चरित्र-चित्रण मात्र हैं । उनके रहस्यों को खोलना ही लक्ष्य है । क्योंकि मानव जीवन से संबंधित भावो और अनुभावों को उपन्यास के माध्यम से हु-ब-हु ढ़ंग से प्रस्तुत किया जाता है । मैत्रेयीजी ने भावुक और मार्मिक संवेदनक्षमता से पूर्ण बुन्देलखण्डी जीवन यथार्थ को प्रस्तुत करके, रेणुजी की तरह आँचलिकता की परिपाटी पर खरी उतरती है । पुष्पाजी ने अपने उपन्यास जगत् में बुन्देलखण्डी परिवेश और ग्रामीण समाज के यथार्थ को बुन्देलखण्डी

खुरदरी भाषा में प्रस्तुत करने के कारण इनका लेखन विशिष्ट संवेध धरातल का निर्माण करता है ।

हिन्दी साहित्य के अंतर्गत मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी जीवन का सच्चा दस्तावेज प्रस्तुत है । जिसमें से नारी-विमर्श की महक आती है । इनके उपन्यासों का क्रम इस प्रकार है -

क्रम	उपन्यास		प्रकाशित साल
१	'स्मृति दंश'	-	१९९० ई.
२	'बेतवा बहती रही'	-	१९९३ ई.
३	'इदन्नमम'	-	१९९४ ई.
४	'चाक'	-	१९९७ ई.
५	'झूलानट'	-	१९९९ ई.
६	'अल्मा कस्तूरी'	-	२००० ई.
७	'अगनपाखी'	-	प्रथम संस्करण-२००१/ द्वितीय संस्करण-२००३
८	'विजन'	-	प्रथम संस्करण-२००२/ द्वितीय संस्करण-२००६
९	'कही ईसुरी फाग'	-	प्रथम संस्करण-२००४
१०	'त्रिया-हठ'	-	प्रथम/द्वितीय संस्करण-२००६''[९]

पुष्पाजी का प्रथम उपन्यास 'स्मृति दंश' है । यह उपन्यास १९९० ई. में प्रकाशित हुआ था । स्त्री-विमर्श के इसी प्रवाह में शामिल कलाकार हैं - मैत्रेयी पुष्पा । जिनकी रचनाओं में नारी के विविध स्वरूपों के दर्शन तो होते ही हैं, साथ ही साथ माटी की महक और लोक की अनुगूँज भी साफ साफ सुनाई पड़ती है । पुष्पाजी के सभी उपन्यासों में एक विशेषता साफ झलकती है, वह है नारीवादी विचारधारा । क्योंकि वह एक सक्षम नारीवादी लेखिका है । इसीलिए, उन्होंने अपने उपन्यास साहित्य की पृष्ठभूमि को भले अलग-अलग कलेवर में रखा हो । किन्तु एक-ही स्वर ज्यादातर मुखरित होता है, नारी विषयक । प्रबंध लेखक ने अपने अध्ययन के लिए इन्हीं उपन्यासों को आधार बनाया हैं ।

आत्मकथा :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । वैचारिक दृष्टि के आधार पर पशु से अलग पहचान बनाता है । वैसे तो हरेक मनुष्य की निजी पहचान एवम् अहमियत होती है, जिस प्रकार गाँधीजी ने अपने अनुभवों और आपबीती को आत्मकथा के स्वरूप में गठित किया है । मनुष्य दीर्धदृष्टा होने से उसका नजरियाँ सबसे अलग और भिन्न होता है । जिसके अंतर्गत अपने जीवन के वास्तविक पहलूओं का दृश्यांकन करता है । उसी प्रकार मैत्रेयी पुष्पाजी ने अपने संघर्षगत जीवन की समस्याओं और विशेषताओं के मार्ग को प्रविष्ट किया है । अपने जीवन के हार्द और अभावग्रस्ता को आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

(१) ''कस्तूरी कुंडल बसै ।

(२) गुड़िया भीतर गुड़िया ।''(१०)

'कस्तूरी' कुंडल बसै' एक आत्म-कथात्मक उपन्यास है । इस आत्मवृतान्त में माँ और बेटी के अन्तरद्वन्द्व व टकराहट के कई विस्तार है । पुष्पाजी की आत्मकथा का दूसरा भाग 'गुड़िया भीतर गुड़िया' है । अगर बाजार की भाषा में कहे तो मैत्रेयी का एक ओर धमाका । आत्मकथाएँ प्राय: बेईमानी की अभ्यास-पुस्तिकाएँ लगती है क्योंकि कभी सच कहने की हिम्मत नहीं होती तो कभी सच सुनने की । अकसर लिहाज़ में कुछ बातें छोड़ दी जाती हैं तो कभी उन्हें बचा-बचाकर प्रस्तुत किया जाता है । मैत्रेयी पुष्पाजी ने इसी तनी रस्सी पर अपने को साधते हुए कुछ सच कहे हैं - अकसर लक्ष्मण रेखाओं को लाँघ्र जाने का खतरा भी उठाया है । यह मैत्रेयी पुष्पा का जीवन-वृतान्त मात्र न होकर एक ऐसा साहित्यिक दस्तावेज है, जिससे एक गँवई लड़की को महत्त्वपूर्ण लेखिका के रूप में व्यक्ति-वान्तरण के अंतर्गत समझा जा सकता है ।

कविता-संग्रह :

कविता के क्षेत्र में मैत्रेयी पुष्पा का योगदान कम रहा है । क्योंकि अब तक एक-ही कविता-संग्रह प्रकाशित हुआ है । जो निम्न रूप से है । (१) ''लकीरें ।''(११)

स्त्री–विमर्श :

मैत्रेयी पुष्पाजी एक सशक्त नारीवादी विचारधारा की लेखिका है । ज्यादात्तर उनके साहित्य स्वर स्त्री–विमर्श ही रहा है । स्त्री–विमर्श के अन्तर्गत लेखक स्त्री–विषयक लेख व आलेखों को प्रस्तुत करता है । हिन्दी के लिए 'स्त्री–विमर्श' शब्द नया कहा जाय तो शायद गलत नहीं होगा । हालाँकि आधुनिक 'स्त्री–विमर्श', से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण मुद्दे जैसे कि स्त्री–विषयक समस्याएँ, शोषण, यौन–क्रांति, नारी–उत्त्थान आदि पर अपना मंतव्य देते है । लेकिन आज जिस रूप और अर्थ में 'स्त्री–विमर्श' आन्दोलन का रूप ग्रहण करता जा रहा है, उसका पर्याय नारीवादी लेखन या महिला लेखन नहीं हो सकता । 'स्त्री–विमर्श' न तो स्त्री द्वारा लिखा गया साहित्य है वरन् यह स्त्रियों द्वारा स्त्रियों की समस्या पर लिखा गया साहित्य मात्र है ।

(१) ''खुल खिड़कियाँ ।''[१२]

अपितु पुष्पाजी ने 'खुली खिड़कियाँ में स्त्री–विषयक सभी पहलूओं को प्रकाशित किया है । ऐसा लगता है कि उनका साहित्य 'स्त्री–विमर्श' के लिए ही लिखा गया हो ।

'फैसला' कहानी पर टेलीफिल्म :

मैत्रेयी पुष्पा की 'फैसला' कहानी पर ''वसुमती की चिट्ठी'' नामक टेलीफिल्म बनी है । जिन्हें ''सार्क लिट्रेरी अवार्ड'' से सम्मानित किया गया है । ज्ञातव्य होता है कि कहानी कितनी महत्त्वपूर्ण एवम् प्रभावशाली रही होगी । पुष्पाजी ने पाठकों की भावनाओं और जिज्ञासाओं को ध्यानमें रखते हुए साहित्य का सृजन किया है ।

आवरण-चित्र : सर्वेश :

मैत्रेयी पुष्पाजी बहुप्रतिभा सम्पन्न व्यक्तितत्व की मालकिन है । अपने अंदर पड़ी विभिन्न सुषुप्त शक्तियों को साहित्य के अलावा कई क्षेत्रों में उजागर किया है । जैसे - निम्न रूप से है । -

- प्रतिष्ठित फोटोग्राफर
- १९८९ से हिन्दी व अंग्रेजी के लगभग तमाम छोटे-बड़े समाचार पत्रो व पत्रिकाओं में छायाचित्रों का प्रकाशन ।
- देश के अनेक नगरों में छायाचित्र प्रदर्शनी ।
- हिन्दी अकादमी समेत कई संस्थाओं द्वारा सम्मान ।
- फोटोग्राफी के अलावा पर्वतारोहण व यात्रा में अभिरूचि ।
- प्रेसक्लब ऑफ इन्डिया, वीमेन्स प्रेस कोर, दिल्ली जर्नालिस्ट एसोसिएशन ऑफ इन्डिया व आथर्स गिल्ड ऑफ इन्डिया सहित कई संस्थाओं की सदस्या ।''(१४)

पुरस्कार :

मैत्रेयी पुष्पाजी को उनकी विभिन्न कृतियों के लिए पुरस्कृत किया गया है । जिनमें से कुछ पुरस्कार निम्नलिखित हैं -

(१) हिन्दी अकादमी द्वारा साहित्य (कृति) सम्मान ।

(२) 'सार्क लिट्रेरी अवार्ड' (फैसला कहानी पर टेलीफिल्म : 'वसुमती की चिट्ठी') ।

(३) 'बेतवा बहती रही' को प्रेमचन्द सम्मान उत्तरप्रदेश साहित्य संस्थान द्वारा १९९५ में दिया गया ।

(४) उपन्यास 'इदन्नमम' को १९९६ में शाश्वती संस्था बेंगलौर द्वारा नैजनागुड्ड़ तिरूमालम्बा पुरस्कार दिया गया ।

(५) मध्यप्रदेश साहित्य परिषद द्वारा वीरसिंह देव पुरस्कार से सम्मानित किया गया है ।

(६) 'द हंगर प्रोजेक्ट' (पंचायती राज) का सरोजिनी नायडु पुरस्कार से सम्मानित किया गया है ।''[(१५)]

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पाजी को अन्य कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया हैं ।

संप्रति :

सन् १९६८ ई. में ये दिल्ली आ गई, तथापि इनका बुंदेलखण्डी ग्रामीण संस्कार न केवल सुरक्षित रहा, अपितु शहरीकरण की इस आधापापी में ग्रामीण जनों की सहज नैसर्गिकता की ओर इनका आकर्षण बढ़ा तथा लोक-मूल्यों के प्रति इनकी आस्था बलवती हुई, जो आगे चलकर इनके लेखकीय कर्म में देखने को मिलती हैं । इन्होंने अपनी पुत्री द्वारा प्रोत्साहित किए जाने पर विधिवत् लिखना प्रारंभ किया था । सर्वप्रथम इनकी 'आक्षेप' कहानी छपी, उस समय वे जामिया मिलिया विश्वविद्यालय में तीन महीने के अपने प्राध्यापकीय दायित्त्वों का निर्वाह कर रही थी, लेकिन बाद में इस्तीफा देकर स्वतंत्र लेखन-कार्य में जुट

गई । आज वह एक सशक्त नारीवादी विचारधारा से प्रेरित लेखिका के रूप में कार्यरत हैं ।

उपसंहार :

हिन्दी साहित्य में महिला - साहित्यकारों की उपस्थिति कोई नयी बात नहीं है । महिलाओं ने हिन्दी साहित्य की नहीं, वरन् भारतीय साहित्य के साथ ही प्रेरक और सर्जक की भूमिका निभाते हुए अपनी भावप्रवण प्रकर्षी प्रतिभा का परिचय दिया है । इसी परंपरा और विरासत पर फलित हिन्दी साहित्य का इतिहास मैत्रेयी पुष्पा की संवेदनात्मक सृजनशीलता की सहयात्रा का मुखातिब रहा है ।

हिन्दी साहित्य की परिपाटी को देखे तो, बीशवीं शती के उत्तरार्द्ध में जिन महिला लेखिकाओं की एक प्रकार की बाढ़ आयी थी । उसमें पुष्पाजी एक सशक्त महिला लेखिका जो, अपनी भावप्रवण प्रकर्षी प्रतिभा का परिचय देती है । अंत: 'स्त्री-विमर्श' की सदबहार गायिका के रूप प्रस्थापित होती है । पुष्पाजी ने साहित्य के माध्यम से बुन्देलखण्ड और आसपास के अंचल-विशेष को केन्द्र में रखकर नारीजीवन का खरा यथार्थ दृश्यांकन किया है, साथ ही, आधुनिक युग में आजभी गाँवों में नारी की हीन दशा को एवम् उनकी समस्याओं को प्रस्तुत करने का कठीन परिश्रम भी किया है । अगर युँ कहे कि पुष्पाजी ने अपने साहित्य को साधन बनाकर 'नारी-विमर्श' को नयी चेतना प्रदान की है, तो गलत न होगा ।

संदर्भ सूची

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७३
२.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७३
३.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७३
४.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७३–१७४
५.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७३–१७४
६.	'चाक' उपन्यास	ले. मैत्रेयी पुष्पा	३४५
७.	समकालीन महिला लेखन	ले. डॉ. ओमप्रकाश शर्मा	१७८
८.	'इदन्नमम' उपन्यास के मुखपृष्ठ पर से – मैत्रेयी पुष्पा		
९.	'ताप्तीलोक' पत्रिका – १६ सितम्बर २००५		३१
१०.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७५
११.	समकालीन महिला लेखन	लेखक डॉ. ओमप्रकाश शर्मा	१५३
१२	'इदन्नमम' उपन्यास के मुखपृष्ठ पर से – मैत्रेयी पुष्पा		
१३.	नई सदी के उपन्यास	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७५
१४.	'चाक' उपन्यास के मुखपृष्ठ पर से – मैत्रेयी पुष्पा		
१५.	नई सदी के उपन्यास –	सम्पादक डॉ. नवीनचंद्र लोहनी	१७६

द्वितीय अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का परिचयात्मक अध्ययन

२.१ 'इदन्नमम' : एक परिचय : कथासार

२.२ 'चाक' उपन्यास – एक परिचय : कथासार

२.३ 'अल्मा कबूतरी' : एक परिचय : कथासार

२.४ 'बेतवा बहती रही' : एक परिचय : कथासार

२.५ अगनपाखी : एक परिचय : कथासार

२.६ विजन : एक परिचय : कथासार

२.७ झूलानट : एक परिचय : कथासार

२.८ कही ईसुरी फाग : एक परिचय : कथासार

२.९ त्रिया–हठ : एक परिचय : कथासार

निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का परिचयात्मक अध्ययन

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में प्रस्तुत बुंदेलखण्डी परिवेश एवं उनकी भावभंगिमाओं को परिचयात्मक अध्ययन के द्वारा समझाने का आंशिक प्रयास रहा है ।

२.१ 'इदन्नमम' : एक परिचय :

'इदन्नमम' मैत्रेयी पुष्पाजी का एक नारीवादी दृष्टिकोण को लेकर लिखा गया सफल एवम् चर्चित उपन्यास है । जिसे सन् १९९६ में शाश्वती संस्था बेंगलौर ने 'नेजनागुड्डु तिरूमालाम्बा' पुरस्कार से सम्मानित किया गया है । वैसे तो हिन्दी साहित्य में नवोदित लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम' एक आँचलिक उपन्यास है । 'रेणजी' का 'मैला आँचल' पाठकों को पूर्णिया की मिट्टी की महक से रंग देता हैं; तो 'इदन्नमम' विंध्य के वनांचलों से अभिभूत कर देता है । 'इदन्नमम' प्रकृति की सुन्दर छायाँओं का सुखद अनुभव देता है, पर साथ-ही इसमें बसे शोषितों की त्रासदी मन को संतप्त भी करती है ।

कथासार :

पुष्पाजी का बहुचर्चित उपन्यास 'इदन्नमम' अपनी ऊपरी सादगी के बावजूद भी एक बेहद ही जटिल और संश्लिष्ट उपन्यास है । तीन पीढ़ियों की समानान्तर चलती हुई, कहानी के तीन पात्र बऊ, प्रैम और मंदाकिनी (मंदा), स्त्री-विमर्श के तीन अलग-अलग नारीचरित्र हैं ।

उपन्यास का प्रारंभ बऊ और मंदा के पर गमन से होता है । मंदा के पिता की हत्या के बाद, बऊ अपने–आपको और मंदा को सुरक्षित न पाकर, श्यामली गाँव के पंचमसिंह (दादा) के पास अपना बसेरा बनाती है । दादा अर्थात् पंचमसिंह के रूप में उन्हें एक सच्चा शुभेच्छु भी मिलता है । लेकिन पंचमसिंह के भाई ककाजू, सहायता और सहानुभूति की आड़ में मन्दा के पिता की सारी जायदाद हड़पना चाहता है । कथावस्तु में दो प्रेम कथाओं का जिक्र हुआ है । जिसमें एक है मंदा और मकरन्दसिंह की कथा और अमरसिंह (दाऊजी) और कुसुमा भाभी की कथा । दोनों प्रेमकथाओं का वर्णन बहुत गहराईयों के साथ हुआ है । लेकिन प्रेम की पराकाष्ठा तक पहुँचना सिर्फ कोरे ख्यालात ही रह जाते हैं । सहानुभूति की आड़ में मन्दा बलात्कार को भोग बनती है और कुसुमाभाभी बच्चे की माँ ।

इस प्रकार मंदा को अस्तित्वपरक लड़ाई में अनेक यातनाओं को सहना पड़ता हैं । किन्तु मंदा के लिए प्यार ही जीवन का एकमात्र सत्य नहीं है । वह मकरन्द से प्यार करती है । उसकी व्याकुलता से अंतहीन प्रतिक्षा करती है । फिर भी वह उपन्यास की अन्य स्त्रियों का अनुचरण नहीं करती हैं । व्यष्टि दु:ख को समष्टि दु:ख में विलीन करती है । अन्याय, जुल्म का प्रतिरोध करने के लिए कटिबद्ध हो जाती है । मकरन्द से उसकी सगाई या मँगनी टूट जाती है । फिर भी वह टूटती नहीं है, उसका सामना करने के लिए तत्पर और सतर्क हो जाती है ।

प्रस्तुत कथावस्तु में औद्योगिकीकरण का चित्रण हुआ है । लेकिन मंदाकिनी का आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख होना दृष्टिगत होता है । किन्तु महाराज से विद्रोह की दिक्षा ग्रहण करके वह समाज के उन्नतिकरण

के लिए कार्यान्वित होती है । क्रैशरों के मालिक अभिलाखसिंह से लड़कर, गाँववालों को इक्कठा करके, मजदूरों में एकता की भावना जाग्रत करती है । वह मजदूरों को अपना ट्रेक्टर खरीदवाकर, एक तरह से मजदूरों की हिमायती और पक्षपाती बनकर रह जाती है । पुष्पाजी का उद्देश्य मजदूरों की स्थिति को पाठकों के सामने रखकर, वर्गभेद खत्म करना जरूर रहा है । लेकिन प्रेरणास्रोत रूपी मंदा के चरित्र से प्रेरित होकर, मालिक और मजदूर वर्ग का संघर्ष शरू हो जाता है ।

मंदा का व्यक्तितत्व साम्यवादी हिमायती बनकर मजदूरों में क्रांति की ज्वाला फैलाता है । जो मालिकों से अपने अधिकारों के लिए खून की होली खेलते है । दूसरी ओर मंदा, मजदूरों के लिए अपना सबकुछ समर्पित करती हैं । मन्दा के जीवन का उद्देश्य मजदूरों और शोषितों का उध्धार करना है । इसीलिए लेखिका ने मंदा को मजदूरों की मसीहा के रूप में प्रस्थापित किया है । प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु में लेखिका ने राजनीतिक वातावरण और दावपेच, षड्यंत्र आदि का चित्रण पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है । बरसों से गाँव में डाक्टर का इन्तजार करते लोग, गाँव में डाक्टर के आगमन से अपनी जीत मानते है । लेकिन सहानुभूति के पीछे षडयंत्र का पता जब मंदा को चलता है । तब मन्दा के नेतृत्व में राजनीतिक दलों के खिलाफ आन्दोलनी रूख अपनाया जाता है । किन्तु पुलिस अधिकारियों और शासित पक्ष के नेताओं का सर्वनामी गठबंधन गरीबों को असहाय यंत्रणाएँ देता है । तो ऐसी स्थिति में आम जनता 'वोट' न देकर अपना जनाक्रोश व्यक्त करते है । मंदा के नेतृत्व में ग्रामीण प्रजा वेसा ही करती हैं । लेखिका ने अंत में

सुगना द्वारा अभिलाखसिंह की हत्या के माध्यम से यह चेतावनी दी है कि जुल्म और अन्याय को नियंत्रित नहीं किया गया तो, हिंसा के द्वार खुल जायेंगे । यह तथ्य सम सामाजिक सच्चाई का एक जीवंत दस्तावेज है ।

जब तक मनुष्य अपने व्यक्तिगत दु:ख का घेरा तोड़कर बाहर नहीं आता, तब तक उसे मुक्ति नहीं मिलती है । व्यष्टि में विलीन ही सुख का साधन है । दूसरा एक वैचारिक बिन्दु यहाँ स्पष्ट होता है कि अपने हिस्से की लड़ाई हमे खुद ही लड़नी चाहिए । जब तक हम दूसरों से लड़वाते रहेंगे । तब तक उसकी कीमत हमें चुकानी पड़ेंगी । अपने गाँव सोनापुरा में इन्हीं दो संकल्पों के सहारे मंदाकिनी शोषितों के साथ जुड जाती है । वह भुक्तभोगी जो है । उसकी यातना दो स्तरों की है – एक स्त्री होने के नाते उपभोग की वस्तु समझकर बलात्कारित और दूसरी शोषण की शिकार । उसके संघर्ष को देखकर उसे अनेक उपनामों से लांछित पुरस्कृत किया जाता है । जैसे कालभैरवी, महाकाली, रानी लक्ष्मीबाई आदि ।

इस उपन्यास में अनेक समस्याओं को निरूपित किया गया है । इन सभी आतंक, हिंसा, आवेग और घात-प्रतिघातों के बीच मकरंद और मंदाकिनी के निर्मल, प्रेम का हृदय स्पर्शी चित्रण हुआ है । मंदा अपने प्रियवर मकरंद की बाट जोहती रहती है, जो कभी वापस नहीं आता । उसकी आशा घुंघली होती हुई अंत में अदृश्य हो जाती हैं ।

उपन्यास की भाषा शैली को देखे तो, पुष्पाजी ने विंध्य के वनांचलों की बोली का प्रयोग किया है ।

यद्यपि उपन्यास आँचलिकता की परिपाटी में लिखा गया है । इसीलिए, उन्हें खरा उतारने के लिए प्रादेशिक बोली का ज्यादात्तर इस्तेमाल हुआ है ।

पुष्पाजी ने 'इदन्नमम' उपन्यास को आँचलिकता के परिवेश पर सृजन किया है । जिसमें देशकाल और वातावरण का खासतौर से ध्यान दिया गया है । क्योंकि जगह-जगह पर राजनीतिक वातावरण और धार्मिक सानिध्यता का वर्णन हुआ है । मालिक वर्ग और मजदूर वर्ग का संघर्ष, तीज-त्यौहार के साथ अंधश्रद्धा आदि लोक-रिवाजों के अनरूप वातावरण का गठन हुआ है ।

मंदा की लड़ाई दूसरों के लिए है । मंदा और उसके गुरू का यह आत्मसमर्पण है, लोक कल्याण के लिए । 'इदन्नमम' अर्थात् यह ऊर्जा, शक्ति समूचा जीवन ही मेरे लिए नहीं दूसरों के लिए है ।

२.२ 'चाक' उपन्यास - एक परिचय :

'चाक' लेखिका का सर्वाधिक विवादित उपन्यास है । यह सत्रह भागों में लिखा गया एक सशक्त उपन्यास है । 'चाक' उपन्यास में ब्रज के देहात का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक यथार्थ चित्रित है । तो दूसरी ओर स्त्री त्रासदी है । इस उत्पीड़न के विरोध में संघर्षरत स्त्री शक्ति है । नारी यातना सभी वर्ग, सभी युग और सारे

समाज की स्त्रियों का सच है । संघर्षरत स्त्रीशक्ति का अन्याय के विरोध में अग्रसर होना, इस उपन्यास में दृष्टव्य होता है ।

कथासार :

ब्रज के आंचल में यह उपन्यास उखेला गया है । कथ्य और भावबोध के दो आयाम यहाँ लक्षित किए जा सकते है । एक – उत्तरशती के ब्रज का देहात यथार्थांकन के माध्यम से समकालीन भारतीय गाँव का सामाजार्थिक, राजनीतिक परिवेश परिलक्षित हुआ है । दूसरा महत्त्वपूर्ण आयाम स्त्री त्रासदी है । उपन्यास का प्रारंभिक बिन्दु रेशम नामक स्त्री की हत्या है । अतरपुर गाँव की आबादी एक हजार है । जिसमें ब्राह्मण, जाट, नाई, खाटिक, दलित, बनिया तथा कुछ मुसलमान है । रेशम, सारंग नैनी की बूआ की लड़की है और सारंग रेशम के खून का हिसाब चाहती है । सारंग गुरूकुल में पढ़ी–लिखी युवती है । सारंग के परिवार में ससूर गजाधरसिंह और पति रंजीत गाँव के कुलीन मर्दों में आगे है । सारंग का बेटा चन्दन और रंजीत का भाई दलबीर जो पुलिस में है । गाँव का प्रधान फतेसिंह, उनके बेटे हुकुमसिंह और राकेश, गाम शेठ भवानी दास, पुराने जमींदार नम्बरदार, सारंग के चचिया ससूर खूबाराम, उनका बेटा भँवर पण्ड़ित चरनसिंह आदि उपन्यास के अन्य पुरूष पात्र है ।

रेशम, सारंग, गुलकंदी, राममूर्ति, कलावती, खेरापतिन दादी, प्रधानिन, लौंगसिरी बीबी और हरिप्यारी जैसी नारियाँ है । गाँव है

इक्कसवीं सदी का सियासती दाँव-पेंच, छल, द्वेष, विद्रोह, दमन यहाँ के जीवन का हिस्सा है । अतरपुर गाँव के इन पात्रों को लेकर चलनेवाला यह उपन्यास, कई प्रकार की अकथनीय समस्याओं पर प्रकाश डालता हैं । स्त्रियों की समस्या, दलितों की समस्या, स्त्री-पुरूष सम्बन्ध की समस्या, यौन शोषण की समस्या आदि का चित्रण देखने को मिलता हैं ।

सारंग की फूफेरी बहन रेशम भी उसी गाँव में ब्याही गई थी । आकस्मिक रूप से विधवा हो गई थीं । किन्तु उसके पेट में अपने पति का बच्चा पल रहा है । बदनामी के डर से उसका जेठ उसकी हत्या कर देता है । सारंग अपराधी को सजा दिलाना चाहती है । वह रेशम के ससुरालवालों पर मुक़द्दमा कर देती है । गवाही के अभाव से रेशम का जेठ डोरिया बाइज्जत बरि होता है । किन्तु सारंग आत्मतृप्ति के लिए केलासीसिंह के हाथों दंगल में डोरिया की पिटाई करवाती है । इन सब घटनाओं से सारंग और रंजीत के सफल दाम्पत्यजीवन की नींव हिलती नजर आती है । बेटे की रक्षा हेतु आगरा भेजती है । इसी दौरान थानसिंह मास्टर का तबादला हो जाता है ।

गाँव में आये नये मास्टर श्रीधर के व्यक्तित्व से सारंग प्रभावित होती है । किन्तु रंजीत, सारंग का पर पुरूष के साथ सम्बन्ध रखना बर्दाश्त नहीं कर पाता है । अतः वह रंजीत के हाथों प्रताड़ित होती है । गाँव में महोब्बत की हवा चारोंओंर फैलती है बिसुनदेवा और गुलकंदी की प्रेमकहानी, जातिभेद को मिटाने के लिए पनपती है । श्रीधर पाठशाला में नाटक का आयोजन करके, उनके संवाद सारंग से लिखवाकर स्त्री

वैचारिक स्वतंत्रता के मार्ग को प्रस्थान करता है । श्रीधर राजकीय भ्रष्टाचार का विरोध करके, आवेदनपत्र पर दस्तखत करने से इन्कार करता है । पर पुरूष से सम्बन्ध रखकर सारंग रंजीत से दूर होने लगती है । तो श्रीधर ईमानदार बनकर गाँव के लोगों की आँखों में काँटा बन जाता है । जिसके फलस्वरूप मारपीट सहनी पडती है । घायल श्रीधर की तीमारदारी करते हुए, सारंग खुद के देह को समर्पित करती है । संभोग द्वारा पुरूष में सुषुप्त शक्ति को जगाने का विश्वास सारंग में है और श्रीधर के साथ संभोग को प्रकृति–पुरूष का योग मानती है । उपन्यास में हरिप्यारी नामक एक स्त्री है । जिसकी बेटी गुलकंदी, बिसुनदेवा नामक युवक के साथ भागकर गंधर्वब्याह रचाती है । दिपावली पर जब लौट कर आती है । किन्तु हरिप्यारी, गुलकन्दी और बिसुनदेवा को सामूहिक हत्याकाण्ड के अंतर्गत मार दिया जाता है । दूसरी ओर सारंग, भँवर और श्रीधर की सहायता से इगलास जाकर ग्रामीण प्रधान पद चुनाव के लिए आवेदनपत्र दर्ज करती है । चुनावी हथकण्डों के चलते सारंग मर्दो के खिलाफ शस्त्र उठाती है । अंत में भवानीदास के बेटे हरिनिवास को परास्त करके अतरपुर गाँव की प्रधानिन (सरपंच) हो जाती है ।

उपन्यास के अंत में सारंग गाँव पर शासनकर्ता नारी की तरह द्दष्टव्य होती है । लेकिन रंजीत की मानसिकता ग्रामीण रूढ़ियों में केद हैं । फिर भी अंत में चाक् की तरह अपने आपको निजी कार्यों में पिरोकर नारी शक्ति को पहचानता है ।

जहाँ तक भाषा और शिल्प का सवाल है, तो मैत्रेयी पुष्पा ने स्थानीय भाषा परिवेश की विश्वसनीयता के लिए आँचलिक शब्दों का प्रयोग अधिक किया है । परंतु अपरिचित शब्दों के अति उपयोग से संप्रेक्षणीयता में बाधा उत्पन्न हुई है । हिन्दी सिर्फ उत्तर भारत में नही पढ़ी जाती, अहिन्दी भाषियों के लिए ऐसी अप्रचलित शब्दावलियाँ समझने में बड़ी कठिनाई होती है ।

किसी भी रचना की सफलता या सजीवता का आधार देशकाल और वातावरण है । 'चाक' उपन्यास ब्रजभूमि के आसपास के विस्तार पर आधारित है । तो जाहिर-सी बात है कि लेखिका ने उनके परिवेश का ख्याल रखा हो । किन्तु उपन्यास पूर्णरूप में आँचलिक नहीं है । यानी आँचलिकता में रहते हुए भी आँचलिकता की सीमाओं से आगे है ।

मैत्रेयी जी का 'चाक' उपन्यास सामाजिक यथार्थ का अविकृत दर्पण होता है । चारसौ पैंतीस पृष्ठ में फैले चाक के कथ्य और रहस्यों को सीमित शब्दों में खोल पाना नामुमकिन-सा है । उपन्यास की मुख्य समस्या स्त्री-पुरूष सम्बन्ध की है । स्त्री के बिना पुरूष की और पुरूष के बिना स्त्री की पूर्णता असम्भव है । किसी न किसी रूप में एक दूसरे को आपसी सहारों की आवश्यकता होती है ।

२.३ 'अल्मा कबूतरी' : एक परिचय :

मैत्रेयी पुष्पा विरचित 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास अठारह अध्याय में विभाजित है । 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास जाति विशेष के आधार पर लिखा गया है । क्योंकि उच्च वर्ग का चित्रण सभी लेखक करते हैं ।

किन्तु पीछड़ी और गँवार जातियों के लिए, किसी के पास सहानुभूति के शब्द नहीं है । इसीलिए पुष्पाजी ने ऐसी कबूतरा जाति को केन्द्र में रखकर उपन्यास का निर्माण किया है । जो आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रूप से पीछडी और दमित है ।

उपन्यास की पृष्ठभूमि में बुन्देलखण्ड की 'कबूतरा' नामक जनजाति का समाज, जीवन–पद्धति, संस्कृति आदि का समावेश है । यह जाति अपने मूलनिवास स्थान से विस्थापित है । कबूतरा जाति के लोग स्वयं को रानी पद्मिनी, झलकारीवाबाई, व महाराणा प्रताप की संताने कहते है । दर–दर भटकते और दूसरों की जमीनों पर बसे, इन लोगों की आजीविका का एकमात्र साधन चोरी करना हैं ।

कथासार :

प्रस्तुत उपन्यास में दों समाजों को चित्रित किया है । पहला कबूतरा समाज, दूसरा सभ्य समाज जिसे कबूतरा लोग अपनी भाषा में 'कज्जा' कहते है । कबूतरा समाज के प्रतिनिध पात्र कदमबाई, भूरी, अल्मा, राणा, रामसिंह, सरमन, दूलन आदि है । सभ्य समाज के प्रतिनिध पात्र मंसाराम, जोधा, केहरसिंह, राणा, धीरज, सूरजभान, श्रीरामशास्त्री, आनंदी आदि हैं ।

उपन्यास का प्रारम्भ मंसाराम और कदमबाई की कथा से होता है । जिसमें कबूतरा जनजाति और सभ्य समाज के आपसी टकराहट व द्वन्द्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं । यह केवल मंसाराम और कदमबाई की प्रेम कहानी न होकर समाज की दो विपरीत दिशाओं की

टकराहट की कथा है । जिन में हार हंमेशा निर्बल और गरीब की होती है । कबूतरा जाति एक बदनाम जनजाति है । कदमबाई इस उपन्यास की प्रतिनिधि नारीपात्र है । उसके पति जंगलिया की हत्या मंसाराम करवाता है । कदमबाई के देह की प्यास मंसाराम के लिए मृगतृष्णा बनती है । फलस्वरूप कदमबाई 'राणा' को जन्म देती है ।

राणा में कज्जा लोगों के लक्षण पैदा होने लगते है । वह माँस नही खाना चाहता, चोरी के नाम से ही वह बेहोश हो जाता है । शराब नही पीता । पढ़ना चाहता है । उसे किताबों से प्यार होने लगता है । कदमबाई यह सब देखकर अपना माथा पीट लेती है ।

कदमबाई के चरित्र को केन्द्र में रखकर लेखिका ने सम्पूर्ण कबूतरा जनजाति का जीवन हमारे समक्ष खोलकर रख दिया है । पुलिस द्वारा उनके ऊपर किए गए अत्याचार, प्रशासन का शोषण, सभ्य समाज का धिक्कार और धृणा, सभ्य समाज के प्रति कबूतराओं का रोष और बदला लेने की भावना, उनके जीवनवृतांत आदि चित्रों का दृश्यांकन हुआ है ।

दों समाजों की टकराहट व द्वन्द्व प्रस्तुत उपन्यास की आत्मा है । भूरी, उसके बेटे रामसिंह और उसकी बेटी अल्मा की कहानी इसी टकराहट की कहानी है । भूरी अपना शरीर बेचकर, अपने बेटे रामसिंह को पढ़ाती है । रामसिंह शिक्षा प्राप्त करके सभ्य समाज में रहने का प्रयास करता है । किन्तु उसे सभ्य समाज स्वीकार नहीं करता । वह शिक्षित होकर भी 'कबूतरा' बनकर जीने को अभिशप्त है । पुलिस

उसकी मजबूरियों का फायदा उठाकर उसे अपना दलाल बना लेती है । वह समाज के अत्याचारों से संघर्ष की शक्ति खो देता है ।

दूसरी ओर कदमबाई का बेटा राणा का सम्पूर्ण जीवन हताशा और निराशा से ग्रस्त है । जन्मदाता कबूतरी है, संस्कार कज्जाओं के हैं । अपने कबूतरा समाज के अयोग्य राणा जब पढ़ने के लिए स्कूल जाता है तो, उसे समाज की अवहेलना सहनी पड़ती हैं । मंसाराम की पत्नी उसे अपनी कुत्ते से नुचवा देती हैं । वहाँ से बचाने एवं पढ़ाने के लिए कदमबाई राणा को रामसिंह के घर भेज देती है । उपन्यास मे प्रेमकथा बीज इस प्रसंग से पनपता है । लेकिन जब उसे पता चलता है कि उसका आदर्श रामसिंह पुलिस का दलाल है और कबूतरा लोगों को शिकार बनाने के लिए पुलिस की दलाली करता है तो वह अन्दर तक हिल जाता है । अल्मा का प्यार भी उसे रोक नहीं पाता और वह रामसिंह का घर छोड़कर अपने कबूतरा साथियों को रामसिंह की असलियत बताकर उन्हें जाल में फँसने से बचाता है । कज्जा लोगों के षड्यंत्र से रामसिंह पुलिस के हाथों मृत्यु पाकर इस संसार से मुक्त होता है ।

उपन्यास में मंसाराम और कदमबाई का सम्बन्ध नाजायज है । जिसे समाज स्वीकार नहीं करता । अतः मंसाराम सारे सम्बन्धों को तोड़कर कबूतरा बस्ती में केहरसिंह की सहायता से लाइसेंस शुदा शराब का ठेका खोलता है और खुलेआम कदमबाई के साथ रहने लगता है । वह केहर और मंसाराम के गुलाम होकर, कबूतरा जाति अपनी स्वतंत्रता खो बैठती हैं ।

अल्मा की कहानी उपन्यास के अंतिम पृष्ठों से आगे बढ़ती है । रामसिंह खुद की हत्या के पहले अल्मा को दुर्जन के घर छोड़ आता है । इसी बीच उसकी हत्या हो जाती है । दुर्जन अल्मा को बेच देता है । इस प्रकार वह एक सूरजभान नामक नेता के पास पहुँच जाती है । सूरजमान चुनावी समय में नेताओं के आगे परोसने के लिए ही, वह उसे खरीदता है । अल्मा को यहाँ अनेक यातनाएँ सहनी पड़ती है । उसके हाथ पर जबरदस्ती 'कबूतरी' गुदवा दिया जाता है । सूरजभान, धीरज (मंसाराम का भांजा) को नौकरी का प्रलोभन देकर अल्मा की देखभाल में लगा देता है, धीरज के मन में अल्मा के प्रति करूणा एवं प्रेम का मिला-जुला भाव उभरता है । जिन से प्रेरित होकर वह उसे सूरजभान की कैद से आजाद करवाता है । वहाँ से आजाद होकर अल्मा, समाज कल्याण मंत्री श्रीराम शास्त्री जो, पहले डाकू थे । उनके यहाँ आ फँसती है । वह अपने स्वार्थवश अल्मा को साथ रखता है । नेता की आकस्मिक मृत्यु के बाद, दिवगंत नेता की पत्नी को उसके निर्वाचन क्षेत्र से खड़ा करने की बात चल पड़ती है । अल्मा को उसी सीट आवेदक मानी जाता है । अंत में अल्मा राजनीतिक नारीपात्र के रूपमें दृष्टव्य होती है ।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने प्रसंगोपात भाषा एवं प्रादेशिक बोली का प्रयोग किया है । ग्रामीण और शहरी बोलियों का प्रच्चुर मात्रा में प्रयोग हुआ है । साथ-ही-साथ देशकाल और वातावरण को परिस्थितियों के अनुरूप चित्रित किया गया है । कबूतरा जनजाति के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए उपन्यास का निर्माण हुआ है । कबूतरा जाति के लोकगीत,

लोककथाएँ, अंधश्रद्धा आदि परिस्थितियों को हु-ब-हु एवं सजीव बनाने के लिए लेखिका ने देशकाल और वातावरण का सूचारू ढंग से गठन किया है ।

लेखिका ने कबूतरा जाति के माध्यम से ऐसी ही अनेक जातियों की सामाजिक स्थिति और विषमता को पाठकों के सामने रखकर, एक नए सिरे से सोचने के लिए विवश किया है । जाति चाहे 'कबूतरा' हो या अन्य, क्या आज के आधुनिक समाज में भी इन जनजातियों को सभ्य समाज की संकीर्ण मानसिकता का शिकार होना पड़ेगा ? उनके अधिकारों को कुचलकर सभ्य समाज अपना आधिपत्य जमा रखना चाहता है ? जिससे ये जनजातियाँ आगे आकर उनकी बराबरी करने में असमर्थ ही रहे । सभ्य समाज और प्रशासन की उपेक्षा का शिकार, इन जातियों का जीवन मैत्रेयीजी ने पाठकों के सामने खोलकर रख दिया है ।

२.४ 'बेतवा बहती रही' : एक परिचय :

मैत्रेयी पुष्पा एक नारीवादी लेखिका के रूप में सुप्रसिद्ध है । 'बेतवा बहती रही' उपन्यास का कलेवर पुष्पाजी ने आँचलिकता के परिप्रेक्ष्य में ढ़ाला है । प्रस्तुत उपन्यास बुन्देलखण्ड के अंचल-विशेष के जन जीवन की गाथा समूचे भारतीय ग्रामीण समाज की कथा बन गई हैं । लेखिका ने उपन्यास के प्रमुख पात्र के रूप में उर्वशी को प्रस्तुत किया है । किन्तु गौर से देखे तो, सिर्फ उर्वशी की कथा नहीं है । अपितु समूचे भारतीय परिवेश में रेंगती कितनी उर्वशीओं, मीराओं, अनेक बेतवाओं की कहानी हैं । लेकिन उपन्यासकार ने बड़ी बखुबी-से उर्वशी

के साथ अन्य पीड़ित एवं शोषित पात्रों की झाँखियाँ प्रस्तुत की हैं। जिसमें मीरा, जिज्जी, गजरा, दादी, आजी (बड़ी दादी) शेरा की पत्नी आदि हैं। इन स्त्री पात्रों के आसपास लेखिका ने उपन्यास की कथा को बुना है। जिस प्रकार पुष्पाजी ने 'इदन्नमम' में सामाजिक शोषण को आलेखित किया है; तो 'बेतवा बहती रही' में पारिवारिक शोषण की भयावहता का दृश्यांकन किया है।

कथासार :

प्रस्तुत उपन्यास की कथा उर्वशी की यातना, पीड़ा और यंत्रणाओं से जूडी हैं। उपन्यास की कथा राजगिरि, सिरसा और चंदनपुर तक फैली है। यह रचना बेतवा नदी के किनारे फैली निर्धन बस्तियों के संघर्ष, भूख और छटपटाहट का जीवंत साक्ष्य है। 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में मीरा नामक स्त्री पात्र के माध्यम से संपूर्ण कथा का प्रार्दुभाव हुआ है।

उपन्यास का प्रारंभ मीरा के जरिए होता है। जो राजगीर में आकर पूरानी परतों को खोलती हैं। माँ के मृत्यु के बाद मीरा का बचपन राजगिरि में ही बीता था। आज भी वह स्मृतिओं को भूल नहीं पाती हैं। यहाँ से उर्वशी की कथा का आरंभ होता है। उर्वशी मैले कुचले अभावग्रस्त किसान परिवार में जन्मी थीं। नाम के अनुरूप सौंदर्य की स्वामिनी उर्वशी का लावण्य वरदान के बदले अभिशाप साबित होता है। उर्वशी के अवर्णित सौंदर्य से मोहित होकर बैरागी राजगिरि गाँव में झौंपड़ी बनाकर रहने लगता है। लेकिन उर्वशी उसे

नशीब नहीं होती है । उर्वशी का सौंदर्य अजीत के लिए सोने की खान समान है । जिस परिवार में कड़े परिश्रम के बावजूद भी दो जुन की रोटी जुटाना अप्राप्य हो । वहाँ उर्वशी का दहेज जुटाना अकल्पनीय ही है । निर्धन पिता की बेबसी का फायदा उठाकर अजीत, अपनी इकलौती बहन उर्वशी को अमीर दूहाजु के हाथों बेचने का मंशुबा बनाता है । किन्तु उर्वशी की सहेली मीरा के नाना की सहायता से, उनका विवाह सर्वदमन जैसे सुदर्शन, गुणवान लड़के से सम्पन्न होता है । दुर्देव अप्सरा का स्वर्ग सुख क्षणिक होता है । यानी भाग्य की लकिरों को कौंन मीटा सकता है । सर्वदमन की मृत्यु एक दुर्घटना में हो जाती है । सर्वदमन आखरी निशानी के तौर पर पुत्र छोड़ जाता है । जिसके सहारे उर्वशी वैधव्य जीवन गुजारने के लिए सक्षम होती है ।

इधर अजीत को नौकरी में घपला करने के जूर्म कारण रूखसत किया जाता है । अतः वह मानसिक रूग्णता से छटपटाता है । फिर भी बहन का वैधव्य उसके लिए भाग्य का द्वार खोलता है । वह ऊर्वशी के हिस्से की संपत्ति हड़पना चाहता है । व्यवहारिक हथकण्डों के चलते उर्वशी का जेठ दाऊजी और बैरागी से उलझता हैं । किन्तु असफलता, उसे निराशा जन्य माहैाल में ढकेलती है । इस बीच उर्वशी का राजगिरि लौट आना और चंदनपुर में विजय के विवाह के समय शेरा की पत्नी के साथ मिलकर डाकूओं का सामना करना आदि मुदों को लेखिका ने विस्तार से लिखा है ।

प्रस्तुत उपन्यास में विधवा अनमेल विवाह की समस्या है । किन्तु उर्वशी उसका विरोध न करके आत्महत्या करने की कोशिस करती है ।

लेकिन मृत्यु उसके लिए अप्राप्य–सी हो जाती है । भाई की गृहस्थी के लिए सभी यंत्रणाओं को सिरोमान्य रखकर स्वीकार करती है । अजीत ने उर्वशी और बरजोरसिंह के विवाह करवाने के फलस्वरूप दस बीधा जमीन मिलती है । मीरा के बचपन की सहेली का उसके घर सौतेली माँ बनकर आना आदि घटनाओं का दृश्यांकन लेखिका ने बड़े प्रभावी ढ़ंग से किया है । मीरा और उदय इस घटना का विरोध जरूर करते है । किन्तु सफलता नहीं मिलती । आकस्मिक बीमारी के वजह से विजय की मृत्यु होती है । उर्वशी विजय की विधवा नवोढा का पुनःविवाह, विजय के छोटे भाई उदय से हठपूर्वक करा देती है । उर्वशी ने बरजोरसिंह को हराकर, समाज के बंधनों को तोडने का सफल प्रयास करती है । बरजोरसिंह इस अपमान का बदला बड़ी क्रुरता से लेना चाहता है । अतः वह बैध के हाथों धीमा जहर देकर मारने की सोचता है ।

उपन्यास का खलनायक अजीत गुनाहों की गहराईयों में चला जाता हैं । वह केन्सर जैसी जानलेवा बीमारी से पीड़ित है । अंत में वह पुलिस की मुठ़भेड में मारा जाता है । उर्वशी की जीवनडोर टूटनेवाली है । क्योंकि बैध की दवाओं से उसकी दोनों किडनियाँ खराब हो जाती हैं । लेकिन अपने अंदर की ममता आखिरकार जाग उठती है । देवेश को मिलना उसका अंतिम ईच्छा रहती है । किन्तु दुर्भाग्यवश बीच रास्ते में ही दम तोड़ देती है । उर्वशी की मृत्यु मे बाद उसकी राख बेतवा में बहायी जाती है । यानी बेतवा अपवित्र, पापी और दृष्ट को सुसंस्कारी और पवित्र करती है । यहाँ पर उपन्यास की पूर्णाहुती होती है ।

उपन्यास की भावभंगिमा को लेखिका ने अंचल विशेष की भाषा में व्यक्त किया है । उपन्यास में लेखिका ने बुन्देलखण्डी भाषा का अधिकमात्रा में प्रयोग किया है । जिसकी बदौलत उपन्यास में संपूर्ण सजीवता एवम् रोचकता दृष्टव्य होती है । मैत्रेयीजी ने उपन्यास में पात्रों की स्थिति और मनःस्थितिओं के अनुरूप शब्दों एवम् वाक्यों का बड़ी सर्तकता से चयन किया हैं । विंध्व के ग्रामीण शब्दों में ताजगी और वहाँ की मिट्टी की महक है । पात्रों की मनःस्थिति और भावभंगिमा, जिस भाषा में अभिव्यक्त हुई है । वह कृत्रिम नहीं लगती, क्योंकि लेखिका ने प्रायः सभी पात्रों के माध्यम से बुन्देलखण्डी भाषा का प्रवाह बहाया है ।

लेखक ने उपन्यास के परिवेश को बुन्देलखण्ड के आसपास ही रखा है । उपन्यास में जगह-जगह पर ग्रामीण परिवेश, भौगोलिक चित्रांकन और लोक संस्कृति को उजागर किया गया हैं । जिस प्रकार राजनीतिक मनसा, आज के समाज में सर्वोपरिता कायम करती है । उसी प्रकार पुष्पाजी ग्रामीण परिवेश में शहरी राजनीति को ढूँढती नजर आती है ।

निरंतर रूप से उपन्यास को पढ़ने के उपरांत शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट होती है । बेतवा की धारा अर्थात् स्त्री की अविरत दुखद विड़म्बना की जीवनधारा - जिसमें यंत्रणाओं, पीडाओं, निराशाओं, आशा-अकांक्षाओं, क्षणिक सुख़ों की मुक्ति-कामनाओं को अपने में समेटती हुई बहती ही रहेंगी । लेखिका ने विशेषतः उर्वशी की तुलना बेतवा से की है । जिस प्रकार बेतवा पवित्र सुन्दर जीवनदायिनी है ।

उसी प्रकार उर्वशी, पवित्र, सुन्दर, जीवनदायिनी नारी है । क्योंकि भाई की गृहस्थी, ससुराल की पवित्रता और नवोढा बहू की मंगलकामनाओं के लिए अपना जीवन समर्पित करती हैं ।

२.५ अगनपाखी : एक परिचय :

दशवें दशक के आगमन के साथ ही हिन्दी उपन्यास जगत् में एक खलबली मच गई है । क्योंकि आधुनिक विचारधारा से सम्पन्न साहित्यकार समाज का हु-ब-हु चित्रण करने लगे है । उसी मंशा से प्रेरित मैत्रेयी पुष्पा ने (अगनपाखी) उपन्यास का निर्माण किया है । दरअसल कथाकार ने उपन्यास का कलेवर परम्परागत रूप में रखा है । किन्तु उपन्यासकार का मक्सद अपने पूर्व-परिचित दिलचस्प किस्सागोई के साथ, इस कथा को नया दृष्टिकोण देना है । क्योंकि सामंती दावपेंच तो बरसों से चले आ रहे हैं । परंतु सामंतों का मुकाबला अक्सर सामंती वर्ग के पुरूष ही करते हैं । लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि भुवनमोहिनी नामक स्त्री सामंती वर्ग व्यवस्था को चूनौती देने के लिए प्रस्तुत होती है । असल में सामंती परिवार की कथा में सम्पति को लेकर होनेवाले षड़यंत्र और दावपेंच का सही चित्रण 'अगनपाखी' उपन्यास में हुआ है ।

अगनपाखी : कथासार :

'अगनपाखी' उपन्यास का प्रथम दृश्य कोर्ट-कचहरी से होता है । विराटा के कुँवर अजयसिंह ने सम्पत्ति को हड़पने के लिए, जो दावपेंच रचे थे - जिसके फलस्वरूप भुवनमोहिनी उसके विरूद्ध कोर्ट में

आवेदनपत्र देकर, पुरूषवर्ग और अजयसिंह की सामंती सल्तनत को हीला देती है । भुवनमोहिनी सहायता के लिए चन्दर को बुलाती है । जो जिल्ला विकास अधिकारी विभाग में नौकरी करता है ।

उपन्यास में चन्दर का आगमन, कथा को फ्लेशबैक में ले जाता है । चन्दर और भुवन समवयस्क है । बचपन में साथ-साथ खेल-कूदकर बडे हुए है । बचपन से लेकर आजतक भुवन के प्रति चन्दर की चाहत बरकरार रही है । भुवन के पिता की हत्या के बाद, नानी और भुवन घर में सदस्यों के रूप में बाकी बचे रहे थे । सामाजिक रागद्वेष और बेरभावना के बीच भुवन और चन्दर का प्यार पनपता है । भुवन के साथ शारीरिक सम्बन्ध आदि बातों के डर से चन्दर, हंमेशा के लिए शीतलगढ़ी छोडकर सरकारी मुलाजिम हो जाता है ।

ईधर भुवन अपनी ईच्छाओं का दमन करके विराटा के पागल कुँवर विजयसिंह की दुल्हन बनती है । किन्तु दाम्पत्यजीवन सफल नहीं होता है । वह ससुराल छोड़कर मायके आती है । किन्तु मायके में अपनत्व की भावना महसूस नहीं कर पाती है । अतः वापस ससुराल में पागल पति को झेलना अपनी नियति मानती है और जीवन से विरक्त होकर भक्तिन नारी जैसी जिंदगी व्यतित करती है । किन्तु चन्दर से मिलना उसे ओर भी कष्टदायक लगता है । भुवन की ऐसी स्थिति का जिम्मेदार खुद चन्दर ही होता है बड़े घरों में स्त्री स्वतंत्रता की समस्या रहती है परंतु भुवन हवेली के निषेघों को तोड़कर निड़र और आधुनिक नारी के रूप में दृष्टिगत होती है । जिसमें विराटा का पुजारी सहायक की भूमिका निभाता है ।

भुवन एक ओर रूढ़िमुक्त नारी है । तो दूसरी ओर रूढिचुस्त नारी के रूप में उजागर होती है । क्योंकि भुवन के ससुरालवालों ने पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टियज्ञ का आयोजन किया है । किन्तु पुजारी जैसे लोगों के माध्यम से स्त्री-विमर्श का सिद्धांत कायम किया है । भुवन घरवालों के विरूद्ध पति को आगरा के अस्पताल में दाखिल करती है । इस बीच कुसुमदादी (भुवन की जेठानी) आत्महत्या करने का प्रयास करती है । किन्तु भाग्य साथ नहीं देता । भुवन के द्वारा चन्दर के लिए दामिनी नामक लड़की से ब्याह का प्रस्ताव रखना, मानसिक अस्थिरता की वजह से विजयसिंह की मृत्यु होना । ससुरालवाला का भुवन को जबरदस्ती सती बनाने की योजना बनाना, किन्तु चन्दर और पुजारी के प्रयास से भुवन का उद्धार करना । फलस्वरूप कुँवर अजयसिंह का अखबार में भुवन का सती होने की जानकारी देकर, पूरी जायदाद का अकेला मालिक बनने की मंशा रखना, किन्तु अंत में भुवन का जिंदा मिलना आततायियों द्वारा पुजारी की हत्या । उपन्यास की पूर्णहुति के रूप में भुवन का अदालत में जाकर, अधिकारों के लिए आवेदनपत्र देना तथा अजयसिंह को चूनौती देता - आदि प्रसंग लिए गये हैं ।

उपन्यासकार ने हरेक पात्र को जीवंत और वास्तविक बनाने के लिए प्रादेशिक बोलियों एवम् भाषाओं का प्रयोग अधिकमात्रा में किया हैं । पुष्पाजी ने 'अगनपाखी' उपन्यास में झाँसी जिल्ले का भू-भाग, विराटा, बरूआसागर, शीतलगढ़ी, राजगिरि, चंदनपुर आदि की प्रादेशिक बोलियों को प्रस्तुत किया गया हैं । उनकी प्रादेशिक बोली में गीत, चन्दनावाला गीत, विवाह सम्बन्धी आदि सामाजिक क्रिया-कलापों को प्रादेशिक बोलियों के माध्यम से प्रदर्शित किया है ।

लेखिका ने भाषा के अलावा देशकाल और वातावरण पर निरंतर रूप से ध्यान दिया है । यूँ कहे तो पात्रों के अनुसार वातावरण का गठन भी किया है । जैसे-बेतवा नदी, विराटा का मंदिर, लोगों का पहनावा, रहन-सहन आदि सूक्ष्म-से-सूक्ष्म क्रिया-कलापों को वातावरण के अनुसार गढ़न किया गया है । पाठकगण अनचाहे ही झाँसी की भौगोलिकता से परिचित हो जाता है ।

'अगनपाखी' उपन्यास में भुवन सामंती समाज के हिंसक अन्तर्विरोधों के बावजूद भी सामाजिक बंधन को तोड़कर स्वतंत्रता की कामनाकर्ता नरी बनती है । दरअसल स्त्री को चार दीवारों में बंध रहना ही होता है । किन्तु भुवनने सभी निषेधों एवम् उलझनों को तोड़कर स्त्री-विमर्श की नयी राह को निर्देशित करती है । भुवन का चरित्र संपूर्ण आधुनिक नारी और पाश्चात्य विचारों से भरा है ।

२.६ विजन : एक परिचय :

प्रस्तुत उपन्यास का ढाँचा या कलेवर पुष्पाजी ने अलगरूप में आलेखित किया है । यह डाक्टरी दुनिया का सजीव एवम् उत्कृष्ट चित्रणकर्ता उपन्यास है । मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास की पृष्ठभूमि में दिल्ली, आगरा, बरेली आदि स्थानों को उजागर किया है । प्रस्तुत उपन्यास संक्षिप्त जरूर है, किन्तु साथ-ही घटित घटनाओं का सूक्ष्म रूप से प्रस्तुतीकरण हुआ है । इस उपन्यास से ज्ञात होता है कि खुद लेखिका एक डॉक्टर हो और सभी सितम खुद ही ढाँए हैं । संक्षेप में कहना चाहे तो, इस उपन्यास आज के युग में मरिजों के साथ डॉक्टरों का जो व्यवहार है, उनकी मनःस्थिति और मनोद्वन्द्व को प्रदर्शित किया है ।

कथासार :

'विजन' उपन्यास की शरूआत आँख के आँपरेशन में मरीज की मौत, प्रसंग से होती है । आँख के आँपरेशन की सिद्धिहस्त डॉ. नेहा, इस घटना से विह्वल और दु:खी हो जाती है । तो एक ओर अपनी काबेलियता के आधार पर कॉन्फ्रेंस में सबसे अच्छा पैपर पढ़कर सन्मानित होती है ।

नेहा को डॉ. आभा द्विवेदी का दिल्ली बुलाना, नेहा के लिए और भी उलझनें पैदा करता हैं । किन्तु नेहा आँख की विषयज्ञ और पारंगत होने के बावजूद भी उसके ससुर डॉ. आर. पी. शरण उसे ओ. टी. विभाग से हटाकर, ओ.पी.डी. में लगा देते है । डॉ. नेहा कथानक को फलेशबैक की तह तक ले जाती है । डॉ. आभा द्विवेदी की कथा का प्रादुर्भाव होता है । पिताजी के समझाने के बावजूद भी आभा शादी नहीं करने की प्रतिज्ञा लेती है । लेकिन पिताजी की बदनामी के डर से डॉ. आभा की शादी बरेली के डॉ. मुकुल के साथ सम्पन्न होती है । लेकिन उनका दाम्पत्यजीवन सफल नहीं होता है । क्योंकि डॉ. आभा एक जिम्मेदार डॉक्टर के रूप में कार्यरत रहना चाहती हैं । जबकि डॉ. मुकुल उसे परम्परा के बंधन में बाँधकर रखना चाहता है । किन्तु डॉ. आभा अपने फैसले पर अड़िग रहती है । दिल्ली के एक अस्पताल में डॉक्टर के रूप में नियुक्त होती है । जिसकी बदौलत आभा और मुकुल के सम्बन्ध में और भी अधिक मनमुटाव बढता है । पिताजी के सामने मुकुल, आभा को बुरी तरह से पिटता है । किन्तु पाश्चात्त्य

विचारधारा से प्रभावित आभा, मुकुल से तलाक लेकर स्वतंत्र नारी के रूप में जीवन व्यतित करती है ।

उपन्यास की कथा फलेशबैक से निकलकर मूल प्रवाह में आती है । डॉ. नेहा एम.एस. बनने की मंशा रखती है । किन्तु उसकी महत्त्वाकांक्षाओं को रौंदने के लिए परिवार के लोग सज्ज रहते हैं । नेहा सारी उलजनों एवम् परिस्थितियों से लड़कर अपने बेटे टिम्मी को पिताजी के घर छोड़कर एम.एस. की पढ़ाई करने के लिए चली जाती है । ईधर आभा द्विवेदी के अस्पताल में अनुप वर्मा का स्त्री मरीज पर बलात्कार का प्रयास, स्त्री शारीरिक शोषण का दस्तावेज है । तो डॉ. प्रकाश, डॉ. आर. पी. शरण के साथ मिलकर काम करने लगता है । किन्तु मानसिक रागद्वेष के कारण प्राइवेट प्रेक्टिस करके अपना बदला भी लेता है । कुछेक महीनों में नेहा अपनी पढ़ाई छोड़कर फिर से चक्की में पीसने के लिए तैयार होती है । किन्तु नेहा का ससुर बेटे के सामने पुत्रवधु को गिराने के हथकण्डें अपनाता है ।

डॉ. नेहा प्रतिभा सम्पन्न डाक्टर होने के बावजूद भी उसकी तरक्की नहीं होती । बल्कि हर क्षण अपमान और मानसिक संत्रास के साथ जीना उसकी नियति बन जाती है । सभी प्रसंगों में नेहा के शारीरिक, मानसिक और आर्थिक शोषण की झाँकियाँ प्रस्तुत हुई हैं । जिसके फल स्वरूप 'शरण आई सेंटर' में एक मरीज़ की मृत्यु होती है । अमानुषिक अपराध का जिम्मेदार ससुर और पति अजय होते है । किन्तु मौत का सदमा नेहा बर्दास्त नहीं कर सकती । अत: वह मनो द्वन्द्वों से

लड़ते-लड़ते अंत में 'अपनी कला या हून्नर को मरीज के लाभ के लिए है ।' ऐसे वाक्यों का उच्चारण करते हुए अपने आपसे बाहर हो जाती है और पागलपन शिकार होती हैं ।

लेखिका ने उपन्यास सृजन करते हुए वातावरण और परिवेश की ओर बड़ी सचेतता से ध्यान दिया है । इसमें दिल्ली, आगरा और बरेली के विस्तारों का विस्तृत वर्णन किया है । साथ-साथ डॉक्टरी दुनिया में डॉक्टरों की मन:स्थितियों का जीवंत वातावरण प्रस्तुत किया है । भाषा के सवाल को नजरअंदाज करे तो, लेखिका ने डॉक्टर जगत् की भाषा का बड़ी सूक्ष्मता के साथ प्रयोग किया है । उपन्यास में जगह-जगह पर अंग्रेजी भाषा का भरपुर प्रयोग हुआ है ।

'विजन' उपन्यास में लेखिका श्री मैत्रेयी पुष्पा ने डॉक्टरों की दुनिया को बहुत ही नजदीक से दिखाया है । ऊपरी चमक-दमक के भीतर कितना अँधेरा और कितनी निराशा उसे सहजता से बयान किया है । संपूर्ण कथानक उपन्यास की नायिका डॉ. नेहा के इर्द-गिर्द घूमता है । यह एक ऐसी महिला डॉक्टर की दु:खभरी कथा है, जो अत्यंत प्रतिभा सम्पन्न होते हुए भी अपने पति और संसार के कारण अपना कैरियर खत्म होते हुए देखती है । पुरूषों की महिलाओं को आगे न बढ़ने देने की प्रवृत्ति और स्त्रिओं की अन्दरूनी घुटन तथा कोई विरोध न कर पाने की असमर्थता आदि भावों दिखाया गया है । जिन्दगी बचानेवाले डॉक्टर निजी स्वार्थवश मरीज के साथ खिलवाड़ करते है । इसका सजीव चित्र प्रस्तुत उपन्यास का हार्द है ।

२.७ झूलानट : एक परिचय :

साहित्य समाज का आधार स्तंभ है । क्योंकि साहित्य में समाज की समस्याओं का समाधान रहता हैं । मानव हृदय में संगृहीत भावों की अभिव्यक्ति का श्रेय साहित्य को ही हैं । उत्तर आधुनिककालीन लेखकों का उद्देश्य समाज की विभिन्न समस्याओं एवम् भावनाओं को वाणी प्रदान करना हैं । इसीलिए साहित्य समाज की धरोहर है ।

'झूलानट' उपन्यास मैत्रेयी पुष्पा विरचित है । उपन्यास की मूल भावना की डोर शीलो और बालकिशन के साथ बंधी-हुई है । एक तरह से स्त्री और पुरूष को समान धरातल पर उतारा है । पुष्पाजी ने शीलो के माध्यम से स्त्री-जीजीविषा को आलेखित किया है ।

झूलानट : कथासार :

उपन्यास का आरंभबिंदु बालकिशन की भक्तिभावना से होता है । बालकिशन देवी भक्ति में हंमेशा लिन्न रहनेवाला चरित्र है । लेकिन सास और बहू का स्वभाव विपरीत दिशाओं में स्थित रहता हैं । वक्त-बे-वक्त गृहकलश से घर गुँजता रहता है । घर में बहू (शीलो) अपना शासन स्थापित चाहती है, तो सास (बालकिशन की माँ) अपने रीत-रिवाजों और परम्परा को बरकरार रखने के लिए प्रयत्नशील रहती है ।

उपन्यास की कथा अब फलेशबैक घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करती है । जिसका मुखातिब बालू होता है । बचपन से लेकर आजतक परतंत्रता में जीनेवाला बालू आज स्वतंत्रता की हवा में साँस लेने में

सफल होता है । जब बालू सोलह साल का था, तब उसके सुमेर भैया की शादी हुई थी । भैया के ब्याह की कल्पना बालू के मानसपट पर हावी हो जाती है । भाभी (शीलो) के साथ रहना, बातें करना, उसे सुखदायी लगता था । किन्तु बालू की नादानियत भाभी के लिए आफत हो जाती है । जिसके फलस्वरूप सुमेर भैया, शीलो को छोड़कर शहर चले जाते है । यहाँ पति बिछोह में भाभी पद्मावत की नागमती की तरह तड़पती है । किन्तु नारी का जीवन दु:खद प्रतिमा बन जाता है । ईधर बालू बारहवीं कक्षा में फैल होकर, दु:खी मन से खेतों की जिम्मेदारी संभालता हैं । सुमेर भैया के वापस आने से शीलो आनंदित अवश्य होती है । किन्तु खुशी क्षणिक साबित होती है । अम्मा के सामने सुमरे का शीलो को अपनाने से इन्कार कर देना, शीलो के लिए ओर भी कष्टदायक होता है । बजह उसकी करूपता थी, जो अभिशाप बन जाती है । परंतु बालू भाभी का सच्चा हमदर्द बनकर सहायक के रूप में जिम्मेदारी निभाता है । सुमेर, शीलो को अपनाये इसीलिए अम्मा और भाभी धार्मिक अनुष्ठानों की ओर झुकाव रखती हैं । सास, संत-फकीरो और ओलियाँओं की सेवा में लीन्न रहती है । किन्तु शहर में सुमेर के द्वारा दुसरा ब्याह रचाना, सबकी आशाओं को रौंदना होता हैं । शीलो के लिए अभिशाप बनी हुई, छठ्ठी उँगुली को काटकर वह मुक्त होती है । पति से प्यार न पाकर देवर के साथ अनैतिक सम्बन्ध जोडती है । पूराने रीत-रिवाजो को तोड़कर, बिना बिछिया किए बालू की पत्नी के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है ।

शीलो का बिना बिछिया किए बालू की पत्नी के रूप में रहने से वे समाज में फिटकार के पात्र बनती है । बालू को परिवार को समाज और जाति–बिरादरी से बेदखल किया जाता है । किन्तु शीले सामाजिक आततायियों की परवाह किए बिना, बालू के साथ नयें सिरे से जीवन यापन करती है । बालू के बिमार होने पर वह पूरी रात जगकर, बालू की सेवा करती है । तो दूसरी ओर वह एक पतिव्रता नारी बन रहना चाहती है । बालू के लिए पेन्ट–शर्ट आदि खरीदकर बालू को शहरी बाबू बनाती है । जनरेशन गेब (पीढी–दर–पीढी अंतर) की बजह से सास और शीलो के बीच अनबन होती रहती है । किन्तु शीलो के लिए बालू ही सर्वस्व बनकर रह जाता है । उनकी सेहत के लिए धी, नवनीत आदि चीजों में सावधानी बरतती हैं ।

सुमेर का पुनः आगमन, शीलो और बालू के लिए बाँधाएँ पैदा करता है । सभ्यता के लिए शीलो, सुमेर से पर्दा करती हैं । किन्तु जायदाद के लिए सुमेर से भी शीलो लड़ती है और अपना अधिकार प्राप्त करती है । यह बात सुमेर के लिए असहनिय साबित होती है । शीलो अम्मा के रीत–रिवाजों एवम् मान्यताओं का खण्डन करके आधुनिक किशान नारी के रूपमें कार्यरत होती है । तो कहीं पर बालू के लिए बैंक बाबू से सलाह–मसवरा करती है और सेज–शैया पर वह रम्भा–सी होकर बालू के लिए परितृप्ता बनती है ।

शीलो की बहन कांता का आगमन गाँव के लिए वसंतऋतु साबित होती है । भँवरे की तरह गाँव के नवयुवक उसके आसपास मँडराते रहते हैं । किन्तु कांता की चंचलता उसके लिए सजा बन जाती है ।

जीजा (बालू) को चुमते हुए, देखकर शीलो, उसे वापस भेजने का फैसला करती है । साथ में कपड़े आदि वस्तुएँ भी भेजती है । किन्तु अम्मा (सास) इस हरकत को सह नहीं पाती और उपवास पर उतर जाती है । शीलो और बालू के प्रयत्न उसे मना लिया जाता है । जब कांता का ब्याह होता है, तब पहनावी के लिए चिरगाँव जाकर खरीदारी करता है । किन्तु पत्नी की ब्रा (अँगिया) खरीदना याद रखकर, माँ की दवाईयाँ भूल जाता है, अपने आप में कुण्ठित होता है । माँ के अक्स में शीलो नजर आते ही अम्मा के साथ कुकर्म करता है । प्रायश्चित के तौर महादेव की चिढीयाँ पर लैटा मिलता है । मानसिक उथल-पुथल कारण शीलो के साथ मारपीट करता है । बालू द्वारा लायी हुए अँगिया जलाकर अम्मा अपनी जीत मानती है । गृहकलह से तंग आकर वह संसार को त्यागकर, चंपाराम के आश्रम में चला जाता है । साधना में पत्नी की प्रतिछार्यां बाँधा परिणत साबित होती है । वहा से भागकर ओरछाधाम के मंदिर में भगवान राम के दर्शन के लिए आ पहुँचता है । किन्तु सीतामाता की मूर्ति में पत्नी का प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है । जिसके चलते, वह मंदिर के गृह कक्ष में प्रवेश करके असभ्य व्यवहार की बजह से पिटा जाता है । अंत में अंतरमन की एक ही धून या कामना कि मैं आ रहा हूँ । यानी शीलो के साथ पुनःमिलन । प्रकृति के नियम से जुड जाता है और उपन्यास पूर्ण होता है ।

उपन्यास की भाषा सृष्टि में नवीनत्तम शब्दों और लावण्यत्ता की अत्त्यधिक आवश्यकता होती है । मुहावरेदार, जीवंत और खुरदरी लगनेवाली भाषा की 'गँवई ऊर्जा' मैत्रेयीजी का ऐसा हथियार है । जो

उन्हें अपने समकालिनों से सबसे अधिक विशिष्ट बनाता हैं । भाषाकीय सीमा का लेखिका ने अंचल-विशेष के दायरे में बाँधा है । झाँसी और चिरगाँव के आसपास के विस्तारों की गँवई भाषा का प्रयोग किया है ।

'झूलानट' उपन्यास के वातावरण को जीवंत एवम् रोचक बनाने के लिए लेखिका ने काफि जगहों पर ऐसे दृश्यों का चित्रांकन किया हैं । जिसके चलते धार्मिक और सामाजिक अहमियत को परखा जा सकता है । बिछिया, पूजापाठ, शास्त्रीय अनुष्ठान आदि बातों के माध्यम से देशकाल को मुखरित किया है ।

'झूलानट' की शीलो हिन्दी उपन्यासों में कभी न भूले जानेवाले चरित्रों में एक हैं । बेहद आत्मीय, पारिवारिक सहजता के साथ मैत्रेयीजी ने इस जटिल कहानी की नायिका शीलो और उसकी ''स्त्री-शक्ति'' को फोकस किया है । पता नहीं 'झूलानट' शीलो की कहानी है या बालकिशन की । हाँ अंत तक प्रकृति और पुरूष की यह लीला एक अप्रत्याशित उदात्त अर्थ में जरूर उद्भाषित होने लगती है ।

२.८ कही ईसुरी फाग : एक परिचय :

उपन्यास इस नये युग की नयी विधा है । यथार्थधर्मिता उसका प्राणतत्व है । अतः जिस उपन्यासकार को जीवन का गहरा अनुभव होगा, प्रत्यक्ष और परोक्ष अनुभव होगा, वही यथार्थ का चरित्रांकन सही अर्थों में कर सकता है । पुष्पाजी ने जीवन अनुभवों से परिपक्वता पाकर, उपन्यास विधा को समृद्ध किया है । अतः नारी सशक्तीकरण के

लिए पुष्पाजी ने बुन्देलखण्डी भाषा की लोककथा ईसुरी और रजऊ को नये अंदाज एवं साहित्यिक परिपाटी पर खरा उतारा है । बुन्देलखण्ड के भू-भागों की प्रसिद्ध लोककथा ईसुरी और रजऊ को पी.एचडी. संशोधन का विषय बनाकर ऋतु कथा की मुख्य सुत्रधार के रूप में द्रष्टव्य होती हैं ।

कथासार :

'कही ईसुरी फाग' उपन्यास का श्रीगणेश फाग-मण्डली की चमक-दमक से होता है । सरस्वती देवी नारी सशक्तीकरण के लिए कार्यरत रहती है । फाग मण्डलीओं के माध्यम से लोक संस्कृति को जीवंत रखने का प्रयास करती है । किन्तु पैसों की लोलूपता से आकर्षित होकर मण्डली के सदस्य सरस्वती देवी को छोड़कर चले जाते है । परंतु ऋतु नामक लड़की ईसुरी के चरित्र पर पी.एचडी. का शोधकार्य करना चाहती है । इसीलिए सरस्वती देवी बीते लम्हों परतें खोलती हैं । फगवारों के अभिनय के लिए सरस्वती देवी सज्ज रहती है । किन्तु रजऊ की सास का आगमन खलनायिका के रूप में परिणत होता है । पूरी फाग मण्डली को तहस-नहस कर देती है । उसके मुख से आगे की कथा अवतरित होती है । रजऊ छतरपुर के प्रताप की नवोढा बहू थीं । उसका सौन्दर्य मानो स्वर्ग की अप्सरा से कम नहीं था । रजऊ और ईसुरी का प्रथम मिलन माधोपुरा की गलियों में होता है । फागों के माध्यम से ईसुरी रजऊ के प्रति प्यार का इजहार करता है । किन्तु पूरे गाँव में रजऊ बदनाम होती है । बदनामी के बावजूद भी फगवारों को घर पर खाने का न्यौता देती हैं । लेकिन रजऊ की सास परम्परा से बँधकर रह जाती है ।

उपन्यास की कथा के साथ ऋतु और माधव की कथा भी समान रूप से चलती है । सरस्वती देवी एक प्रौढ़ नारी है । जो फगवारों को एकत्रित करके सांस्कृतिक विरासत को बरकरार रखना चाहती है । किन्तु परिवार, एवं रिश्तेदारों से हर समय प्रताड़ित होती है । परिवार, रिश्तेदारों से प्रताड़ित होते हुए भी अपनी मंजिल पर अड़िग योद्धा के रूप में लड़ती रहती है । ऋतु के लिए अधिक जानकारी मीरासिंह नामक सामाजिक क्रांतिकारिणी नारी के पास से मिलती है । वह विवाह के बाद, पारिवारिक और सामाजिक अंतर्विरोधों के बावजूद भी बी.ए. तक पढ़कर आँगनवाडी संचालिका होती है । ऋतु को आगे की जानकारी बसारीवाली वृद्धा बऊ के पास से मिलती है । उसकी जुबान से - फागून के त्यौहारों में रजऊ का सौन्दर्य पूर्णरूप से खिलता है । जिससे प्रताप (रजऊ का पति) संपूर्ण रूप से मोहित होता है । किन्तु ईसुरी की बजह रजऊ की बदनामी आदि बातों से दुखित प्रताप ईसुरी और रजऊ दोनों को प्रताड़ित करता है और खुद अंग्रेजों की सेना भर्ती होता है । ऋतु ईसुरी और रजऊ के अक्स में, माधव और ऋतु को ढूँढती दिखाई पड़ती है । ऋतु, तुलसीराम चरवाहा के पास से ईसुरी और रजऊ के बारे में जानकारी प्राप्त करती है । ऋतु ओरछा के प्रसिद्ध गाइड शालिगराम कटारे के पास से तीन स्त्रियों की व्यथा कथा को ईसुरी की कथा के साथ जोडती है । किन्तु ईसुरी कथा का प्रवाह अब धौर्रावाले मुसाहिब से मुखातिब होता है । ईसुरी महाराज को चन्द पैसों के जरिए धौर्रावाले मुसाहिब अपने निजी आनंद-प्रमोद के लिए रखते है । ईसुरी अपनी जीवनयात्रा में बिछोह को भाग्य की काली रेखा समझता है ।

ईसुरी धौर्रावाले मुसाहिब के घर रहता है । मुसाहिब की बेटी रज्जुराजो ईसुरी के व्यक्तित्व से आकर्षित होती है । सारे बंधन और परम्पराओं को तोड़कर, वह ईसुरी से प्यार का इजहार करती है । परंतु गहनों की चोरी का झूठा इल्जाम लगाकर मुसाहिब, सुरतिया और बिरतिया के हाथों ईसुरी को पीटवाते हैं । रज्जुराजा ईसुरी के दर्द को खुद महसूस करते हुए, उसके संग भाग जाती है, और प्यार के लिए अपना अस्तित्व फना करती है ।

कथा फलेशबैक से निकलकर वर्तमान परिवेश में आना आदि बिखरावभरा दृष्टिगत होता हैं । ऋतु के लिए आनन्द मोहन जैन का आगमन, सच्चे मार्गदर्शक के रूप में प्रस्तुत होना असंदिग्ध लगता है । जैनजी द्वारा भेजे गए कुरियर पैकेट में तीन लोगों का अभिप्राय, शोधकार्य के लिए ज्यादा एहमियत रखता है । रजऊ की कथा का जुडाव करिश्मा बेडिनी के माध्यम से होता है । गंगिया बेडिनी के पाँचवी पीढी में करिश्मा बेडिनी का होना । करिश्मा बोडनी अपनी कला के चमत्कारों से सबको मोहित करती है । रजऊ को सामाजिक बंधनों से उबारनेवाली गंगिया बेडिनी है । जिसके साथ रूजऊ माधोंपुरा गाँव से भागकर देशपत दिवान के दल से जूडती है । देशपत दिवान का दल १८५७ के विप्लव में क्रांतिकारी दल के रूप में कार्यरत था ।

ईसुरी और रजऊ की कथा की अगली कड़ी सुजानपुर की अनवरी बेगम है । जो आवादी बेगम की बेटी की बेटी है । कथावस्तु का अगला पडाव ऋतु के लिए नया आयाम हो सकता है अनवरी बेगम के मुख से – जब गंगिया बेडिनी रजऊ को लेकर देशपत दिवान के दल में

सम्मलित होने के बाद प्रताप (रजऊ का पति) की मृत्यु होती है । जिसके समाचार सूनकर रजऊ दु:खी होती है । किन्तु देश के लिए मर-मिटने की तमन्ना ओर भी दृढ़ होती है । दूसरी तरह माधोंपुरा मे रजऊ की सास बेटे (प्रताप) की राह देख-देखकर पागल-सी हो जाती है और पुत्र-बिछोह में उसकी मृत्यु होती हैं । ईधर देशपत दिवान के दल में धुबैला का राजकुमार बगावत करता है और रजऊ को साथ लेकर निकल पड़ता है भागकर रजऊ झाँसी की रानी के साथ मिल जाती है ।

अंत में रजऊ देश के लिए शहीद होती दिखाई पड़ती है । ईधर रजऊ की मृत्यु की खबर सूनकर ईसुरी को शुन्याकाश में धकेल देता है । तामीरदारी के बावजूद भी वह संन्यासी हो जाता है । उपन्यास के अंत में ॠतु का पी.एचडी. शोधकार्य पूर्ण होता है । जिन-जिन पहलू के लिए उन्होंने महेनत-मशक्कत की है । वह साकार होता है । किन्तु निजी जीवन में ईसुरी की तरह अपूर्णता में बंधकर माधव से दूर होना शायद मुक्ति का मार्ग भी हो सकता है ।

उपन्यास की भाषाशैली में संपूर्णत: बुन्देलखण्डी शब्द-विन्यास का प्रभाव ज्यादात्तर दृष्टव्य होता है । फागों में बुन्देलखण्डी शब्दों का जो गठन है, वह सिर्फ बुन्देलखण्ड प्रांत की जनता सरलता से समझ सकती है । अन्य पाठकगण के लिए समझना मुश्कील है । पुष्पाजी का आशय बुन्देलखण्ड प्रदेश को जीवंत करना है । इसीलिए उन्होंने हिन्दीभाषा के साथ-साथ फागों की भाषा बुन्देली की रखा है । जिस से फलितार्थ होता है कि पुष्पाजी ने बुन्देली और हिन्दी भाषा का समन्वय प्रस्तुत किया है ।

किसी भी कृति को सजीवता प्रदान करने के लिए देशकाल और वातावरण अति आवश्यक पहलू है । जिसको केन्द्रस्थ रखते हुए लेखिका ने आधुनिक परिवेश और प्राचीन परिवेश को कलमरूपी धाँगों में पिरोया है । क्योंकि जहाँ १८५७ के विप्लव की बात उठ़ती है । वहीं आधुनिकयुग में पी.एचडी. के अभ्यासक्रम और शोधकार्य की क्षतियों को चित्रित किया है । बुन्देलखण्डी तीज-त्यौंहार, रीत-रिवाज, धार्मिक मान्यता, अंधश्रद्धा आदि प्रसंगों को चित्रित करके, लेखिका ने देशकाल और वातावरण का अनूठे ढंग से चित्रांकन किया है ।

उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास सृजन करने के पीछे एक विशेष प्रयोजन जरूर रहा है । क्योंकि मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत, यशोधरा और विष्णु प्रिया काव्यों में समाज के अवहेलित नारीपात्रों को वाचा प्रदान करने का प्रयास किया है । ठीक उसी प्रकार पुष्पाजीने 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में ईसुरी और रजऊ को लोकगाथा को नये आयामों के साथ प्रस्तुत किया गया है । परिणाम स्वरूप फागों के साथ-साथ ईसुरी और रजऊ से पाठकगण परिचित होता है । अंत में मूल तथ्यों १८५७ के विप्लव के साथ जोड़कर कथा को आधुनिक एवम् प्राचीनत्तम परिपाटी पर नापने का सशक्त प्रयास किया गया है ।

२.९ त्रिया-हठ : एक परिचय :

'बेतवा बहती रही' उपन्यास की रचना करके पुष्पाजी ने उपन्यास में कथा, पात्र, वातावरण आदि को विस्तारीवादी दृष्टिकोण से उभारने का प्रयास है । लेकिन पात्रों में कितनी न्याय संगतता है, कितना तथ्य

और सुधारात्मक अभिगम है । इन सारी बातों को नये आयामों से विश्लेषणात्मक परिपाटी पर खरे उतारने के लिए, लेखिक ने 'त्रिया-हठ' उपन्यास की रचना की है । वस्तुतः 'त्रिया-हठ' उपन्यास एक 'फलेशबैक' संशोधित अभिगम है । 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में वर्णित पात्रों को नये सिरे से न्याय और खरेपन पर उभारने का प्रयास है । इसमें पूर्व घटित घटनाओं, तथ्यों और प्रसंगों को नये शिरे से आलोचनात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । जिस प्रकार 'महाभारत की एक साँझ' नामक नाटक की रचना करके नाट्यकार ने अवहेलित और वंचित पात्रों को न्यायिक तराजू पर तोलने का प्रयत्न किया है । उसी प्रकार लेखिका ने समीक्षकों के जवाब में अपनी भावनाओं को समझाने का प्रयास किया है'' वस्तुतः 'बेतवा बहती रही' उपन्यास के पात्रों के लिए एक कसौटी हैं । 'त्रिया-हठ' उपन्यास उन ही पात्रों के खरेपन और खोटेपन की कहानी हैं ।

कथासार :

'त्रिया-हठ' उपन्यास की कथावस्तु वैसे तो नई नहीं है । किन्तु 'बेतवा बहती रही' उपन्यास की कथा को दूबारा प्रस्तुत किया है । लेखिका का आशय कथा को एक नया आयाम देना है । वस्तुतः पात्र एवम् घटनाओं को लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में चित्रित किया हैं । उसे न्याय दिया जाए । वेसी ईच्छाओं से वश होकर कथा को विश्लेषणात्मक अभिगम से दूबारा प्रस्तुत किया गया है ।

'त्रिया–हठ' उपन्यास का प्रारंभ राजगिरि गाँव से ही होता है । किन्तु माहैाल एवम् परिस्थितियाँ बदल–सी गई है । मीरा के आगमन से मामी को चुनाव में सफलता मिले । उसी आशय से प्रचार अर्थ आयी है । किन्तु उर्वशी का बेटा देवेश, उर्वशी की मृत्यु की जिम्मेदार मीरा के परिवार को ठहराता है । मीरा के लिए पूरानी स्मृतियाँ, मन पर बड़ी शिद्धता से हावी होती है । लेकिन आज राजनीतिक दावपेंच–हथकण्डों के बीच मामी को जीताने के लिए मामा ने सौ मुर्गों की बलि दी है । चुनावी माहौल में बैरागी का आना, मीरा के लिए सुखद और दर्दनाक सिद्ध होता है । बरसों पहले बैरागी की चाहना मीरा ने की थीं । किन्तु आज भी वह चाहना अधूरी ही रही है । ईधर उपन्यास का खलनायक अजीत, बरजोसिंह की सहायता से वनविभाग में नौकरी पाता है । बैरागी ने उर्वशी को प्यार किया था । इसी प्यार के खातिर वह उर्वशी की शादी अच्छे घराने में कराना चाहता है । देवेश ने मीरा और बैरागी की बातों को सूनकर, विश्लेषण के लिए निजी अभिगम अपनाया है । सर्वदमन और उर्वशी की शादी को लेकर शत्रुजीतसिंह (सर्वदमन का बड़ा भाई) नाराज था । किन्तु सर्वदमन ने सबको परास्त करके उर्वशी के साथ शादी की थी । इस प्रसंग में मुख्य खलनायक मीरा के नाना थे । जिन्होंने जिल्ला विकास अधिकारी से कर्जा लेकर शादी सम्पन्न करवायी थी । मीरा पत्र लिखकर देवेश को कहना चाहती है कि सत्य को जानने के लिए तत्कालिन परिस्थितियों को जानना जरूरी है । इसीलिए उसने विजय की बहू का नाम सूचित किया था । क्योंकि आगे की कथा उसीसे मुखातिब है । विजय की बहू की जुबान उर्वशी और बरजोरसिंह

के बीच हंमेशा वाकयुद्ध जारि रहा था । उर्वशी का ब्याह विजय के साथ हो, इसी शर्त पर उर्वशी ने बरजोरसिंह से प्राप्त गर्भ को गिराया था । अजीत बजोरसिंह को डाकूओं की धमकियाँ देता था । सारी बातों का पता विजय की बहू के माध्यम से चलता है । देवेश ने उर्वशी की कहानी पर अपना निजी अभिप्राय दिया था । किन्तु स्मिता के साथ रहना देवेश को वसंत के समान लगता है । स्मिता उर्वशी की कहानी को नये अंदाज से प्रस्तुत करना चाहती है । परंतु देवेश के दिल को ठेस न पहोंचे, ऐसा कार्य करने से डरती भी है । सर्वदमन की आकस्मिक मृत्यु होती है । उर्वशी विधवा होती है । स्मिता विधवा विवाह का समर्थन करती है । किन्तु अनमेल विधवा विवाह का कड़ा विरोध करती है । जब उर्वशी विजय के ब्याह में जाती है, तब शेरा की पत्नी के साथ मिलकर डाकूओं का सामना करती है । किन्तु उर्वशी का आना सबको अखरता है ।

उर्वशी मीरा के घर में हंमेशा के लिए रहने आती है । तब लोगो ने उसका विरोध किया था । दादी और मीरा का कतिपय स्वीकार नहीं था । परिणाम स्वरूप मीरा ने, हाथ की नस काटकर अपना विरोध दर्ज किया था । परंतु चारों ओर के विरोध के बावजूद भी बरजोरसिंह, उर्वशी को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करता है ।

उर्वशी का सौतेली माँ के रूप में आना, जिसके विरोध में मीरा ने हाथ की नस काट दी थीं । दरअसल वह उदय की चाल की शिकार होती है । जब बरजोरसिंह सिरसा जाति-पंचायत में जाते है, तब उर्वशी और बैरागी को लेकर अनैतिकता का आरोप लगाया आता है । दूसरी तरफ दाऊजी उर्वशी का पुन:विवाह करवाकर, उसके हिस्से के खेत

हड़पना चाहते है और उसे पूरे सिरसा में बदनाम करते है । जब उर्वशी और बैरागी का मिलन होता है, तब आपसी रंजिश के कारण उदय और उसके साथियों द्वारा उर्वशी को पीटा जाता है । अंत में उर्वशी की मृत्यु हो जाती है । फलस्वरूप बरजोरसिंह गृहस्थजीवन से संन्यास लेते है । उर्वशी की यादों को अपना साथी बनाकर, गाँव की छोटी-छोटी बच्चियों को लाई के लडडू बाँटते रहते है ।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास की कथा को नये ढंग से विश्लेषणात्मक रूप में प्रस्तुत किया हैं । किन्तु उपन्यास का वातावरण और भाषाशैली 'बेतवा बहती रही' उपन्यास के वातावरण और भाषाशैली के समान है । महद् अंश में अलगता देखने को मिलती है ।

लेखिका श्री का मुख्य उद्देश्य फलेशबैक कथा के माध्यम से बिछड़े और प्रताड़ित पात्रों को फिर से सजीवता प्रदान करना हैं । 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में जहाँ अजीत को खलनायक के रूप में चित्रित किया गया है । वहीं 'त्रिया-हठ' उपन्यास में अजीत को तत्कालिन परिस्थितियाँ से लड़ते हुए दिखाया गया है । उर्वशी के चरित्र में भी विद्यमान त्रुटियाँ यही पर लेखिका दिखाना चाहती है लेखिका का कहना है कि 'त्रिया-हठ' उपन्यास पढ़े बिना किसी भी पात्र के बारे में अपनी धारणा स्थापित नही करनी चाहिए ।

निष्कर्ष :

हिन्दी साहित्य में पुष्पाजी के उपन्यासों की एक अलग पहचान बनती है । 'चाक' और 'विजन' को छोड़कर विशेषत: बुन्देलखण्ड के

आसपास के विस्तार को चित्रित किया गया है । अत: उनके उपन्यास नारी शोषण के खिलाफ आवाज उठाते हैं । जो नारियाँ सदियों से अपनी बात को अभिव्यक्त नहीं कर सकती थीं । उसे उपन्यासों में वर्णित करके, समाज और पाठकों के सामने खड़े किएँ हैं ।

मैत्रेयीजी के सभी उपन्यासों में नारी को प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है । जैसे – चाक में सारंग नैनी, इदन्नमम' में मंदाकिनी (मंदा), अल्मा कबूतरी में अल्मा और कदमबाई, बेतवा बहती रही में उर्वशी, अगनपाखी में भुवनमोहिनी, कही ईसुरी फाग में रजऊ और ऋतु, विजन में डॉ.नेहा और डॉ. आभा द्विवेदी, झूलानट में शीलो, और 'त्रिया-हठ' में मीरा और स्मिता आदि है । किन्तु पुष्पाजी ने कहीं भी पुरूषों को प्रमुख स्थान दिया नहीं है । अत: पुष्पाजी ने उपन्यासों में नारी को प्रमुखता देकर, उसकी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है ।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के परिचयतात्मक अध्ययन से, उनकी कथावस्तु, वातावरण और उद्देश्य सही अर्थो में दृष्टव्य होते हैं । साथ में उनकी समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत होता है । पुष्पाजी ने अँचल-विशेष को उपन्यासो में बँधकर, बुन्देलखण्डी भाव-भंगिमाओं को उजागर किया है । मैं संक्षेप में कहना चाहूँ तो, पुष्पाजी एक सशक्त नारीवादी लेखिका है । जिसका मूल उद्देश्य स्त्री-विमर्श की जडों को मजबूत करना है । वह कामना करती है कि नारी पुरूष के साथ कँधा मिलाकर आगे बढ़ें ।

तृतीय अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र के विविधरूप

प्रस्तावना

३.१ माता रूप में नारी

३.२ पत्नी रूपी नारी

३.३ प्रेमिका के रूप में नारी

३.४ विधवा के रूप में नारी

३.५ धर्मगत नारी (धार्मिक क्रिया-कलाप करती नारी)

३.६ कामकाजी नारी

३.७ रूढ़िचुस्त नारी

३.८ रूढिमुक्त नारी

३.९ मुक्त यौनाचारी नारी

३.१० राजनीतिज्ञ नारी

३.११ दार्शनिक प्रभाववाली नारी

– निष्कर्ष

तृतीय अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र के विविधरूप

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य जगत् में मैथिलीशरण गुप्त की नारी-विषयक अवधारणा को रेखांकित करनेवाली निम्नांकित पंक्तियाँ बहुचर्चित रही है - "अबला जीवन हाय ! तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी !"

लेकिन बदलते परिवेश एवम् परिस्थितियाँ से वश होकर आज ये पंक्तियाँ ऊलटी होती जा रही है । नारी विषयक जनांदोलन ने इन पंक्तियाँ के तथ्य को नष्ट कर दिया है । ८० और उसके बाद के दशकों में जो नारी-विषयक साहित्य का सृजन हुआ है । जिससे फलश्रुत नारीवाद अस्तित्व में आया हैं ।

मनुष्य के जीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं नारी जीवन । इसके बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण एवम् अधूरा है । आदिकाल से आधुनिक काल तक साहित्य में नारी जीवन का चित्रण किया गया है । सृष्टि के आरंभ से ही नारी और नर के परस्पर दृढ संबंध की अतुट श्रृँखला चली आ रही है । इस का सुन्दर वर्णन विष्णुपुराण में देखने को मिलता है । "पुरूष विष्णु है ... पुरूष आत्मा हैं स्त्री शरीर[१] कामायनी में प्रसाद कहते है । -

''नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में ।
पियुष स्रोत-सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में ॥''[२]

आत्मिक संबंध मानव को जीवन जीने के लिए उष्मा एवं शक्ति प्रदान करता है । इसलिए किसीने ठीक ही कहा है कि मानव को मानव की भूख होती है । अकेला आदमी अन्य किसी का साथ चाहता है । इसीलिए ही मानव प्रेम के बंधन में बंधता है । वैसे तो मानव को गुलामी पसंद नहीं होती, परंतु प्रेम और वात्सल्य की गुलामी वह हंमेशा चाहता है । नारी को वात्सल्य और प्रेम की देवी माना जाता हैं । अत: स्वाभाविक है कि विश्‍व के हर एक व्यक्ति का इस देवी के साथ किसी न किसी रूप में संबंध स्थापित होता ही है । स्त्री और पुरूष दोनों मिलकर पारस्परिक सहयोग द्वारा समाज का निर्माण करते है । समाज निर्माण की इस प्रक्रिया में परिवार एक महत्वपूर्ण ईकाई है । नारी परिवार रूपी वृक्ष को अपने विविध रूपों द्वारा पल्लवित करती है । माता के रूप में वह संस्कार और सभ्यता की खाद, पत्नी के रूप में निष्ठा एवं प्रामाणिकता की आबोहवा, प्रेयसी के रूप से स्नेह और सौजन्य का प्रकाश और बेटी, पुत्रवधू, बहन आदि रूप से संवेदना एवं समर्पण का पानी देकर पारिवारिक संबंधो रूपी वृक्ष को अपनी तमाम शाखाओं के साथ नवपल्लवित कर देती है ।

उपन्यास मानव-जीवन की विषमताओं, पारस्परिक विरोधों, प्रवृत्तियों और संघर्षों के अभिव्यक्तिकरण हेतु विविध पात्रों की सृष्टि करता हैं तथा उन्हें साकार रूप प्रदान करने में प्रयासरत रहता हैं । जिस प्रकार समाज का सृजन प्रकृति के सहयोग से होता हैं । उसी प्रकार

उपन्यासों की रचना भी दोनों ही प्रकार के पात्रों के संयोग से ही संभव है । उपन्यासकार इन पात्रों का सृजन समाज से प्रेरणा लेकर ही करता है । क्योंकि तभी ये पात्र पाठकों को अपनी सजीवता द्वारा आकर्षित कर सकेंगे । क्योंकि केवल कल्पना के सहारे गढ लिए गए पात्र कृत्रिम लगते है । इस प्रकार समाज में नारी के प्रदान एवं महत्त्व को देखते हुए, उपन्यासकार अपनी रचनाओं में नारी के विविध पारिवारिक एवम् सामाजिक रूपों का चित्रण करता है । इनमें नारी के माता, पत्नी, प्रेयसी आदि शाश्वतरूप, बहन, बेटी, सास-बहू, ननद-भाभी, देवरानी, जिठानी, बुआ, चाची, मामी आदि पारिवारिक एवम् विधवा त्यक्ता, वेश्या, रखैल, बाँझ, विरहिणी, सखी, शिष्या आदि सामाजिक रूपों का समावेश होता है । इन सभी रूपों में माता, पत्नी एवम् प्रेयसी का रूप शाश्वत माना जाता है । क्योंकि बाकी के सभी रूप बाद में आते है । पहले नारी इन तीन रूपों में पुरूषों के जीवन में आती है । नारी के दूसरे रूप अन्योन्याश्रित है । किन्तु यह तीन रूप शाश्वत है । इन तीन रूपों में नारी का महान स्वरूप झलकता है ।

मैत्रेयी पुष्पा एक नारीवादी उपन्यासकार है । अत: उन्होंने अपने उपन्यासों में पुरूष की भाँति नारी को विविधरूपों में चयन करके सजीवतापूर्ण चित्रण किया है । ये पात्र समाज में स्थित कुरीतियों, विकृतियों एवं जटिलताओं को प्रस्तुत करने के कारण विविध-रूपों में अंकित किए गए । वे पात्र विभिन्न कार्यकलापों के स्तरों तथा स्वभावों से युक्त होने के कारण अनेक रूपों में मुखरित होकर आकृष्ट करते हैं । पुष्पाजी के उपन्यासों में नारी के शाश्वत पारिवारिक एवं सामाजिक

सभी रूपों का चित्रण किया गया है । जिसमें मौलिकता और नवीन्य है ।

नारी के नाना रूपों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण और गौरवशाली रूप माता का है । वेदों में माता को पृथ्वी स्वरूपा कहा गया है । पृथ्वी के समान ही वह संतान को धारण करती है । और मरणप्रायः वेदनाएँ सहकर जब शिशु को जन्म देती है, तो बच्चे के रूप में मानो चार धाम पा जाती है । माता बच्चें का लालन-पालन करती है और आजीवन धैर्य एवं सहिष्णुता के साथ संतान के सुख की कामना करती है । इसीलिए माता के ऋण से विमुख होना असंभव माना जाता है ।

मैंने इस अध्यायमें मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में वर्णित नारी के विविध रूपों को प्रदर्शित करने की कोशिश की है ।

३.१ माता रूप में नारी :

साहित्य में नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण हुआ हैं, लेकिन इन विभिन्न रूपों में विशेषतौर पर मातृ रूप का वात्सल्यपूर्ण दृश्यांकन देखने को मिलता है । पत्नी का पद पाकर नारी के व्यक्तित्व का विकास अवश्य होता है किन्तु उसके जीवन की सच्ची सार्थकता और पूर्णता तभी होती है, जब वह माँ बनती है । जैसे प्रेमचंदजी के अनुसार ''नारी जीवन की सफलता मातृत्व में ही चरितार्थ होती है । इस बात को उस समय के सभी मनीषी मानते थे । माँ को पृथ्वी स्वरूपा और पिता से भी बड़ी माना है । माता के स्वभाव में एक ओर त्याग, ममता,

स्नेह का परम उत्कर्ष देखते थे तो दूसरी ओर उसके पुत्रवती होने को भी अनिवार्य मानते है ।''(३)

काल प्रवाह में नारी का गौरव कई बार विषम स्थितियों से झूझते समय घटता - बढता गया । किन्तु नारी के मातृत्व की गरिमा सदैव अक्षुण्ण बनी रही । नारीत्व की पूर्णता मातृत्व में ही खिलती है । 'उर्वशी' खण्डकाव्य में नारी के मातृत्व की महिमा का वर्णन करते हुए दिनकरजी लिखते है कि -''

''माँ बनते ही स्त्रियाँ कहाँ से कहाँ पहुँच जाती है ।

गलती है हिमशीला सत्य है ।

गहन देह की खोकर पर हो जाती है,

वह असीम कितनी यपस्विनी होकर ।''(४)

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में गठित नारी के विविध रूपों में माता रूपी नारियाँ अलग तौर दृष्टिगत होती है । अपनी संतान के संरक्षण के लिए वह किसी से भी लड़ सकती है । उस समय वह यह नहीं देखती कि उसकी इस हरकत से परिवार का कितना नुकसान होगा । संतान सुरक्षा का प्रश्न आता है तब नारी तो क्या पशु मादाएँ भी बड़ी आक्रमक हो जाती है । जिससे उसकी संतान को कोई छेड़ने की हिम्मत नहीं करता । जब पुष्पाजी के उपन्यासों में 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग नैनी अपने बेटे चंदन के लिए अपने जेठजी और पति रंजीत के सामने बंदूक लेकर खड़ी हो जाती है । जैसे - ''पिटकर दोगुनी ताकत का अनुभव

हुआ सारंग को, बुरी तरह लपक पड़ी हाथ-पाँवों में, पागल, विक्षिप्त की भाँति दौड़कर खूँटी से बंदूक उतारी और बिजली की सी फुर्ती से चला दी दोनाली - धाँय ! धाँय ! यह भी न सोचा कि निशाना किधर...

"असल मर्द है तो छू चंदन को ! छु; रणचंडी बनी खड़ी है सारंग ।"(५)

तो कहीं पर सारंग नैनी अपन मातृत्व पद को समर्पित करती नजर आती है । वह अपने अस्तित्व को मिटाने के लिए तत्पर हो जाती है । "वह रंजीत से कहती है कि - "समझते हो कि मैं अपनी बेइज्जती का बदला··· वह मेरी छातियाँ उघाड़ने की जगह नोच-खसोटकर घायक-विक्षत कर देता, डोरिया मुझे फाडकर खा जाता, मेरी बोटी-बोटी··· रंजीत, मैं तब भी अपने बेटे को दाँव पर न लगाती । औरत का कलेजा कैसा होता है, तुम क्या जानो ? कब वह पत्थर की शिला हो जाती है और कब पिघला हुआ मोम ? चंदन से ज्यादा प्यारी नहीं है मुझे अपनी देह ।"(६)

इन शब्दों में मातृत्व की झलक दिखाई पड़ती है । वह चाहे तो किसी के सामने हथियार उठा सकती है । किसी को मार गिरा सकती है । मातृत्व की चाह नारी को कहाँ से कहाँ ले जाती है ।

माँ शब्द का अर्थ है दया, क्षमा और ममता । स्नेह और वात्सल्य का उदात्त रूप हैं माँ । माँ ममता, दया, क्षमा और सहिष्णुता का आदर्श रूप है । वैसा ही आदर्श रूप अपनी संतान के प्रति उसकी हित-चिन्ता का भी है । माँ का यह अक्षय वात्सल्य कभी नहीं घटता, कभी नहीं सूखता । कठिन-से-कठिन परिस्थिति में और बड़े-से-बड़े विरोध में

भी माँ अपने वात्सल्य से विमुख नहीं होती । वह संसार के सारे सुखों को तिलांजलि दे सकती है ।

मैत्रेयी पुष्पा विरचित "इदन्नमम" उपन्यास में वर्णित नारी प्रैम (मन्दाकिनी की अम्मा), जो स्वार्थवश मन्दा को छोड़कर घर से भाग जाती है और अंत में सामाजिक सोपानों को पार करते-करते थक जाती है । फलस्वरूप अपने आप में पडी हुए सुक्षुप्त मातृत्व भावना जाग्रत होती है । मंदा से मिलन की कामना करने लगती है । वह पंचमसिंह के सामने गिड़गिड़ाने लगती है । "मंदा से मिलने के लिए वह पंचमसिंह को सन्देशा भेजकर बिनंती करती है । जैसे - "कुसुमा भाभी कहती हैं ", प्रैम बहू का सन्देशा आया है ।"

खबरूआ हाथ जोड़कर विनत हुआ खड़ा रहा । अवसर देखते ही बोला, "दादा, वैसे मरजी आपकी ठहरी, पर प्रैमभौजी ने यह कहा है कि विनती करना हमारी और से, भीख माँगना, दादा एक बार हमारी बिटिया का मुख हमें दिखा देवें भगवान उनको सात जनम तक सतजुगी सन्तान दे । ऐन सुपात्तर पूत ।

"समझ लें उनकी बहन, उनकी बेटी कही रही है, कर रही है गुहार... बस, एक बेर अपनी आँखें हेर लेवें मन्दा कों ।"(७)

प्रस्तुत उपन्यास में प्रैम रूढिमूक्त नारी है । किन्तु उसके अन्दर भी एक माँ जीवित है । जो हर वक्त पुत्री मिलन की ललक लगाये रखती है । चाहे किसी के भी सामने सर झूकाना पड़े । तो कहीं पर माँ

अपने बेटे की सेविका बनकर अपना फर्ज निभाती है ।'झूलानट' उपन्यास में बालकिशन की अम्मा, बालू की बिमारी के दौरान उसकी सेवाश्रुषा करती नजर आती हैं जैसे –

करहती – सी दुर्बल आवाज !

धीमी और घिसटती हुई पदचाप ! कौन ? अम्मा !

''बालू, ओ मोरे बेटा .. अये दो घूँट दूध । मेरी तो साँस से साँस रहेगी, तब तक पोसूँगी अपने लाल को ! लुगाई रंडी तो सौख–मौज को सगी–साथिन है ।''

माँ आ गई । मैले आँचल में काँसे का कटोरा छिपाए हुए, रोम–रोम से झरती हुई ममता, आँखों में मोह की नजर । बालकिशन का गला भर आया ।''[८]

बेटे को दूध–दलिया रखाते देखकर माँ का पेट भरता जा रहा हो ज्यों । दुबले लकीरों भरे चहेरे पर अजीब–सी तुष्ट भावना । अम्मा के मन को उसके सिवा कौन पढ़ सकता है ।

पुष्पाजी के उपन्यासों में माँ के विभिन्न स्वरूपों में विभाजित किया है । ''कही ईसुरी फाग'' में प्रताप की माँ, प्रताप के मिलन की कामना करती है । किन्तु इतनी भावुक होकर अंधश्रद्धा को स्विकार करके, प्रताप की बाँए में ताबीज बाँधकर वात्सल्य को प्रकट करती है । जैसे – ''प्रताप के पास खड़ी माँ उसे देख रही थी, जैसे जीवन–भर का वात्सल्य लुटा देना चाहती हो, जैसे गाय बछड़े के लिए मूक आँखों रम्भाती हो । चिड़िया की चोंच–सा मुँह खोले प्रताप की माँ आगे बढ़ी और बेटे की बाँह कमीज की आस्तीन उघाड़कर अपने हाथ में ले

ली । मनोयोग से ताबीज बाँध रही थी माँ । ताबीज, जिस पर महाभाई की आकृति खुदी थी । जिसके हाथ में शमशीर थी और गले में मुंडमाल । ताबीज बाँधते माँ का पिघला हुआ चेहरा ठोस-सा होने लगा था और वह कठोर होठों से बुदबुदा रही थी । प्रताप के दुश्मनों को कीलने का नुस्खा उसकी बाँह पर बाँध रही थी ।''[९]

इस प्रकार प्रताप की माँ अपने बेटे रक्षा के लिए किसी भी हद से गुजरने के लिए तत्पर हो जाती है । यहाँ पर वात्सल्य की छबी मुखरित होती नजर आती है । तो कहीं, वह प्रताप से मिलन हो इसीलिए, व्रत, उपासना एवम् भगवान की अर्चना करती हुई नजर आती है । जब धर्मगत अनुष्ठानों में सम्मलित होने के बावजूद भी अच्छा न हो तो, भगवान को कोसती है । जैसे कि - ''सास अपनी व्यथा कह रही थी -'' रज्जो, हमने देव-पितर मना लए, संकर महादेव को पुजापे में कमी नहीं छोड़ी कुचबन्दिया के देवता तक धोके, कन्या जिंवाई, पर लला नहीं आए ।'' कोई देवता सुने न सुने, रज्जो एक माँ की आर्त्त पुकार सुनकर खड़ी की खड़ी रह गई । आँसु करना कलेजे के पुख्तापन की परीक्षा है, वह खुद भी तो सास से अलग नहीं ।''[१०]

उपर्युक्त संदर्भ से स्पष्ट होता है कि माँ का स्थान भगवान से उच्च कोटी का है । भगवान श्रीकृष्ण को भी देवकी की कौख से जन्म लेना पड़ा था । इसीलिए, माता विपदा के समय पुत्र मिलन के लिए किसी भी हद तक गुजर सकती है ।

माँ का अपनी संतान से खून का रिश्ता होता है । इसलिए वह स्वभावत: अपनी संतान को अतिरिक्त स्नेह करती है । जब से वह गर्भ धारण करती है तभी से उसकी रक्षा करना और उसका उचित ढंग से पालन करना वह अपना कर्तव्य और दायित्व समझती है । ''चाक'' उपन्यास में सारंग अपने बेटे से अलग हो जाती है । तब उसकी याद, सारंग को परेशान करती है । अपने अस्तित्व से अपने बेटे का अस्तित्व जोड़ती है । सारंग की आत्मा कराह उठती है । जैसे'-''मै किसी के गिराह नहीं गिरूँगी । मेरा अपना है - मेरा चंदन । मेरा बेटा । उसको बुलाना होगा । उसके आने से यह घर कई-कई गुना मेरा हो जाएगा । चंदन मेरी फुनगी नहीं, जड़ है । बसावट है । दुनिया है, सृष्टि है ।

नई अनुभूति ने घेर लिया उसे··· चंदन, तू छिन गया, तेरी माँ लुट गई । तू चल गया, मैं सूनी-वीरान हो गई ! तू पराये आँगन का बिरव, मैं बाँझ धरती ! ... तू आ जा बेटा । लौट आ । हम उजड़े, या रहें, क्या अंतर पड़ता है ?''(११)

उपरोक्त संदर्भ में लेखिका ने ''सारंग'' के माध्यम से समाज की सभी माताओं की वेदना को प्रदर्शित किया है । क्योंकि बच्चों का अस्तित्व माताओं पर निर्भर रहता है । इनके बिना न तो माताओं की एहमियत है, न बच्चों की । जब एक माँ से उनका पुत्र अलग होता है है । तब माँ की दशा क्या होती है ? इसका सजीव चित्रण पुष्पाजी ने ''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास में कदमबाई के माध्यम से किया है । जब राणा कदमबाई से अलग होकर पढाई के लिए रामसिंह के साथ भेंजा जाता है । तो मानो कदमबाई गैया की तरह रम्भाने लगती है ।

जैसे कि – ''माथे पर हाथ धरकर बीच गैल में एक हाथ से पेट पकड़कर बैठ गई कदमबाई । फफक – फफफकर रोने लगी । पीठ, पेट, आँखें, नाक, होंठ ... पूरा बदन रो रहा है । मैं तेरी दुबली देह और भोले चेहरे को देखकर जीने की ताकत जुटाती रही रे.... अपनी भूख – प्यास में नहीं, तेरी चिंता में जिंदा रहती थी । आज रामसिंह उस फिकर से भी आजाद कर चला ! राणा रे... तेरी माँ वीरान ... अब चिंता में नहीं, दुख में डूब जाएगी, जो दुख तेरे बिछोह ने पैदा कर डाला ।''(१२)

कहीं पर पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में माता रूपी नारी को अनहद वात्सल्यपूर्ण एव ममत्व के कारण पागल नारी के रूप में दृश्यांकन किया है । क्योंकि मातृ हृदय में बेटे के लिए लबरेज रूप में प्यार भरा पड़ा होता है । इसलिए पुत्र के इन्तजार में माताएँ पागल होती दिखाई पडती है ।

''कहीं ईसुरी फाग'' उपन्यास में प्रताप की मृत्यु की खबर सूनते ही, प्रताप की माँ पागल हो जाती है । जैसे कि – ''प्रताप को मार डाला गया । उसकी माँ माधोंपुरा में पागल की तरह घूमती है । गाँव के लोग बताते हैं कि बूढ़ी ने खबर सुनी तो सच नहीं मानी ।''(१३)

इस प्रकार ''कहीं ईसुरी फाग'' में प्रताप की माँ संतान वियोग में राह देखते – देखते अंत में पागल हो जाती है । यहाँ पर सचमूच मातृत्व के साक्षात दर्शन होते है । उनकी ममता कभी कम नहीं होती है । अपने बेटे के प्रति जो ममता है । वह उसके अस्तित्व के साथ ही समाप्त हो जाती है । ''कही ईसुरी फाग'' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पाजी ने

प्रताप की माँ का चरित्र ममत्व के साथ निमार्ण किया है, उनकी ममता में न तो कोई विक्षेप होता है और न ही कभी कम ।

संक्षेप में कहना हो तो मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों की नारी माँ के रूप में महान ही है । पुष्पाजी ने कई उपन्यासों विविध पात्रों के माध्यम से माँ की महिमा का गुणगान गाया है । वह ममता का अक्षय सागर है । जिसका उदाहरण ''चाक'' उपन्यास की सारंग नैनी है । तो स्नेह की अतुल राशि ''इदन्नमम'' उपन्यास की प्रैम है । दया एवम् वात्सल्य की प्रतिमा 'झूलानट' उपन्यास की बालकिशन की अम्मा है । जो बूढी और कमजोर होने के बावजूद भी बालू पर वात्सल्य बरसाती है । त्याग तपस्या की प्रतिमूर्ति के रूप में ''कही ईसुरी फाग'' उपन्यास में प्रताप की माँ सदैव पूजनीय है । क्योंकि पुत्र मिलन रूपी तपस्या में अपने अस्तित्व को मिटाती है इस प्रकार देखे तो मैत्रेयी पुष्पा के सभी उपन्यासों में नारी के रूप में माता का चित्रण वास्तविक परिलक्षित होता है

३.२ पत्नी रूप में नारी :

मनुष्य की मुख्य दो जातियाँ हैं – नर और नारी । जिस प्रकार रथ को दो पहिये होते हैं जिसके माध्यम से रथ को गति मिलती है और वह आगे बढता है । किन्तु यदि रथ के चक्र असंतुलित हो जायें, विषम हो या अकेला हो, तो रथ की गति अवरूद्ध हो जाती है । इसी प्रकार संसार की सृष्टि व उसका विकास नर–नारी इन दोनों के मिलन पर ही आधारित है । डॉ. सुमंगला झा ''मनुस्मृति में नारी'' नामक ग्रंथ में कहती है कि – ''ईश्वर का विराट रूप ही समाज है, जिसमें नर–नारियों

का समान महत्व व आवश्यकता है । भगवान शंकर का अर्द्धनारीश्वर रूप इसी का प्रतीक है । उनके शरीर का बायां भाग पार्वती का है एवं दाहिना भाग वे स्वयं हैं । जिस तरह शरीर के बायें भाग को दाहिने भाग से अलग कर देने पर उसका जीवन विनष्ट हो जाता है, उसकी चेतना लुप्त हो जाती है, उसी प्रकार विराट् समाज में भी नर को नारी से पृथक कर देने पर उनका जीवन सुस्त, अपूर्ण और नीरस ही प्रतीत होगा ।''[(१४)]

मानव सभ्यता के आदिकाल से ही पत्नी के धर्म और मर्यादा के महत्व को स्वीकार किया गया है । भारत वर्ष के लंबे इतिहास में हमारे समाज में समय-समय पर बड़े-बड़े आमूल परिवर्तन होते रहे है । इनके अनुसार पुरूष प्रधान समाज-व्यवस्था में नारी की स्थिति में उतार-चढाव होता रहा है । वैदिक युग में जहाँ नारी को प्रतिष्ठिता एवम् सन्मानीय पद प्राप्त था । वही गुप्त-युग तक आते-आते नारी भोग्या और अन्त: पुरिका बन गई । मध्य-युग में नारी को पाप की खान और मोक्ष-साधना की बाधा भी माना गया । पर पत्नी-धर्म के इस शाश्वत रूप में कभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ पति से चाहे समान प्रेम और आदर मिला, चाहे दासी और सेविका - सा शासन और निरादर । पत्नी अपने सत्यधर्म से कभी विचलित नहीं हुई है ।

हिन्दी उपन्यास जगत् में पत्नी के इस शाश्वत रूप का विस्तृत और सजीव बहुमुखी चित्रण हुआ है । ज्यादात्तर महिला लेखिकाओंने स्त्री के शाश्वत रूप को पृष्ठभूमि का आधार बनाया है । मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में पत्नी के परंपरागत और आधुनिक दोनों रूपों का

चित्रण किया हैं । उन्होंने पत्नी के पति-परायण और पति-द्रोही दोनों रूपों को सहजता एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित किया है ।

भारतीय संस्कृति में नारी का पत्नी रूप अपनी विशेष एहमियत रखता है । क्योंकि परिवार में पत्नी बनकर आने के बाद वह एक पत्नी ही नहीं बनती, अन्य पारिवारिक रिश्ते उसके पत्नीत्व के साथ जुड़ जाते है । वह पत्नी रूप में पुरूष को प्रेरणा और उत्साह प्रदान करती है । प्रेम, मान, त्याग, सेवा, आत्मसमर्पण और विश्वास की सीढ़ियों से वह पति के हृदय तक पहुँचती है ।

नारीवादी लेखिका श्री मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में नारी के द्वितीय रूप का चित्रण किया है । जो पति की अर्द्धांगिनी सिद्ध होती है । ''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास में लेखिका ने स्त्री के अर्द्धागनी रूप को चरितार्थ किया है । जिसमें आनंदी अपने पति मंसाराम की सेवा करते हुए दिखलायी पड़ती है । जैसे - ''उन दिनों पत्नी भी उनके साथ तपस्या पर जुटी थी । मंसाराम का तप ईश्वर - आराधना था तो आनंदी की साधना पति-सेवा थी, जैसा कि शास्त्रों में बताया गया है । वह नहाने का पानी धरती, धुले कपड़े देती । चंदन घिसती । पूजा की थाली सजाती । लुटिया माँजकर दूध और जल भरती । फूल-पात जुटाती । परसाद बनाती, पंडितायनों की तरह ऐसे अनेक काम करती, जो पूजा से संबंधित थे । वह भक्त पति का किसी भी तरह दिल नहीं दुखाती । आसन डालकर पीछे बैठी रहती, कब क्या जरूरत पड़ जाए ?''(१५)

इस प्रकार आनंदी पूर्ण रूप से पति की सेवा में रत रहती है । क्योंकि पति का दिल दुखायेगी तो, कहीं उसे पाप न लगे । ऐसी धारणा के साथ आनंदी एक आदर्श पत्नी के रूप में दृष्टव्य होती है । तो कहीं पर पति रूपी मालिक पर अपना सब कुछ न्यौछावर करती हुई दासी के रूप मे दिखाई पड़ती है । जैसे कि –"आनंदी ! पत्नी को पाँवों की आहट से, चूडियों की छनक से, पायलों की रूनक-झूनक से पहचान लेते हैं । आत्मीयता हो आई, इस औरत ने क्या बिगाड़ा है ? सेवा में कमी नहीं की । उनके ही ध्यान में मगन रही । गृहस्थी को बचानेवाली पतिव्रता आनंदी उनकी दुश्मन नहीं, सताई हुई स्त्री है ।

अरे ! आनंदी तो पाँव दबाने बैठ गई । जिस मंसाराम को कदमबाई ने तिनके बराबर साहसी नहीं माना, पत्नी उसको मालिक मान रही है । पाँव दबाते हुए आनंदी ने विनयपूर्वक कहा –

राजा काका कहते हैं – अपना मंसा हीरा है । मूझे लगता है, मैं ही हीरा पर धूल फेंक रही हूँ । तुम अपना मन मत मारो, उस कबूतरी को बिठा लो । बस मुझे सेवा का मौका देते रहना । क्या चाहिए और ?" (१६)

यहाँ पर आनंदी पति सेवा को पवित्र एवं शाश्वत धर्म मानती है । अपने पति मंसाराम से अगर कोई गलती हो जाये, तब भी उसे क्षमा करना अपना कर्तव्य समझती है । सही अर्थों में मूल्यांकन करते हुए कहना हो तो, आनंद अपने पति मंसाराम को भगवान या मालिक मानती है । उनकी हरेक बातों या आज्ञा को शिरोमान्य रखती है । अंत तक वह उनकी दासी बनकर जीवन व्यतित करना अपना धर्म मानती है ।

संक्षेप में आनंदी को आदर्श भारतीय नारी के रूप में चित्रित किया गया है । जो पति को परमेश्वर के रूप पूजती है ।

लेखिका ने कहीं पर अपने उपन्यासों में नारी को पुरूषों के आधिन भी दिखाई हैं । याने स्त्री अपने भाग्य विधाता के रूप पुरूष को स्वीकार करती है । जैसे कि – ''वे भभक उठीं, ''तुम तो बिलात कह गईं बैन ! कहानी – अनकहानी । जेठ की मान–मरजादा तियाग दी तुमने । पर यह बताओ कि हम कैसे तियाग दें अपने आदमी का संग ? हमारा तो अनादर नहीं किया उन्होंने । ले आए सो ले आए ! होगी दुखिया ! पिन्दोला है मरद ! और औरा की सुगढ देह ! बस हो गई परलय, आन परी विपता ! सो अपने हिस्सा में से देंगे ! तुम्हारे हिस्सा से नहीं कटने देंगे हम ! जोगी को ब्याह गए तो बैरागिन होना ही पड़ेगा हमें ।''[१७]

उपर्युक्त संदर्भ को समीक्षात्मक दृष्टिकोण से देखे तो, पुष्पाजी ने ''इदन्नमम'' उपन्यास में 'देवगढवारी' नामक स्त्री को एक आदर्श भारतीय नारी के रूप में चित्रित किया है । अगर उनका पति जोगी होता तो, वह जोगन बनकर जीवन व्यतित करना सहर्ष स्वीकार करती है । यहाँ उनकी पतिव्रता धर्म भक्ति परिलक्षित होती है ।

''चाक'' उपन्यास में वर्णित नारी पात्रों में लेखिका ने ऐसे भावों को चित्रित किया है । जिसमें नारी आदर्श पतिव्रता के रूप में मुखरित होती है । जो अपने अस्तित्व की कुरबानी देकर अपना पति धर्म निभाना कर्तव्य समझती है । जैसे कि चरनसिंह के बेटे की बहू, जो अपरेसन करवाकर आती है । तत्काल ही सदा सुहागिन का व्रत

रखकर, आदर्श पत्नि के रूप दृष्टिगत होती है । जैसे कि ''देख लो चरनसिंह के बेटे की बहू को ! पेट काटकर अपरेसन हुआ था । कल ही गाड़ी में धरकर लाए हैं; पर बरत नहीं तोडा । निर्जला रही । कहती है – हम मर जायँ तो हमारा सौभाग्य ! सुहागिन मरना कितनों को मिलता है ? पति के कंधों पर चढ़कर चिता तक जाएँगे । मूँह से पानी की बूँद नहीं छुआई । भाई ऐसी होती हैं सती । ऐसी सतियों से ही चल रहा है संसार, नहीं तो दुनियाँ रसातल को चली गई होती ।''[१८]

इस तरह चरनसिंह के बेटे की बहू, अगर सौभाग्य व्रत करते – करते मृत्यु को पाती है । तो अपने आपको बडी सौभाग्यशाली मानती है । क्योंकि पति के कंधो पर चिता जाना, उनकी रूह (आत्मा) को तृप्ति देती है । दूसरी जगह पुष्पाजी ने नारी के माध्यम से स्त्री के मूलतः स्वभाव को प्रदर्शित किया है । क्योंकि स्त्री अपने पति को परमेश्वर, मालिक रूप में स्वीकार करती है । जिस प्रकार भगवान को प्रसन्न करने के लिए भक्त किसी भी हद से गुजरने के लिए तैयार है । उसी प्रकार अपने पति को खुश करने के लिए नारी भोग्या बनने के लिए तत्पर है । जैसे ''चाक'' उपन्यास में सारंग अपने पति रंजीत को आनंदित करने के लिए सैजशय्या पर रंभा की प्रतिकृति के रूप में उपस्थित होती है । ''रंजीत ने सारंग को अपनी बाँहों में खींच लिया । उसके कपडों से झुझने लगे । कोई बटन टूटा–टक्क । कहीं से सिलाई उखड़ी–चिर । उसने प्रतिरोध नहीं किया, उलटा सहयोग ही दिया – मैं खुद उतार देती हूँ । तुम्हें बड़ी उतावली मची है । सबर करो ।

पलिका के ऊपर लेटी सारंग अँधेरे कोठो में हमले पर हमला झेल रही है । बेबस सी, मगर अपनी सहमति दिखाते हूए । आह – कराह को होंठ भींचकर पीती हुई, लेकिन रंजीत की पीठ को कोमल हाथों से सहलाती हुई ... सहयोग का अभिनय ... पति ने पूरी ताकत निचोड़ दी 'मर्दानगी के बोझ से कुचल डाला । अभिसार की रस्म – अदाई पूरे मन से हुई । उसे परास्त करके रंजीत संतुष्ट हैं ।''[१९]

दरअसल सारंग अपने पति को संतुष्ट करने के वास्ते, वह कोई भी कार्य कर सकती है यह तो सिर्फ सैज है । वास्तव पत्नि में जो त्याग एवम् बलिदान के गुण सम्मोहित होते है । वह सब गुण उपर्युक्त संदर्भ से सारंग के पत्नी में विध्यमान है । भारतीय संस्कृति में पति को संतुष्ट रखकर ही पत्नी संतुष्ट रह सकती है । यह बात यहाँ पूर्णरूप से खरी उतरी है । तो ''अगनपाखी'' उपन्यास की नायिका भुवन अपने पत्नी रूप को साकार करने में सफल हुई है । क्योंकि उनका पति विजयसिंह पागल है । फिर भी उनकी सेवा में दिन–रात कार्यशील रहकर अपने पद की प्रतिष्ठा में बढोत्तरी करती है । जैसे कि – ''मैं सवेरे उठा; उससे पहले भुवन नहा–धोकर तैयार हो गयी थी । उसने पति को शहद में दवा चटाई । दूध दिया और गीले कपड़े से उनकी देह पोंछकर धुले इस्तरी किए कपड़े पहनाए । दूध रखा था, वह मना–मनाकर पिला रही थी । कह रही थी, ''जेठ जी ने पिया है, यही दूध ! पी लो ! अच्छा है ।''[२०]

उपयुक्त संदर्भ से परिलक्षित होता हैं कि पत्नी के लिए पति संपूर्णतः परमेश्वर ही है । इसीलिए भुवन पागल पति की सेवा करके भगवान को प्रसन्न कर रही है । क्योंकि भुवन का भगवान उनका पति

ही है । दूसरे उपन्यासों में देखे तो, ''बेतवा बहती रही'' उपन्यास की पतिव्रता नारी गजरा है । जो पति की अवहेलना के बावजूद भी पति सेवा में उपस्थित रहती है । गजरा की करूपता के कारण, उसका पति उसे पत्नी के में अस्वीकार करता है । किन्तु फिर भी – ''गजरा वहीं पास खड़ी थी – चुपचाप । आँखों में ईश्वर के प्रति आस्था की झलकियाँ थीं ।

जीवन और मृत्यु के बीच झूलते पति के लिए और क्या माँगती गजरा, फिर तो एक ही गुहार थी, एक ही टेर – कि प्रभो, इनकी साँसों में मेरी साँसें मिला दो । मेरा जीवन काटकर जोड़ दो इनकी आयु में··· इसी में मेरा मोक्ष है, खुशी है, सन्तोष'

गजरा ने कोताही कहाँ बरती । घायल पति की वेदना में स्वयं भी सिमटी रही । पीड़ापूर्ण क्षणों की संगिनी थी, क्षत–विक्षत शरीर को छूने की अधिकारिणी ।''(२१)

लिखित संदर्भ से ज्ञात होता है कि पत्नी के लिए पति ही सर्वस्व है । पति के साथ पत्नी का रागात्मक संबंध होता है । यानी पति के जीवन के बदले में अपने प्राण न्यौछावर करना पत्नी के लिए बाँये हाथ का खेल ही है । पत्नी पति की लम्बी आयु के लिए भगवान के सामने प्राणों की दुहाई देती है । इस प्रकार 'गजरा' एक आदर्श भारतीय पत्नी के रूप में उभरी है । तो कहीं पर पत्नी अपने पति देव की रक्षा के लिए भगवान की उपासना करती है । युद्ध में सम्मलित होनेवाले सैनिक की पत्नी अपने पति के प्राणों की रक्षा के लिए भगवान की पूजा अर्चना

करती है । "कहीं ईसुरी फाग" उपन्यास की नायिका रज्जो, प्रताप की रक्षा के लिए ऐसे व्रत करती है । – "माँ की तरह ममता भरकर बोली – देख लियो, जंग होवे चाए गदर तुम्हें न कोई फूलछड़ी से नहीं छू सकता । हम शंकर जी ढारते में अरज जो करते हैं ।"

शकरजी ! ढारना उपासना । भक्ति करना और पति के लिए शक्ति माँगना, तो रज्जो पतिव्रता स्त्री की तरह अपने करे पर पछता रही है ?"(२२)

प्रस्तुत संदर्भ से ज्ञातव्य होता है कि रज्जो अपने पति प्रताप की रक्षा के लिए शंकर भगवान की उपासना करती है । क्योंकि उनका पति सैनिक है, जो अंग्रेजों की पलटन में भर्ती हुआ हैं । इसीलिए रज्जो अपने पति को सांत्वना देकर, उनके प्राणों की रक्षा के लिए भगवान के द्वार खटखटाती है । जो एक भारतीय नारी के रूप में व्याख्यायित होती है । दूसरी जगह पर देखे तो "झूलानट" उपन्यास की नायिका शीलो, जो अपने देवर को पति के रूप में स्वीकार करती है । बालकिशन की तीमारदारी के लिए दिन-रात एक करती है । जैसे – "चमची से कहाँ तक खाओगे । चलो, पी लो जल्दी-जल्दी,' कहकर बेला उसके मुँह से लगा दिया । और सचमुच पीछे से सहारा दिए बैठी शीलो ने होंठ बढ़ाकर उसका पिचका हुआ गाल चूम लिया । फिर बीमार और भोले चेहरे पर चुम्मा ही चुम्मा ।

बालकिशन बिस्तर में नहीं, शीलो की गोद में सो रहा है । नींद में डूब जाना चाहता है । शीलो का प्यार... बेहोशी ! नशा ! गफलत !"(२३)

उपर्युक्त संदर्भ से स्पष्ट होता है कि शीलो अपने बीमार पति की सेवा में अपने अस्तित्व को फनाह कर देती है । एक ओर अधिकार वश अपना हक जताती है । तो दूसरी ओर मोम की तरह पीघलकर, पति की हा में हा मिलाती है । पारिवारिक सम्बन्धों में जड़े ओर भी मजबूत बनाना चाहती है । जिसकी बदौलत से पूरे परिवार में शांती कायम हो । समीक्षात्मक रूप से देखे तो शीलो का चरित्र अर्द्धांगिनी के रूप में मुखरित हुआ है ।

मैत्रेयी पुष्पा के समग्रतया उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण हुआ है । अगर दृष्टि को ध्यानांवित करे तो, लेखिका ने अधिकांशतः नारी के पत्नी रूप को आदर्श या पतिव्रता के रूप में ही प्रस्तुत किया है । नारी को परिवार की मुख्य धूरि मानकर उसके परंपरागत, महिमामयी, त्यागमयी व कल्याणकारी रूप का चित्रण किया है । मैत्रेयी पुष्पा की पत्नी रूपी नारी संपति-विपति, सुख-दुःख, जीवन-मरण सभी में पति का साथ देती है । श्रद्धा एवं भक्ति और लगन से सदैव पति की सेवा में तत्पर रहती है, उसके मंगल की कामना में लिप्त रहकर ही पति के साथ अपना अस्तित्व स्वीकारती है । वह पति के दोषों के प्रति सहिष्णुता रखती है और उसे सुधार ने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं । तो कहीं - कहीं पत्नी पति की लम्बी आयु के लिए व्रत, उपासना एवम् भक्ति रूपी सांस्कृतिक चेतना को उजागर भी करती है ।

३.३ प्रेमिका के रूप में नारी :

सामान्यत: कहा गया है कि पुरूष का जीवन संघर्ष से आरंभ होता है और नारी का जीवन आत्म समर्पण से । नर-नारी का आकर्षण साहजिक एवम् प्राकृतिक सत्य है । नर-नारी का यह सहज आकर्षण ही सृष्टि के विकास का प्रमुख कारण है । इसलिए ही आदीकाल से नर-नारी के संबंधो में प्रेमतत्व को अनिवार्य माना गया है । अत: उपन्यासकारों ने भी नारी के उन सभी गुणों का चित्रण किया है । जिसके बल पर वह परिवार और समाज में मान-सम्मान एवं आदर प्राप्त करती है । प्रेम ही नारी की सबसे बड़ी शक्ति और भक्ति है । "जल टूटता हुआ" उपन्यास में रामदरश मिश्र अमलेश के द्वारा प्रेम के विचारों का प्रकटीकरण हुआ है । वैसे - "प्रेम करने का अधिकार तो संसार में सबको है । प्रेम के लिए कोई बंधन नहीं है । प्रेम के बिना तो संसार ही निस्सार हो जाय । पतंगा और दीपक की जाति क्या एक है ? चाँद और चकोर ... मछली और पानी... मृग और मीन की जाति क्या एक है ? सभी विजातीय है फिर भी प्रेम करते है । प्रेम करना तो प्राणी-मात्र का चिरंतन अधिकार है । प्रेम ब्रह्म के अखिल आनंद का रहस्य है, प्रेम सृष्टि का नवनीत है, प्रेम कालिदास, सूरदास, जयदेव की काव्य-सरिता की अंतवर्तिनी शक्ति है । जिसके अंतर में प्रेम का प्रकाश नहीं हुआ वह हतभाग्य मनुष्य सृष्टि के अंधकार में छटपटाता हुआ अपदार्थ वस्तु ही तो है । प्रेम हृदय का आलोक है ।"(२४)

प्रेम के स्वरूप का इस प्रकार स्पष्ट विवेचन करके लेखक ने समाज के सामने प्रेम का सच्चा रूप प्रदर्शित किया है । साथ ही साथ

नारी को प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत भी किया है । नर के लिए नारी सदैव एक मादक स्वप्न के समान रही है । पत्नी और प्रेयसी दोनों की भावनाओं का मूल रति है । किन्तु दोनों की भावाभिव्यक्ति अलग है । नारी का अपने पति के पास एक खास रूप होता है पत्नी का । पत्नी के अलावा नारी प्रेमिका, प्रेयसी के रूप में भी मुखरित होती है ।

नारी में भावुकता, कोमलता, प्रेम व तन्मयता पुरूष की अपेक्षा में अधिक है । उसका हृदय प्रेम से परिपूर्ण रहता है । लड़कियाँ युवावस्था में कदम रखते ही इस दिशा में प्राकृतिक नियम के अनुसार विजातीय पात्र का अदम्य आकर्षण अनुभव करने लगती है । इसी के फलस्वरूप नारी किसी भी युवक के प्यार के बंधन में बंध जाती है और यहीं से नारी का प्रेमिका रूपी स्वरूप शुरू होता है । नारीवादी लेखिका पुष्पाजी ने नारी के इस अद्वितीय रूप को अपने उपन्यास में वर्णित किया है । ''चाक'' उपन्यास में लेखिका ने प्रेम रूपी नदी को गुलकंदी के माध्यम से बहाया है । जो बिसुनदेवा रूपी समंदर से मिलती है । जैसे – ''आँख मूँदकर गाते हुए बिसुनदेवा के पद का अर्थ गुलकंदी बिलकुल नहीं समझती । पर प्रेम में देह का रूप बदल जाना महसूस करती है । तू भीख माँगता है । या मेरी जान लेता है ? गाया मत कर बिसुनदेवा, मैं तो अपने ही दुख से दुखी··· संग साथ भी कितनी देर का ? क्या द्वार–द्वार संग डोल सकूँगी ? नासपिटे, तू बाजीगर है ? उँगली से उँगली नहीं छूई, फिर, आँखें कैसे जोड़ बैठी मैं ? मैंने किसी से कुछ कहा नहीं फिर मेरी प्रीति को कैसे जान लिया सबने ? तुझे देखने भर की सजा भुगतती हूँ में । देखना भी कोई प्यार होता है ।''[२५]

प्रस्तुत संदर्भ से स्पष्ट होता है कि बिसुनदेवा की प्रेमिका गुलकंदी है । जो अप्रस्तुत रूप में प्यार का इजहार करती है । प्रेमी का बाह्य क्रियाकलाप, प्रेमिका के लिए उत्तेजनात्मक रूप इख्तियार करता है । संपूर्णतः प्रेमी का बनना अनिवार्य हो जाता है । तो 'इदन्नमम' उपन्यास में नायिका मंदा, अपने प्रेमी मकरंद को देखकर इतनी चंचल और भावाविभोर हो जाती है कि आसपास की दुनिया का ख्याल मात्र हो जाती है । ''साइकिल की घण्टी बजी, चौकन्नी हो गई मन्दा । उसने तनिक तिरछे होकर देखा, हाँ मकरन्द आ रहे हैं ।

प्यार और शरारत-भरी निगाहों से देखते हुए न जाने किस अर्थभरी मुस्कुराहट में खिल आए मकरन्द ।

वे जाने लगे । उनकी पीठ पर चिपके चले जा रहे हैं बेचैन पगलाए - से नयन । पुलकित हो उठा है रोम-रोम ! मुस्कुराने लगा है भीतर समाया सब कुछ ।

खड़ी-खड़ी देखती रही । अव्यक्त उमंगों-तरंगों को आँखों में भरे वहीं जमी रह गई जहाँ तक दिखते रहे, देखती रही । जब तक निगह में छाए रहे, पिछियाती रही मन्दा ।''(२६)

''इदन्नमम'' उपन्यास में मन्दा अनेक जगहों पर प्रेम की दिव्य दृष्टि सें अपने प्रिय पात्र मकरन्द के दर्शन करती है । जैसे - ''तुम्हारी बैचेनी, तुम्हारा प्यार ही जीवित रखे है मुझे । उसी प्रेम की दिव्य दृष्टि तुम्हारा दर्शन, तुम्हारा परस कराती है दिन-रात । कोरा कागज भी भेजते तो मैं पढ़ लेती हरफ-हरफ । समझ लेती एक-एक भाव । आज

भी समझ रही हूँ, स्याही से उकेरकर लिखा है वह भी और लिखावट के भीतर बह रहा है वह भी । जीवन के अँधेरों में उजली लकीर की तरह प्रकाशमान हो तुम । निपट अकेली के साथ-साथ रहते हो, हर पल, हर स्थान पर ।''(२७)

प्रस्तुत संदर्भ से ज्ञात होता है कि मंदा एक उन्मत्त प्रेमिका है । जो अपने प्रेमी की हरेक बातों पर, हरेक क्रियाकलापों पर प्रेमरूपी झरने को बहाने में समर्थ हैं । मंदा के जीवन में आफताब की रश्मिओं की कोई गूँजाईश ही नहीं थी । किन्तु मकरन्द के आगमन से मन्दा का जीवन आफताब की रोशनी में पूर्णरूप से प्रकाशमान हो जाता हैं । तो ''बेतवा बहती रही'' उपन्यास की नायिका उर्वशी अपने आप को प्रेमिका के रूप में प्रस्थापित करना चाहती है । सर्वदमन उनकी कल्पना का पुरूष है, हर वक्त उनकी कल्पना में रत रहना उनका कार्य है । जैसे कि - ''अब बातों का सिलसिला अधिक आहलादमय हो गया था । सर्वदमन दोनों के कल्पना पुरूष हो गए । वे रातों को देर तक छत पर बैठने लगी । अब चाँद की जुन्दाई का जादू कुछ दूसरा ही था । अल्हड़ किरणों की शीतलता तन में समाती हुई महसूस होती । गरमी की रातों में हवा की छुअन... मंदिर मधुर ।''(२८)

उपर्युक्त संदर्भ हमे उर्वशी की कल्पनाओं से परिचित करवाता है । क्योंकि उर्वशी के लिए कल्पना ही सहायता प्रदान कर सकती है । कल्पनाओं के सहारे उर्वशी अपने प्यार को अभिव्यक्त कर सकती है । इसीलिए उर्वशी की चाहना उसे प्रेमिका के रूप में परिणत करती है । तो

कहीं आधुनिक विचारधारा को आत्मसात् करनेवाली नारियाँ भी प्रेम के अदम्य प्रवाह में बही है । ''त्रिया-हठ'' उपन्यास की स्मिता एक रूढ़िमूक्त नारी है । किन्तु गौरतलब रूप में देखें तो उसके चरित्र में भी प्यार की जूस्तजु है । जैसे लेखिका स्मिता के माध्यम से प्यार के अभिव्यक्त करती है -''

स्मिता अब गंभीर थी । उसकी गंभीरता और गहन अध्ययन की बातें देवेश को हलका नहीं होने देतीं । यहाँ तक कि जब वह उसका हाथ पकड़ लेती है, सिर से सिर सटा लेती है, बाँहों को घेरा उसके गिर्द लपेट देती है, तो प्यार की अतिशयता बढ़ जाती है, मगर भीतरी उत्तेजना को उसे नियंत्रित रखना होता है ।

''प्यार का यह तुम्हारा अपना ढंग, स्मिता !'' कहकर वह विभोर-सा देखता है ।

''ढ़ंग और भी बहुत हैं प्यार के, हमें कौन-सा ढंग अपना निजी और नया लगता है, वही प्यार को बढ़ाता है । देवेश, जब मैं तुमसे अलग होती हूँ और वक्त पाती हूँ, प्यार को बढ़ाने के बारे में सोचती हूँ ।''(२९)

तो कही ऐसी नारियाँ है । जो जातिवाद के भेद तोड़कर प्यार के बंधन में बँधना पसंद करती है । इसका सजीव दृष्टांत ''अगनपाखी'' उपन्यास की दामिनी है । जो एक अलग जाति है लड़के से प्यार करके उसके साथ जीवन बसर करना चाहती है । जैसे दामिनी कहती है कि -

''मैं मंदिर जाने लगी । घरवाले रोकते तब भी जाती । सामने न जाती, छिपकर जाती । छिप कर न जाने देते, लड़कर जाती । प्रेम था कि पानी का बहाव ? इघर से रोको उधर की सीमा तोड़ दे, उधर से रोको तो इधर की । माँ-बाप की मजबूरी कि जो से कुछ बोल न सके । बदनामी का डर विवाह के डर से बड़ा था । मैंने भी माता-पिता और खानदान की मर्यादा को इतना सहयोग दे दिया कि प्रेम गोपनीय रहे ।''(३०)

उपर्युक्त संदर्भ की पृष्टि के लिए कहना हो तो, दामिनी के प्यार में मिलन को तीव्रता है । एकेश्वरवाद की जूस्तजु है । जो किसी भी दिवार और बंधन को दामिनी सरलता के साथ तोड़ सकती है । क्योंकि उनके अंतरमन में राजेश की आरजु है । इसीलिए दामिनी एक प्रखर और नवोन्मेषक प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत होती है । जिसमें तड़प और कामना समान रूप में विध्यमान है । इस प्रकार पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में ऐसी नारियों को चित्रित किया है, जो अपने-आप में एक विशिष्ट विशेषता के रूप में उद्भाषित होती है । क्योंकि पुष्पाजी ने अपनी आत्मकथा में खुद को एक प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत किया है । इसी वजह से उन्होंने अपने उपन्यासों में नारी के इस रूप को बिना हिचकीचाये और सहजता के साथ प्रस्तुत किया है ।

मनुष्य अनगिनत एवम् अनंत कामनाओं का महासागर है । वह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ चाहता है । प्रत्येक स्त्री-पुरूष के मन में जातीय-विजातीय कल्पनाएँ रहती है । विवाहेत्तर जातीयता का सुख प्राप्त करने की एक सुषुप्त कल्पना एवम् इच्छा प्रत्येक स्त्री-पुरूष में होती है, परिस्थिति के अनुसार यह भावना

व्यक्त भी हो जाती है । कभी-कभी वह अभिव्यक्ति संबंध में बदल जाती है और इन्हीं संबंधों से विवाहित प्रेमिका का स्वरूप शुरू होता है । उपर्युक्त कारणों से विवाहित नारी के प्रेमिका रूप का चित्रण पुष्पाजी के उपन्यासों में देखने को मिलता है । ''विजन'' उपन्यास में लेखिकाने डॉ. नेहा अग्रवाल को विवाहित प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत किया है । नेहा की जुबान में - ''माँ जैसा लाड़ आया अजय पर । कहने का मन हुआ, इतने प्यारे न बनो । प्यारे लोग जल्दी छिन जाते हैं । माइ किस टू यू अजय, मेरा चुम्बन तुम्हारे लिए । मेरे प्राण फूलों से बने हैं अजय, बड़ी जल्दी मुरझा जाते हैं । अपना प्यार इस तरह खर्च मत करो, मुझे इस प्यार की बड़ी जरूरत है ।''(३१)

अपने पतिवर अजय को नशियत देनेवाली डॉ. नेहा प्यार में इतनी रंगमय बन जाती है कि उन्हें चारों ओर वसंत का रसमय मधुमास दृष्टव्य होता है । नेहा से इंग्लिश महिनों के नाम अब हिन्दी में ज्यादा रोमांटिक लगते है । जैसे - ''एक दिन विधि विधान के खुले द्वार से प्रवेश लेते हुए सपने में मेरी आँखें प्रेम से लबरेज हो गयीं । हिन्दी महिनों के नाम इंग्लिश मंथ्स की अपेक्षा रोमांटिक हैं । फागुन से वैशाख तक कितने दिन हुए ? इसका जोड़ कौन लगाये, किन्तु आपकी नेहा के जीवन में वैशाख का अंत वसत का रसमय मधुमय माधव मास था । प्रतीक्षातुर अजय का दर्शन उस रूप में हुआ, जिस रूप में में रति को कामदेव का दर्शन हुआ होगा, राधा को कृष्ण मिले होंगे दमयंती को नल ।''(३२)

प्रस्तुत संदर्भ में स्पष्ट है कि औरत विवाहित होकर भी तृप्ति के लिए तरसती है । ठीक वैसे ही डॉ. नेहा अजय के लिए तरसती है । कामनाओ से अधिक प्यार को सहना नामूमकिना – सा हो जाता है । तो कहीं पर विधवा नारी अपने भीतर की कामनाओं को व्यक्त करने के लिए किसी हद तक गुजर सकती है । उसका उदाहरण "अल्मा कबूतरी उपन्यास में देखने को मिलता है । "अल्मा कबूतरी" में कदमबाई अपने प्रेमी मंसाराम को मिलने के लिए किसी के सामने गिड़गिड़ाने लगती है । कोई भी कार्य करने के लिए तत्पर हो जाती है । जैसे – "खुद को अलग रखकर उन्हें बचाया कि अपने – आपको ? कौन जाने, हाँ बाझ बनने से बचने की जुगत जुटाती रही । अलग रहना आन में शुमार था । अभी तक उसी तरह खुश थी । आज लग रहा है सरमन मुखिया एक दिन के लिए अपनी सजा वापस ले ले । बस एक साँझ दारू बना लेने दे । वह उसकी औरत के लत्ता–कपड़ा फींचेगी, झाडू–बुहारी कर देगी, उसका आँगन लीपेगी । और भी चाहिए तो लकड़ी बीनकर जो कमाएगी, वह भी दे देगी । बस एक दिन भट्टी चढ़ा लेने दे कि मंसाराम मद पीने चले आएँ । और राणा की माँ उन्हें अपने संग–संग खुशी में डुबो ले । मन की तरंगें कंठ में आवाज बनकर अकुला रही हैं ।"(३३)

उपर्युक्त संदर्भ में कदमबाई को प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है । क्योंकि प्रेमी से मिलन हो और उसकी निकटता पा सके इसीलिए, वह मुखिया का कोई भी काम करने के लिए तैयार है । यदपि चाहना की कोई सीमा या बंधन नहीं होता है । वह विस्तृत आकाश की

तरह फैली है । इस बात की पुष्टि कदमबाई के माध्यम से सिद्ध होती है । तो दूसरी जगहों पर लेखिका ने विवाहित स्त्री और अन्य पुरूष का मिलन क्या प्यार है ? या कामना । वहीं बात को स्पष्ट करने की कोशिश की है । ''कहीं ईसुरी फाग'' उपन्यास की नायिका 'रजऊ' विवाह के बंधन में बँधी है । किन्तु कामना अन्य पुरूष की करती है ।

जैसे रजऊ कहती है कि – ''नहीं जानती कि जो कुछ उसे खींच रहा है, उसका असलियत में नाम क्या है ? प्यार –मोहब्बत, बदचलनी, लालसा या बदनामी ? उसके मन में ऐसा बहुत कुछ चलता है, जिसे लोग अपनी–अपनी तरह से अलग–अलग नाम देते हैं । पर वह तो फगवारे से मिलने के लिए तरस रही थी । यही प्यार की सबसे बाँकी अदा है, उसका प्यारा अहसास था ।''(३४)

''कही ईसुरी फाग'' उपन्यास में कहीं–कहीं पर रजऊ फगवारे की फाग सूनकर, तड़पन महसूस करती है । उनके प्यार में इतनी शिद्धता है कि प्रस्तुत करना असंभव–सा है । जैसे – ''फाग सुनकर रज्जो खटिया से तड़पकर उठी और खड़ी हो गई – फगवारे, हमने तुमसे प्रेम किया या तुमने हमसे ? प्राण जुड़ाने के लिए हुआ था अपना मिलन, पर तुम कहते हो कि मैं प्राण खाए जाती हूँ । मेरे नैना कसाई नहीं, मेरे ही खून का ताल बन गए हैं । न यकीन हो तो गुड़हलसी आँखे देख लो ।''(३५)

रजऊ के प्यार में इतनी तन्मयता है कि फगवारे की फाग सुनकर, खुद पर नियंत्रण खो देती है । अप्रत्यक्ष या अप्रत्याक्षित रूप से वह, भावाविभोर हो जाती है । कि उसे विवाहित नारी होने का ऐहसास ही

नहीं होता है । तो कहीं ऐसी ही परिस्थितियों को दोहराया गया है । ''इदन्नमम'' उपन्यास में लेखिका ने ऐसे ही नारी पात्र को प्यासी प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है । कुसुमा भाभी, जो पति द्वारा त्यक्ता है । सामाजिक तौर पर पत्नी पद अवश्य पाती है । किन्तु आंतरिक रूप से प्यासी ही है । जैसे – ''दाऊजू ने झूमकर भाभी को बाँहो में बाँध लिया ।

''कुसुमा, अकेली सीता जू धरती में समा गई थीं । हम तुम्हें भूमि समाधि नहीं लेने देंगे । देह धरी है तो देह का हक्क भी होता है कुसुमा ! देह की जरूरत भी ।''

दाऊ जी, तुमने तो पूरे सुखसागर का सत्त निचोरकर घट भर लिया ! मरम छू लिया दाऊ जू ! यह ककराभरी छत नरम गदेला हो गई ! पोर–पोर से नेह निचुरता है । कुसुम भाभी नाजुक बेल–सी लिपटी हैं ।

''पगलू, हमने तो अब जाना है कि औरत धरती जैसी होती है । सारे भार को फलों की तरह समेटती हुई इमरतदान देती है आदमी को ।''(३६)

प्रस्तुत संदर्भ से परिलक्षित होता है कि कसुमा भाभी एक रूढि मुक्त प्रेमिका के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरी है । जो सामाजिक नीति–नियमों के दायरे में रहकर भी निषेधों को तोड़ती है । कहने मात्र के लिए पत्नी है किन्तु पति का कामनीय सुख भाग्य की रेखाओं में गठित नहीं था । परंतु दाऊ जू के माध्यम से परितृप्त हो जाती है । इस प्रकार कहना हो तो, कुसुमा भाभी एक मुक्त प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत होती है ।

दशवें दशक के हिन्दी उपन्यास साहित्य जगत् में मैत्रेयी पुष्पा का सशक्त नारीवादी लेखिका के रूप में अविर्भाव हुआ है । उन्होंने नारी को पृथ्वी स्वरूपा माना है । उनके उपन्यासों में नारी माँ, पत्नी एवं प्रेयसी तीनों रूपों में महान हैं । इन तीनों शाश्वत रूपों में वह नारी की महानता के गुणगान गाती है । उन्होंने नारी के मातृरूप को ममता, वात्सल्य, स्नेह, सेवा आदि का मूर्तिमंत रूप मानकर उसका चरित्र चित्रण किया है ।

पत्नी के रूप में पुष्पाजी की नारियाँ परंपरागत आदर्शों का निर्वाह करती है । तो कही पर पुरूषप्रधान समाज-व्यवस्था विध्वंश करने के प्रयत्न भी करती है । पतिव्रता नारी संपति-विपति, सुख-दुःख, जीवन-मरण में पति का साथ देती है । श्रद्धा एवं भक्ति से सदैव पति की सेवा में तत्पर रहती है । साथ ही यह भी दिखाया है कि जो स्त्रियाँ भोग-विलास को महत्व देती है उनका जीवन बरबाद हो जाता है । मैत्रेयी पुष्पा की नारियाँ पत्नी के रूप में एक ओर पति की अनुगामिनी है तो दूसरी ओर अपनी मुक्ति के लिए छटपटाती है । वह परंपरागत आदर्शों में बँधी है किन्तु साथ ही नवीनतम प्रवृतियों से प्रभावित होकर स्वयं पर हो रहे अत्याचारों का विरोध भी करती है ।

प्रेमिका और प्रेयसी के रूप में पुष्पाजी की नारी पुरूष की प्रेरणा शक्ति है । समाज में स्वच्छन्द प्रेम की बढ़ती हुई प्रवृति का चित्रण भी उन्होंने किया है । इतना ही नहीं प्रेम एवं स्वच्छंद प्रेम का समर्थन भी किया है किन्तु भारतीय आदर्शवादी विचारधारा के अनुसार प्रेम में

आत्मसमर्पण और नि:स्वार्थ भावना को आवश्यक माना है । वे नारी को प्रेमिका रूप में शारीरिक संबंध को भी उचित ठहराती है ।

समग्र रूप से दृष्टिपात करे तो, पुष्पाजी ने पारिवारिक संबन्धों को सुद्दढ़ बनाने की जिम्मेदारी नारी के इन शाश्वत रूपों की मानती है ।

३.४ विधवा के रूप में नारी :

नवम् एवं दशम्, दशक के हिन्दी उपन्यासों में मुख्यरूप से नारी के चरित्र को प्राधान्यता दी गई है । इन में विशेष रूप से नारी के विविधरूपों को चित्रित करने का प्रयास किया गया है । उपन्यासकारों की दृष्टि मुख्यत: स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों को उद्घाटित करने पर रही है । समाज में विधवा की समस्या उतनी भयावह नहीं है जितनी स्वतन्त्रता के पूर्व थी । आज विधवाओं में प्राचीन मान्यताओं के प्रति आस्था कम रही है । पुनर्विवाह को आज समाज स्वीकृति दे रहा है । आर्थिक दृष्टि से आज की विधवा स्वावलम्बी बनती जा रही है । कामकाजी नारी होने के कारण आज विधवा की यौन सम्बन्धों के प्रति दृष्टि स्वच्छन्द बनती जा रही है । फिर भी विधवा अपने पति को नहीं भूल पाती है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में ऐसी विधवा नारियाँ को प्रस्तुत किया है । जिनमें विधवाओं की कामनाओं एवम् ईच्छाओं को जींवतरूप से उद्घाटित होते है । जो साम्प्रत समय में पीड़ित एवम् कुण्ठित है । उन्होंने प्रदेश विशेष के वातावरण को जीवंत रखने के लिए, ऐसी

नारियों को चित्रित किया है । जो सहि अर्थों में अंचल-विशेष की विधवा नारी है ।

"चाक" उपन्यास में पुष्पाजी ने अंतरपुर के भौगोलिक परिवेश एवं सामाजिक परिवेश के अनुसार विधवा नारी को सुक्ष्म-से-सूक्ष्म रूप से प्रदर्शित किया है । "सारंग" की फूफेरी बहन रेशम जब विधवा होती है । तब उनके लिए पारिवारिक निषेध बनाएँ जाते है । किन्तु रेशम अपने अस्तित्व पर कायम रहने के लिए प्रयत्नशील रहती है । जैसे - "रेशम विधवा थी - जमाने के लिए, रीति-रिवाजों के लिए, शास्त्र-पुराणों के चलते घर और गाँव के लिए । विधवा सिर्फ विधवा होती है । वह औरत नहीं रहती फिर । यह बात पता नहीं उसे किसी ने समझाई कि नहीं ? किसी ने कहा नहीं कि इच्छाओं के रेशमी तारों में आग लगा दे रेशम ? उसने तो केवल इतना माना कि पेड़ हरा-भरा रहे तो फूल-फल क्यों नहीं लगेंगे ? ऐसा हो सकता है कि ऋतु आए और बल्लरी लता फूले नहीं ? औरत ऋतुमती हो और आग दहके नहीं ?"[३७]

प्रस्तुत संदर्भ में रेशम का विद्रोह भाव छिपा हुआ है । क्योंकि विधवाओं के लिए माँ बनना मान्य नहीं है । किन्तु रेशम विधवा होकर भी माँ बनने का अपराध करती है । अपने आप को वृक्ष के समान यानी फूल-फल देनेवाला पेड़ समझती है । किन्तु सामाजिक निषेधों में वह स्वीकार्य नहीं है । तो दूसरी ओर विधवा स्त्री को अमंगल या अशुभ समझा जाता है ।उनको राच्छसों के समान गिना जाता है परंतु क्या राच्छसों में आत्मा नहीं है । उनकी इच्छाओं की तृप्ति नहीं होनी चाहिए ? रेशम भी अपने अंदर के मातृत्व भाव के प्रदर्शित करना चाहती है ।

किन्तु समाज उसे स्वीकार नहीं करता है । जैसे – ''रेशम सारंग को सुनाती है, 'बीबी, वे लोग कभी मुझे देबी बनाते हैं तो कभी राच्छसी । देबी तो पत्थर की होती है, मैंने कह दिया । उसका ठौर मंदिर में होता है और राच्छसी लोगों का सत्यानाश करती है । मैं दोनों की तरह की नहीं हाड़–मांस की बनी लुगाई, जिसके पेट में बालक है, उस पर या तो जल–दूध ढारेंगे या फिर ... मैं कहती हूँ तुम मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो । मेरी छातियों का दूध मत सुखाओं । अपनी नाँद पर चरती गाय – भैंसों से भी गई – बीती करके मान रहे मुझे । रंडी सास अपने पूत को तो रोती है और मेरे बालक की हत्या पर उतारू है ।''[३८]

उपर्युक्त संदर्भ हमें विधवा नारीओं की कामनाओं के विषय में सचेत करता है । विधवाओं की ईच्छाओ को समाज की परिपाटी पर विध्वंश जरूर होता है । परम्परा वह छत उपलब्ध कराती है जो हर वर्षा, धूप, जाड़े, तूफान से रक्षा करती है और आधुनिकता वह सीमाहीन आकाश है जहाँ मनुष्य स्वच्छंद भाव से उड़ान भरता है । और अपने स्व का लोहा मनवाता है । अब स्त्रियाँ परंपरा रक्षित उस घर में कैद नहीं रहना चाहती हैं जो उनकी सुरक्षा के नाम पर उन्हें बंदी बनाता है आधुनिकता में स्वतंत्रता के तमाम जोखिम हैं और समाज इतना सहिष्णु नहीं कि जब तब कछुआ – धर्मिता की स्वतंत्रता दे सके । परंपरा की तुलना उस जेल से कर सकते हैं । जिसके विषय में अमृता प्रीतम कहती हैं – ''जेल के बाहर डर है, भूख है, जहालत है और अन्दर सांस घुटती हैं । सब की सब औरतें बिलखकर कह रही हैं, हमें यहाँ से बाहर न

निकालिये और सबकी सब औरतें जैसे बिलख कर कही रही हैं हमे जैसे भी जहाँ से बाहर निकाल दिजिए ।''(३९)

इसीलिए पुष्पाजी ने 'इदन्नमम'' में बऊ नामक चरित्र के माध्यम से विधवा नारी को परम्परागत रूप में चित्रित किया है । घर की इज्जत, मान-मर्यादा, नैतिकता, इहलौकिक - परलौकिक प्रतिष्ठा सभी का वास स्त्री के शरीर में परंपरा से स्वीकृत है । ऐसे संजोगवत् ''बऊ'' विधवा हो जाने पर भी आजीवन पति की देहरी से बंधी रहती है । निपट बचपन में ही जिस घर में ब्याहकर आई, उसकी प्रतिष्ठा में कहीं दाग न लग जाये । इसलिए कम उम्र में विधवा होने के पश्चात वे अपनी समस्त ईच्छायें उसी देहरी के लिए कील देती है । बऊ देहरी की आन टूटना बर्दाशत नहीं कर पाती, इसलिए जीवनभर प्रैम को क्षमा नहीं कर पाती । यही बात बऊ मंदाकिनी से अपना पक्ष स्पष्ट करते हुए कहती हैं - ''बऊ ने दोनों घुटने सीधे कर लिए, ''राँड़ - विधवा तो हम भी हुए थे बेटा ! और चढ़ती उमर में हुए थे । जनी के लाने आसनाई करनेवालों की कमी नहीं होती । पर हम जानते थे ऊँच-नीच । बात को परखने की बुद्धि नहीं खोई थी हमने । जाहिर थी यह बात कि उन दुष्टों की आँख हमारी देह और जायदाद पर थी ।

''तुम बच्चा हो हमारे लेखें, तुम्हे का - का बता देवें ? कैसे-कैसे कपटी अन्यायियों को झेला है हमने । कैसे - कैसों से जडड् ली है । इतेक जिन्दगानी ऐसे ही नहीं काढ़ी । हँसी-खेल नहीं है विधवा जनी

का इज्जित–आबरू से रहना, अपनी देहरी की नाक को सूधी रखना । ऐन भोगना भोगी हैं, पर मजाल है कि को ऊँगरिया उठा जाए ।

अरे ऐन वे मीत हमें जान–पिरान से चाउते, धरती–आकास जोरते, तो भी हम टीकमगढ़ रियासत के मंसबदार अपने पिता रघुराजसिंह और मालिक घनी सुभागसिंह की परजाद में दाग न लगने देते ।''(४०)

प्रस्तुत संदर्भ हमें विधवा नारी के परम्परागत भाव से परिचित करवाता है । क्योंकि विधवा नारी के लिए जो सामाजिक निषेध बनाएँ गए है । उसकी स्तरियता पर ही जीवन–यापन करना अनिवार्य है । ऐसा करना सहज ही नहीं किन्तु सामाजिकता के तौर पर आवश्यक ही है । 'बऊ' के विधवा चरित्र पर परम्परा का भाव जरूर ही निहित है । वह किसी भी परिस्थिति में परम्परा से विमुख होना नही चाहती है । ऐसा करना यानी खुद के चरित्र को कलंकित करना ही है । तो दूसरी ओर बऊ की पुत्रवधु 'प्रैम' जो एक–नारी ही है । किन्तु उनके चरित्र में परम्परा की गठनता नही है । वह एक आधुनिक विधवा नारी के रूप में उपन्यास में वर्णित हुई है । उन्होंने परंपरा से हटकर अपने पक्ष का निर्माण किया है । समाज ने विधवाओं के लिए बनाएँ कायदे–कानून को तोड़कर स्वच्छंदता में विहरने की कोशिश की है । जैसे मंदाकिनी का अभिप्राय है कि –'' क्या पता बऊ को यही दु:ख हो कि वे विधवापन के लिए बनाए गए निषेधों को सहती–झेलती रहीं, अम्माने जिन्हें नकार दिया । जिन दैहिक सुखों को बऊ ने इच्छा या अनिच्छा से कुचला, उन्ही को अम्मा ने जरूरी समझ लिया । उनका गम यह भी हो सकता है कि विधवापन के चलते सामाजिक विधान की भागीदार वे ही अकेली

क्यों हुई ? यह दंड उनकी बहू ने क्यों नहीं भोगा ? हवेली की मर्यादा की रक्षा में होम होने की सजा केवल उनके लिए और जायदाद का बँटवारा बराबर-बराबर ! यह कहाँ का न्याय है ?''(४१)

'इदन्नमम' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने 'प्रैम' को विधवा नारी के रूप में चित्रित जरूर किया है । किन्तु वास्तविक रूप सें वह विधवा होकर भी वैधव्यपन के नियमों में रहना नहीं चाहती । वह परम्परा को तोड़कर, एक नया पथ कायम करने की कामना करती है । जो आजतक विधवाओं को यातनाएँ, पीडाएँ और कुण्ठित किया जाता है । ये सारे सामाजिक बंधनों को तोड़कर, विधवा के लिए मुक्ति की पथ प्रदर्शिका बनना चाहती है । इसीलिए उन्होंने 'इदन्नमम' उपन्यास में स्वच्छंद या रूढिमुक्त विधवा नारी के रूप में कायम रहना अनिवार्य समझा, बऊ ने जहाँ वैधव्यपन के निषेधों में बँधना चाहा । वही प्रैम ने वैधव्यपन के निषेधों को तोड़कर, स्वच्छद चरित्र को पाठ़को के सामने प्रदर्शित किया है । दरअसल प्रैम विधवा नारी है । किन्तु विधवा बनकर, बाध्य रहना नहीं चाहती ।

मैत्रेयी पुष्पा ने ''झूलानट'' उपन्यास में बालकिशन की माँ को परम्परागत विधवा नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है । बालकिशन की माँ ने विधवा रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण करके, बिना मर्द की इज्जतदार जिन्दगी यापन करती है । पुत्रवधु की उपेक्षा उसे दुखित करती है । जब अपने हाथों की नस काटती है । तब अम्मा अपने भीतरी आवेग को व्यक्त करते हुए कहती है कि - 'अम्मा आँखे' निकालकर देखती रह गईं । मर्द... इज्जत... परवाह जैसे आखर बुदबुदा रही थीं । जोर

से यह भी बोलीं कि लला आबरू के घंटे तो हम जनियों के गले में ही लटक रहे हैं, जिन्हें उतारने बने, न ढोते । वह जानता है, अम्मा लाचार हैं । सुमेर भइया की करनी का घड़ा अपने गले में बाँधकर डूबी जा रही हैं । विधवा रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण, बिना मर्द की इज्जतदार जिंदगी ! लुट गई वे । एक पल को रास्ते में ठिठका था बालकिशन, गाँव के नर-नारी ? बैपैसे का तमाशा... बेभाव का दया तरस ।''(४२)

उपन्यासकार ने बालकिशन की माँ को परम्परागत विधवा नारी के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर सँवारा है कम उम्र में विधवा होकर, भी सामाजिक निषेधों में रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण किया था । विधवा नारी की यातना को सहकर समाज में प्रतिष्ठा बरकरार रखी थीं । जहाँ पर ''इदन्नमम'' की प्रैम एक आधुनिक विधवा नारी है । तो 'झूलानट' की बालकिशन की माँ परंपरा से बंधी विधवा नारी है । जो आधुनिक भारतीय विधवा संस्कृति की चौखट का उल्लंघन कर ही नहीं पाती है । वह परम्परागत विधवा नारी भारतीय आदर्श को सामने रखकर अपने स्त्रीत्व की रक्षा करती है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने ''बेतवा बहती रही'' उपन्यास में उर्वशी को विधवा नारी के रूप में चित्रित किया है । उर्वशी का ब्याह सर्वदमन के साथ हुआ था । किन्तु यह सुख क्षणिक ही रहता है । दुर्घटना में सर्वदमन की मृत्यु हो जाती है । जिन कामनाओं और स्वप्नों को सँजाया था, वे नष्ट होते हैं । विधवाओं के लिए बनाये गए निषेधों के अनुसार अपने आप को प्रस्तुत करने की कोशिश करती है । जैसे कि - ''उर्वशी गिरती - कराहती उसके समक्ष लाकर खड़ी कर दी - सफेद सूती

धोती–ब्लाउज, नंगे – उजाड़ हाथ, बिछिया सुती पाँवों की नंगी उँगलियाँ, उसके वैधव्य पर बिसूरती हुई ।

जिस कोठो में सर्वदमन के साथ रहती थी, उसको त्याग दिया उसने उस घर को छोड़ दिया । पुराने कच्चे घर में चटाई पर बैठी दिन–भर दीवारों को आँखे फाड़े देखती रहती । अभिशप्त जीवन के अँधेरे सुरग द्वार खुल गये ... किसने वध कर डाला उसे कपोत का... ? आते जाते भाव मन को रौंदते रहते । न धीरज, न शान्ति ।''(४३)

तो कही ऐसा समाज है जो शुभ कार्यों में विधवाओं का सम्मलित होना अशुभ मानते है । क्योंकि समाज की मनःस्थिति के अनुसार विधवाओं का आगमन कार्य सिद्धि में बाँधा डालता है । जिसका शिकार समाज की विधवा नारियाँ होती है । इसका सशक्त उदाहरण उर्वशी है । जो विजय की शादी में सम्मलित जरूर होती है । किन्तु सामाजिक अनुष्ठानों में नहीं । जैसे कि – ''उर्वशी नहीं गयी । सोचती ही रह गयी घर के भीतर – कैसी पगली है मीरा ! समझती ही नहीं । सगुन–सात की बेराँ कैस जाय वह ? कोई टोक धरे तब ? मीरा नहीं जानती कि सुहाग–भाग में उसके जाने निषेधाज्ञा है ?''(४४)

उपर्युक्त संदर्भ में उर्वशी की बेबशी को बँया किया गया है । जो विधवा नारी है, उनके लिए शुभ कार्यों में जाना वर्जित नहीं है । उक्त संदर्भ समाज का पुरानी मानसिकता का ख्याल स्पष्ट करता हैं ।

''बेतबा बहती रही'' उपन्यास की दूसरी विधवा नारी के रूप में विजय की पत्नी है । जो कम आयु वैधव्य को प्राप्त करती है । विधवा

होना एक अभिशाप ही है । लेकिन उससे भी बेहतर विधवा बनकर जीवन यापन करना । किन्तु वैधव्य क्या है ? दरअसल वैधव्य से ही उनकी यातना का पता चलता है । जैसे – ''बेटी अब यहाँ बहू थी । चुपचाप बैठी थी वह । नव घूँघट न आड़ा । यह भी नहीं जानती थी कि पति के निधन पर कैसे रोये ! चूड़ी तोडने को कहा तो चुपचाप दोनों हाथ आगे कर दिये... काँच की चूडियाँ छन्न–छन्न टूटती रहीं । बहू देखती रही – निर्निमेष ! बड़ी–बड़ी आँखों की सीपियाँ घनी बरौनियों के बीच भर आयीं । पाँव की उँगलियों पर किसी का हाथ गया बिछिया उतारते ही दहाड़ मारकर रो उठी ।(४५)

प्रस्तुत संदर्भ हमें कम आयु ब्याही स्त्रियाँ जो आकस्मिक रूप में विधवा होती है । तब उन पर समाज का अमानुषिक व्यवहार कैसा रहता है, उनकी झाँकियाँ उक्त संदर्भ प्रस्तुत करता है । दरअसल समाज में आधुनिक विचारधारा का अभाव रहा है । यही बात यहाँ पर स्पष्ट होती है । आज भी लोग पुराने ख्यालात में विचार विमर्श करते है । तो कहीं पर लेखिका ने विधवा नारी को आस्थावादी चरित्र के रूप में प्रस्तुत किया हे । 'अगनपाखी' उपन्यास में 'नानी' (भुवन की माँ) जो एक विधवा नारी है । उन्होंने ताउम्र बड़ी जददोजहद के साथ बितायी है । विधवा होकर भी अपने पति और घर की देहरी की इज्जत को बरकरार रखी है । फिर भी बुढापे में अपनी तकदीर को कौंसती है । जैसे – ''परमेसुर, बाप कतल हो गई मताई बिटिया अकेली रह गई । खेती पाती माँ ने अकेले सँभाली । बैल की जगह बैल बनी, आदमी की

जगह आदमी । किसान की विधवा की जिन्दगानी मजूरनी से बुरी होती हे पर मोरे देवता, बुढ़ापे में भी खाक पड़ेगी, सो न पता था ।''(४६)

''अगनपाखी'' उपन्यास में भुवन की माँ (नानी) आस्थावान विधवा नारी है । उनके जीवन का हरेक मोड़ जददोजहद के साथ गुजरा है । फिर भी अंतत: वह दुखित रही थी । इसीलिए उन्होंने भगवान पर आस्थावादी दृष्टिकोण अपनाया है ।

''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास सें लेखिका ने भूरी को संकल्पसिद्ध विधवा नारी के रूप में प्रणयन किया है । पति के मौत के बाद बेटे के लिए कोई भी कार्य करने के लिए तत्पर हो जाती है । सामाजिक की सिस्टम को पूरी तरह बदलने का मंशुबा रखती है । वह कोई भी खतरा उठाने के लिए सहज हो जाती है । जैसे कि अपने बेटे रामसिंह को पढ़ाने के वास्ते देह व्यापार के लिए भी तत्पर हो जाती है । जैसे – ''भूरी अंधी की तरह चार महीने के रामसिंह को गोद में लेकर वीरसिंह के ध्यान में खड़ी थी । खड़ी–खड़ी कौल भर रही थी – पति – विरता लुगाई अपने आदमी के संग सती है । मैं अपने मर्द की ब्याहता खुद को तब मानूँगी, जब रामसिंह को पढा–लिखाकर इसी कचहरी के दरवाजे खड़ा कर दूँगी । भले इस सफर में मुझे दस मर्दों के नीचे से गुजरना पड़े ।''(४७)

लेखिका के कथन का तात्पर्य यही है कि भूरी विधवा जरूर हुई है । किन्तु वह संकल्पसिद्ध विधवा नारी के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि में उभरी है । जो बेटे के विकास पथ के लिए निरंतर प्रयासरत रहती है । जिंदगी में आनेवाली हर एक परिस्थिति का सामना करने में खरी उतरी

है । बेटे के उज्जवल भविष्य के लिए देह व्यापार करने में हिचकिचाती नहीं है । कहीं पर लेखिका ने नवोढ़ा अल्मा को विधवा नारी के रूप में बड़ी कठोरता के साथ प्रस्तुत किया है । पति सुख अल्मा के लिए पानी के बुदबुदे के समान है । पूरे जीवन में दु:ख के सिवा कुछ नहीं मिला । किन्तु पति सुख क्षणिक होकर कष्टदायक परिणत होता है । जैसे लेखिका के शब्दों में – '' कौन है यह, इधर ? श्रीराम शास्त्री की औरत ।

– हाय विधवा ! इतनी कम उमर में विधवापन !

अल्मा भयार्त आँखों डगमगाती हुई चली आ रही है । सफेद साड़ी का पल्ला सिर पर और बाल खुले हुए, साक्षात सरस्वती करती हुई.. संतोले बाँह पकड़कर साधे हुए साथ चल रहा है ।

सावित्री सती–सी दुल्हन लाश के पास सिर झुकाकर बैठ गई ।[४८]

भारतीय संस्कृति में समाज को महत्वपूर्ण इकाई के रूप में प्रस्थापित किया गया है । क्योंकि समाज सभी वर्ग, सभी धर्म के लोगों का मुख्य सुत्रधार है । किन्तु समाज का विधवा स्त्रीओं पर कड़ा रूख रहा है । निश्चित परिपाटी के अंतर्गत विधवाओं को बाँधा गया है । प्रस्तुत कैद से मुक्ति के लिए विधवाएँ प्रतिदिन संघर्षरत रहती है । लेखिका ने ऐसे भावों को 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में प्रदर्शित किए है । रज्जों की सास, जो कुण्ठित विधवा नारी है । उसके अभागेपन की पीड़ा को कोई अच्छी तरह समझ नहीं पाता है । – ''सास आँखों में आँसू भरकर भरे गले से कह रही थी – हम तो अभागे हैं, बेटा । अभागा आदमी तकदीर

से लड़ते–लड़ते चिड़चिड़ा जाता है । अकेली रांड़ विधवा जनी का दुख तुम कैसे जानोगे ?''(४९)

उपर्युक्त संदर्भ के माध्यम से लेखिका कहना चाहती है कि समाज की पुरानी मानसिकता पर आधुनिक विचारधाराओं का प्रभाव नहीवत मात्रा में रहा है । जिसकी बदौलत आज विधवाओ को शोषित एवम् कुण्ठित किया जा रहा है । जिसका सशक्त उदा. रज्जो की सास है । जो पति की मृत्यु के बाद बेटे का लालन – पालन करते – करते अभागेपन की गिरफ्त में कैद हो जाती है ।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में विधवा नारियों को वाचा प्रदान की गई है । चाहे वह अस्तित्व के लिए लड़ती हो या फिर मान–सम्मान और इज्जत के लिए । तो कहीं – कहीं पर विधवा नारी ने परम्परागत परिवेश को परास्त किया है । जिनका सही दृष्टांत ''इदन्नमम'' उपन्यास की प्रैम (मंदा की माँ) और ''चाक'' उपन्यास की रेशम (सारंग की फूफेरी बहन) । इन दोनों चरित्र में विद्रोह के भाव पड़े है । जिन्होंने वैधव्यग्रस्त जीवनयापन करना असहनीय समझा है परिणामतया आधुनिक विचारधाराओं से प्रभावित होकर विद्रोह करती है ।

मैत्रेयी पुष्पा मुख्यतया नारीवादी लेखिका है । उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से नारी सशक्तीकरण की भावना को उजागर किया है । इसीलिए उन्होंने अपने उपन्यासों में विधवा नारियों को चित्रित करके समाज की रूग्ण मानसिकता पर कड़ा व्यंग्य किया है । पुष्पाजी

के सभी उपन्यासों में विधवा नारी की दारूण परिस्थिति का सुक्ष्म–से–सुक्ष्म रूप में चित्रण हुआ है । इसीलिए वह पूर्णरूप से नारीवादी लेखिका के रूप में प्रस्थापित होती है ।

३.५ धर्मगत नारी : (धार्मिक क्रिया–कलाप करती नारी)

जन्म के समय मनुष्य मात्र एक प्राणी ही होता है । प्रत्येक प्राणी की कुछ मौलिक आवश्यकताएँ होती हैं जो उसकी सामाजिक संरचना पर आधारित है । मनुष्य की तीन मौलिक आवश्यकताओं के अतिरिक्त भी अनेक आवश्यकताएँ होती हैं जिनकी पूर्ति वह सामाजिक प्राणी बनकर ही करता है । इन आवश्यकताओं की पूर्ति के मार्ग अनेकों हो सकते हैं । किन्तु वे सभी मान्य ही होंगे यह संभव नहीं है । मनुष्य के व्यवहारों की कोई संख्या निर्धारित नहीं की जा सकती है । आवश्यकता पूर्ति के मार्ग भी अलग–अलग होते हैं तथा उनका उद्देश्य भी अलग–अलग होता है । जिन पर नियंत्रण करने से ही एक सामाजिक व्यवस्था स्थिर रह सकती है । राज्य और कानून व्यक्ति के बाह्य व्यवहारों पर ही नियंत्रण कर सकते हैं, आन्तरिक व्यक्तित्व पर नहीं । व्यक्ति हृदय से जिन आदेशों को सर्वाधिक मानते हैं, वे धार्मिक आदेश ही है । प्रत्येक समाज में धर्म और धार्मिक विश्वासों का इतना अधिक महत्व है कि कोई भी व्यक्ति इनकी अवहेलना करके, समाज से अनुकूलता करने में कठिनाई का अनुभव करता है । धर्म ही व्यक्ति को नियंत्रित रखने का सशक्त माध्यम है । धर्म ही व्यक्ति के मानस पर पाप एवं पुण्य को प्रतिबिम्बित करता है । इसीलिए धार्मिक क्रियाओं का धर्म से घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है ।

जिस प्रकार भारतीय दर्शनशास्त्र में नवधाभक्ति के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है । उसी प्रकार मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य में भक्ति या धार्मिक बाबतों का आंशिक मात्रा में निरूपण किया है । किन्तु उन्होंने धार्मिक अनुष्ठानों एवम् भक्ति साधनाओं को ग्रामीण और आँचलिक परिवेश के अनुरूप ढालने का प्रयत्न भी किया है । उन्होंने "चाक" उपन्यास में स्त्रियों की धार्मिक चहल-पहल को चरितार्थ किया है । 'खेरापतिन' दादी, जो उम्र में सबसे बड़ी है । वह ग्रामीण औरतों को करवाचौथ की महत्ता से परिचित करवाती है । "अंत में खेरापतिन दादी हाथ जोड़ती हैं, आँखें बन्द करती हैं - हे मेरी करवाचौथ मइया, तू साल की साल आ । जैसी बीजा बहन की घड़ी फेरी सबकी हजारी उमर कर ।

औरतों ने पल्ले डालकर खेरापतिन के चरण छुए । हाथों में कलाए बँधवाए । करवे की महत्ता समझाती है दादी । बंस बढ़ोत्तरी की निसानी है करवा सालभर तक सँभालकर रखना ।"[५०]

दूसरी जगहों पर लेखिका ने त्यौहारों में होनेवाले अनुष्ठानों का सजीव निरूपण किया है । "चाक" उपन्यास में सारंग, दीपावली के दिनों धार्मिक अनुष्ठानों के लिए सज्ज हो जाती है । पूरे घर - आँगन को सजाकर धार्मिक अनुष्ठान करती है । जैसे - "दीवाली के दिन घर आँगन लीपा । चौका-चूल्हा सहेजा । पूरी पकवान का दिन है दीवाल सारंग सबेरे से लगी है ।

एक दीपक सास के थान पर । दूसरा गाँव के सिवाने पर, तीसरा पथवारी पर । चौथा खेत में । पाँचवाँ मंदिर पर । छठा घेर में'' (५१)

इस प्रकार लेखिका ने खेरापतिन दादी और सारंग नैनी को धार्मिक नारी के रूप प्रस्तुत किया है । जो अवसर एवम् परिस्थितियों के अनुसार धार्मिक अनुष्ठान करती हुई दृष्टिपात होती है ।

मूलतः स्त्री का हृदय धार्मिक होता है । पाप और पुण्य की परिभाषा को स्त्री हंमेशा आत्मसात करती है । जिसकी वजह से धर्म के साथ स्त्री लगाव अधिक रहता है । ''इदन्नमम'' उपन्यास में प्रैम भौजी अपनी मंदा के उज्जवल भविष्य के लिए विभिन्न धार्मिक क्रियाएँ करती है । जैसे – '' अक्षरादेवी, रक्तदन्ता देवी, ऐसे ही नाम थे शायद । वहाँ गए थे हम लोग । अम्मा ने सैयद बाबा के चबूतरे पर मनौतियाँ मानी थीं । नारियल चढ़ाया था । पेड़ से पटका बाँधा था । परसाद बाँटा था ।''(५२)

उपन्यास के अन्य भागों में कई स्त्रियाँ ऐसी धार्मिक क्रियाओं में व्यस्त दृष्टव्य होती है । जैसे कुसुमा उपन्यास का विद्रोही स्त्री चरित्र है । किन्तु वह भी धार्मिक क्रियाओं में तन्मयता के साथ रत होती दिखाई पड़ती है । जैसे – ''भाभी भोर से ही नहा लीं । सूरज भगवान को जल ढार रही हैं । नीचे की माटी माँग से छुआ ली । तुलसी ढारीं, परिक्रमा की । आँखे बन्द किए खड़ी हैं ।''(५३)

प्रस्तुत संदर्भों में स्त्री के चरित्रों में धार्मिकता टपकती हैं । क्योंकि जहाँ प्रैम अपनी बेटी के लिए पूजा–अर्चना करती है । वहाँ कुसुमा खुद

के वीरान जीवन में हरियाली की कामना के लिए पूजा-अर्चना करती है । किन्तु दोनों के चरित्र में धार्मिकता जरूर विध्यमान है ।

कहीं पर लेखिका ने पूरानी मान्यताओं को कायम करते हुए धार्मिक भावना को उजागर किया हैं । ''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास में राणा जब बीमार हो जाता है । तब भजनी पर भूत-प्रेत छायाँ समझकर, धार्मिक अनुष्ठान करने लगती है । जैसे कि - ''अंट-बंट बर्रा रहा है राणा ! भजनी आई और अपने बूढ़े कान राणा के होठों पर बिछा दिए ।

जमुनी... जमुनी.. जमुनी...

भजनी एकदम से पीछे हट गई ''हाय देवी माता, जमुनी चुड़ैल ने घर दबाया ।'' भजनी भूत-पिशाचों पर विश्वास करने लगी है । कज्ज लोगों का असर ।''(५४)

''अल्मा कबूतरी'' उपन्यास से अवतरित संदर्भ, हमे पूर्णरूपेण धार्मिक प्रवृत्तियाँ का निरीक्षण करवाता है । क्योंकि भजनी नामक नारी चरित्र में ऐसे गुण विध्यमान है । जिससे उनका चरित्र पूर्णतया धार्मिक लगता है । भूत-प्रेत, देवी-दैवताओं में अंध विश्वास ही उनकी धार्मिक वृति का ख्याल स्पष्ट करता है । तो कहीं पर लेखिका ने नवोढा स्त्री की धार्मिक वृत्ति का दृश्यांकन किया है । नवविवाहित स्त्री ससुराल जाकर धार्मिक विधि के अनुसार पूजा-अर्चना करती है । जैसे 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में उर्वशी, विवाह के पश्चात ससुराल में जाकर विभिन्न धार्मिक कियाएँ करती है - ''सबसे पहले महामाई के मन्दिर पर हाथ लगाये । ऊँची सीढ़ियाँ चढ़कर गिरती-डिगुलती शंकरजी के

मन्दिर तक पहुँची । फिर मोदी लल्ला की बावडी, बगीचे में बेल के पेड़ का पूजन और अन्त में सास के थान पर जाकर औरतें रूक गयी ।''(५५)

प्रस्तुत संदर्भ 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में से लिया है । उर्वशी नवविवाहित नारी के रूप में प्रादुर्भाव होती है । किन्तु सामाजिक - रीति-रिवाज के अनुसार विभिन्न पूजा-अर्चना करना अनिवार्य समजा जाता है । उपन्यास में स्थानों पर उर्वशी की धार्मिक वृत्ति पूर्ण रूप से स्पष्ट होती है । क्योंकि उर्वशी का चरित्र धार्मिक वृत्ति से ओतप्रोत है । इसीलिए उपन्यास में जगह - जगह पर धार्मिक अनुष्ठान करती दृष्टिगत होती है ।

उर्वशी, बैरागी के साथ बेतवा नदी पूजन इस प्रकार करती है कि - ''इसी घाट पर । जब कार्तिक के महीने से नहान किया था - ''कार्तिक वाथ माघे, पेडचे स्नाने प्राकुर्वन्ति, ते मुक्ता पाप बन्धनात '''बैरागी न यह श्लोक बोलकर पूजा कराई थी ।''(५६)

भारतीय संस्कृति में नदी को भी पवित्र एवम् पुज्य माना जाता है । क्योंकि नदी को माँ के रूप में प्रस्थापित किया गया है । 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में यही बातों की ओर लेखिका ने निर्देश किया है । उर्वशी बेतवा नदी को पवित्र मानकर उनकी पूजा-अर्चना करके, निष्पापमय होना चाहती है । उपर्युक्त संदर्भ से लेखिका ने उर्वशी की धार्मिक वृत्ति को स्पष्ट किया है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने आँचलिकता की परिपाटी पर उपन्यास साहित्य का प्रणयन किया है । विशेषतौर पर अंचल विशेष को ध्यानांवित किया

गया है । पुष्पाजी विरचित 'अगनपाखी' उपन्यास में विराटा के आसपास के भू-भागों में रीत-रिवाजों के अनुसार पूजा और अनुष्ठानों का चित्रण किया है । भुवन के विवाह पश्चात, उनकी माँ विभिन्न धार्मिक क्रिया कलाप करती दृष्टिगत होती है । जिसके कारण बेटी का विवाह जीवन सफल हो । जैसे - 'नानी और अम्मा ने गौरस और भात बनाया था, क्योंकि नानी ने कन्या जिंवाना बोला था । महामाई के मंदिर पर धोक दी थी - मइया सबका भला करना, मेरी पत रखना'

नानी ने पूजा की । रोली चावल नारियल चढाया । भुवन कन्याओं के आगे रखे कटोरों में भात डाल रही थी, अम्मा गोरस परस रही थीं । नानी मंदिर की सीढियाँ उतरकर नीचे आईं ।''[५७]

'अगनपाखी' उपन्यास से अवतरित संदर्भ से नानी की धार्मिकवृति स्पष्ट रूप से झलकती है । हालाँकि एक ओर से पुण्य का काम कर रही थी । किन्तु दूसरी ओर न चाहते हुए भी धार्मिकवृति प्रकट हो जाती है । यह महामाई की पूजा-अर्चना करके बेटी के विवाह जीवन को सफल बनाने की कामना करती है । उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए धार्मिक अनुष्ठान करके अपना और अपनी बेटी जीवन सफल बनाना चाहती है । तो कहीं स्त्री, घर और गृहजीवन की मंगलकामना के लिए पूजा अर्चना करती है । घर की पवित्रता के लिए घर के आँगन में तुलसी को उगाया जाता है । जिसकी बदौलत घर में सदैव पवित्रता एवम् शांती कायम रहती है । ''झूलानट'' उपन्यास में शीलो अपने गृहजीवन की रक्षा के लिए तुलसी का पूजन करती है । '' शीलो तुलसी

का चौरा ढार रही है – पीले रंग की धोती का छोटा–सा घूँघट करके । गीत गा रही है – तुलसी महारानी नमो नमो ।''(५८)

प्रस्तुत संदर्भ हमे शीलो की धार्मिकता से परिचित करवाता है । क्योंकि मनुष्य स्वाभाविक रूप से ईश्वर से डरता है । धर्म ही समाज पर अनुशासन करता है । इसीलिए शीलो तुलसी को माता के स्थान पर प्रस्थापित करके, पूज–अर्चना करती है । तो कहीं पर नारी अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए पूजा–अर्चना करती दिखाई पड़ती है । जैसे ''कही ईसुरी फाग'' उपन्यास की नायिका रज्जो, उपन्यास में ईसुरी के साथ प्यार करके पूरे गाँव में बदनाम हो जाती है । अपनी बदनामी को मिटाने के लिए वह अपने व्यक्तित्व को बदलती है । घर में पूजा–अर्चना करने में तल्लीन हो जाती है । जैसे – ''बहू का रूप दिन–दिन बदल रहा है । देखो तो घर में ही पूजा की मढ़िया धर ली है और रात–दिन भजन करती है । गले में तुलसी की माला के साथ राधा और कन्हैया जू का ताबीज पहन लिया है ।''(५९)

नारीवादी लेखिका पुष्पाजी ने 'विजन' उपन्यास में धार्मिकवृति को नारीपात्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है । जैसे डॉ. नेहा और अजय की माँ, दोनों के चरित्र में धार्मिक भाव दृष्टिगत होते है । नेहा दैनिक क्रियाओं के अनुसार सारी प्रक्रिया करती है । जैसे – ''मैं इस अभिजात संस्कृति के प्रति नतमस्तक हो उठी थी । कीमती रेशम की नाजूक साडियों ने स्नान के बाद पूजा–पाठ के लिए उकसाया । उनमें सेंट की गंध ही नहीं अगरबती का धूम भी सज जाता था । पाठ और आरती करती तो नेहा से ज्यादा साड़ी का रूप बढ़ता, भगवान को समर्पित स्त्री

हर वस्तु देव लीला का हिस्सा, दिनचर्या कैसी पवित्र और मनमोहक हो गयी ।''[६०]

तो कहीं पर 'विजन' उपन्यास में नेहा की सास यानी अजय की माँ के चरित्र में लेखिका ने धार्मिकवृति का प्रणयन किया है । निर्जला उपवास और गुरू की महत्ता में श्रद्धा एवम् विश्वास रखती है । जैसे - ''एक दिन पहले से अजय की माँ निर्जला उपवास पर थीं । ग्यारह ब्राह्मणों का भोज किया था । वस्त्र और दक्षिणा साथ में थी ।

पूजापाठ का माहौल जैसे मरीजों के लिए पवित्र वातावरण रच गया है । गणेश जी की मूर्ति चन्दन की चौकी बीचोंबीच रख दी गयी - विध्वनकारी विनायक गणेशाय: नम: ।''[६१]

उपर्युक्त दोनों संदर्भ स्पष्ट रूप से व्याख्यायित होते है । लेखिका ने दोनों संदर्भ के माध्यम से नेहा और नेहा की सास दोनों चरित्रों की धार्मिकवृति को स्पष्ट किया है । नेहा के लिए परिवार की शांती कायम रखना आवश्यक है । तो सास के लिए परम्परा को बरकरार रखना जरूरी है । इसीलिए लेखिका ने पात्रों की मन:स्थिति के अनुसार धार्मिकवृति का माहौल बनाया है ।

संक्षेप में कहना हो तो धार्मिकवृति व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रदर्शित करती है । मूलत: ऐसी भावनाओं को लेखिका ने उपन्यासों में प्रस्तुत करके, अपने पात्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है । जैसे लेखिका ने ''चाक'' उपन्यास में खेरापतिन दादी के चरित्र में धार्मिक भावना को उजागर किया है । तो 'इदन्नमम' उपन्यास में कुसुमा 'अल्मा कबूतरी'

उपन्यास में भजनी, 'कहीं ईसुरी फाग' में रज्जो, 'झूलानट' उपन्यास में शीलो, 'विजन' उपन्यास में नेहा और उसकी सास, 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी आदि चरित्रों में धार्मिक भावना पूर्णरूपेण स्पष्ट दृष्टव्य होती है ।

मैत्रेयी पुष्पा मूलतः नारियों के समस्या प्रधान प्रश्नों को लेकर लिखते है । विशेषतौर पर अँचल-विशेष को निर्देशित करती है । जिसके अंतर्गत अँचल-विशेष को उजागर करने लिए सामाजिक एवम् सांस्कृतिक परिवेश पर विशेष बल दिया जाता है । ऐसे सिद्धांतो की पृष्टि के लिए लेखिका ने अपने उपन्यास साहित्य में धार्मिक भावना को स्पष्ट रूप से आलेखित किया है । विशेष रूप से लेखन के लिए सिद्धहस्त ही है ।

(६) कामकाजी नारी :

समाज में स्त्री की स्थिति अधिकांशतः उसके कामकाज पर निर्भर रहती है । क्योंकि आर्थिक स्तरियता ही नारी के लिए समाज या परिवार में स्थान निश्चित करता है । स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में आमुल परिवर्तन हुआ है । जिसके फलस्वरूप नारी को चार दिवारों की कैद से आजादी प्राप्त हुई । अधिकांशतः नारियाँ पुरूष से कंधे -से - कंधा मिलाकर चलने लगी है । किन्तु आज भी कामकाजी महिलाओं का शोषण दरज्जे के अनुसार होता रहा है । चाहे वह उच्च वर्गीय नारी हो या निम्न वर्गीय । शोषण सभी वर्गों में हो ही रहा है ।

पुष्पाजी ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी को कामकाजी स्त्री के रूप में अवश्य चित्रित किया है । विशेष रूप से आँचलिकता ही उन्हें कार्यशक्ति प्रदान करती है । कामकाजी नारी यानी सिर्फ नौकरी पैशा नारी ही नहीं । किन्तु ग्रामीण परिवेश में खेत मजदूरिन, घर की व्यवस्था के लिए कार्यरत नारी भी कामकाजी नारी है ।पुष्पाजी ने पुर्णरूप से इन बातों को स्पष्ट किया है । एक ओर उन्होंने स्त्री की स्थिति को पाठक एवम् बुद्धिजीवी समाज के सामने रखकर, अचम्भित तो किया है । तो दूसरी ओर आधुनिकता एवम् विकास के नाम झण्डा लहरानेवाले लोगों को सचेत भी किया है ।

दशवें दशक में नारीवादी लेखिका के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करनेवाली मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी के विविध रूपों को प्रस्तुत किए है । मूलतः उनका उदेश्य नारी उत्थान ही रहा है । किन्तु नारी के विभिन्न रूपों की झाकियाँ भी प्रदर्शित की है । जैसे माँ, पत्नी, प्रेमिका के अलावा उन्होंने नारी के विभिन्न रूपों को भी उजागर किया गया है ।

दृष्टांत के रूप में 'चाक' उपन्यास में सारंग के चरित्र की बहुमुखी विशेषताओं को प्रस्तुत किया गया है । कहीं पर वह माँ, तो कहीं पर पत्नी या प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत होती है । तो कही पर रसोई के लिए मथ्थापची करती नारी के रूप में । घर को सँभालना और खाना आदि बनानेवाली स्त्री को कामकाजी नारी के अंतर्गत ले सकते है । जैसे - ''सारंग घर आ गई । सनूने (रक्षाबंधन) के एक दिन पहले खजूरिवाई पूजती हैं । पकवान बनाना है, वह जुट गई । चुल्हे पर बड़ी सी कढ़इया

रख ली, ज्यादा सा तेल डाल दिया, जल्दी-जल्दी निकाल दूँगी । पूरी-कचौरी ।''(६२)

केका नामक लड़की आँगनवाड़ी में काम करती है । जैसे - ''वह लड़की पहली बार स्कूल के बच्चों के लिए दलिया बनाने आई थी । आँगनवाड़ी थी, मगर बालाहार स्कूल में ही देते थे । स्टोव माँजना, तेल भरना, दलिया-खिचड़ी बनाने के बर्तन धोने काम बखूबी निपटाती ।''(६३)

उपर्युक्त दोनों संदर्भो में प्रस्तुत नारी घरेलु कामकाजी नारी है । जैसे सारंग घर के सदस्यों की जठराग्नि तृप्त करने के लिए रसोईदारिन बनती है । तो केका आजीविका के लिए आँगनवाडी में बच्चों के लिए खाना बनाती है ।

कामकाजी नारी का सीधा सम्बन्ध नौकरीपैशा नारी से होता है । किन्तु यह गलत है, क्योंकि नौकरीपेशा नारी के अलावा अन्य नारी क्या काम नहीं करती ? इसी बात की सार्थकता के लिए पुष्पाजी ने 'इदन्नमम' उपन्यास में मंदा को घरेलुं कामकाजी नारी के रूप में भी प्रस्तुत किया है । जैसे कि - ''स्वयं सफाई करने चल दी । मन्दाकिनी घर की झाड़ू-बुहारी में व्यस्त हो गई । बऊ कह रही थीं, घैला में से पानी किंछ दो बिन्नू, धूरा दब जाएगी । मन्दाकिनी आँगन में आ गई, हाथ में बाल्टी थामे ।''(६४)

प्रस्तुत संदर्भ से मन्दाकिनी के चरित्र में घरेलू कामकाजी नारी के लक्षण स्पष्ट होते है । घर को सजाना-सँवारना स्त्री की एक विशेषता

होती है । जिनमें मंदाकिनी खरी उतरी है । तो कहीं पर 'झूलानट' उपन्यास में शीलो की बहन कांता भी घरेलू कामकाजी नारी के रूप में चित्रित हुई है । बहन की गृहस्थी अच्छी तरह से चले, उनमें कोई विध्न या बाधा उत्पन्न न हो इसीलिए कांता तत्पर रहती है । जैस - ''शीलो का पूरी तरह हाथ बँटाती है कामकाज में । कांता जीजा के कपड़े रिन से रगड़कर धोती है । पाजामा में टिनोपाल लगाती है और रघु के घर में माँगकर इस्तिरी कर देती है । कांता जम गई घर में ।''(६५)

इसी सिल-सिले को बरकरार रखने के लिए लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में उर्वशी को भी घरेलु कामकाजी नारी रूप में प्रस्तुत किया है । जिसका हरेक दिन काम के साथ ही पूर्ण होता है । जैसे कि - ''हाँ, वह तो भूल गयी थी कि यह वही उर्वशी है जो छींट की मामूली-सी फटी-सिली धोती पहने दिन-रात काम में लगी रहती थी । घर की लीपा-पोती, गोबर-पानी में धूसरित हुई फिरती थी । काम में खटते दिन निकल जाता था - बाकी समय नानी के काम धन्धे निबटाने में ।''(६६)

'बेतवा बहती रही' उपन्यास में अन्य जगहों पर 'कजरा' जो अपने पति बैरागी की सेवा सुश्रुषा के लिए हररोज कार्यरत रहती है । ''गजरा पै नजर पड़त ही भाग लेत है बहू, जैसे ततैयाबई ने काटौ हो । जे बिचारी दिन-भर काम धन्धे में लगी रहत है, सबकी सेवा-टहल करत है । बा नासमिटे के पूजा-पाठ कौ सामान तैयार करके धर देत ।''(६७)

उपर्युक्त सन्दर्भों में नारी को कामकाजी नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है । क्योंकि एक ओर उर्वशी, जिसका हर दिन काम के साथ ही उदय होता है । तो दूसरी ओर गजरा, जो एक सेवापरायण नारी है । गृहस्थी को सँभालने के लिए, वह मूक प्राणी की तरह घरेलु कामकाज में लिन्न हो जाती है । मूलतः नारी की स्वभाविक विशेषता कार्यरत रहना ही है । चाहे वह नौकरी करती हो या फिर खेत मजदूरी ।

मैत्रेयी पुष्पा ने घरेलु कामकाजी नारी का सशक्त दृष्टांत 'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास की रज्जो के रूप दिया है । जो भोजन पकाने और घर को सँभालने में सफलता हासिल करती है । रज्जो के चारित्रिक गुण के अंतर्गत घरेलु कामकाजी नारी के गुण विध्यमान है । जैसे कि – ''तिरकाइ साक ज्यादा बना लिओ । चलो तुम छीलो काटो, हम छोंक देगे । मटर की फली तोर ले आए थे ।''[६८]

मनुष्य का व्यक्तित्व आर्थिक पक्ष पर आधारित रहता है । क्योंकि अर्थ से ही उनकी पहचान स्पष्ट होती है । मूलतः काम से ही व्यक्ति का व्यक्तित्व मुखरित होता है । पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में नारी चरित्र के विभिन्न पक्षों का प्रस्तुतीकरण किया है । उन्होंने कामकाजी नारी के अंतर्गत घरेलुं कामकाजी नारी के अलावा किसानी करनेवाली खेत मजदूरिन नारी आदि रूपों को प्रस्तुत किया है । लेखिका ने एक तरह से नारी को विभिन्न कर्मों में संगठित किया है । कहीं पर तो उन्होंने नारी के व्यक्तित्व को घर तक सीमित रखा है । तो कहीं पर उन्हें चार दीवारों से आजादी प्रदान करके, बाहरी फलक में सुशोभित

किया है । जैसे 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग है । वह घरेलु कामकाज में खरी उतरी है । किन्तु लेखिका ने पुरूषप्रधान समाज की मानसिक को तोडने के लिए, खेत में काम करनेवाली नारी रूप में भी चित्रित किया गया है । लेखिका के शब्दों में – ''खेत में पानी सारंग को काटना होता है । वे खेत पर ही जा पहुँचे । मैं नहीं, ढलते सूरज की धूप दमक रही है । कहकर उसने झुककर एक डौलकाट दी और दूसरी के कटाव पर फावड़े से गीली मिट्टी धर दी ।''(६९)

लेखिका ने अभावग्रस्तता को पात्र के माध्यम से निरूपित किया है । क्योंकि अभावों की पूर्ति के लिए मजदूरी करना अनिवार्य हो जाता है । जहाँ नारी रसोईघर की शोभा बढ़ाती है । वहीं नारी अभावों की पूर्ति के लिए खदानों में मजदूरिन भी बनती है । इसीलिए लेखिका ने 'इदन्नमम' उपन्यास में प्रांतीय मजदूरिन नारीयों का चित्रांकन कामकाजी नारी के रूप में किया है । जैसे – ''वह खदान पर आ गई, जहाँ लछो गेंती और घन चला रही थी – परबतिया मोटा पत्थर सरका रहा था । लछो की हालत अच्छी नहीं है ।''(७०) 'इदन्नमम' उपन्यास में लछो एक मजदूरिन नारी है । जो परिस्थितियों से वश होकर, गुलामों की तरह कामकाज में लगी रहती है । तो कहीं पर जीवनचक्र को गतिशील रखने के लिए, मजबुरन् कामकाजी नारी बनकर रहना पड़ता है । जैसे 'इदन्नमम' उपन्यास की अवधा एक खदान मजदूरिन नारी है । जो परिवार को जीवीत रखने के लिए, आर्थिक रूप से शोषित होकर भी खदान मजदूरिन नारी के रूप में कार्यरत रहती है । जैसे – ''जिज्जी, रात–दिन का भेद तियाग दिया हमने । लू–लपट और जलती दुपहरिया

में पथरा टोरे हमने । रात के बखत चार–चार हिरक की जाँगा आठ–आठ टिरक की लदाई करीं । हारी–बैमारी तक में टपरिया में बैठना–सोना गुनाह समान समझा ।''(७१) प्रस्तुत संदर्भ से एक ओर मजदूरिन नारी की विवशता प्रदर्शित होती है । तो दूसरी ओर एक कामकाजी नारी का चित्र स्पष्ट होता है । क्योंकि अवधा ने गृहस्थी के खातिर कठिन परिश्रम जरूर किया है । उसके बदले में कुछ विशेष हासिल नहीं हुआ ।

नारी का स्वभाव एकाधिकारयुक्त रहता है । अतः अपनत्व की भावना उन्हें, कठिन परिश्रम के लिए प्रेरित करती है । जैसे –'अगनपाखी' उपन्यास की नायिका भुवन, जो अपने खेतों में काम करते, समय उतनी तन्मयता जताती है कि खुद मालिक से मजदूरिन नारी बन जाती है । मजदूरों के साथ मिल–झूलके काम करती दिखाई पड़ती है । ''भुवन तो बेठा कटनई को गयी है । अब की बार मजूरों की भारी किल्लत पड़ी है, चैत काटनेवाली औरतों को सी साड़ी पहने हुए । कछोटा मारे हुए वह ज्यादा लम्बी लग रही है । मुस्काती नहीं, गुमसुम है ।''(७२)

समग्रतया देखे तो मैत्रेयी पुष्पा अपने उपन्यास साहित्य में नारी के चरित्र की विभिन्न रहस्यमय परतों को खोला है । माँ, पत्नी और प्रेयसी के अलावा अन्य रूपों को प्रदर्शित करने का अथाग प्रयत्न किए है । उपयुक्त संदर्भ में उन्होंने कामकाजी नारी को प्रस्तुत किया है । जो कहीं पर चार दीवारों के पीछे केद होकर कार्यरत है । तो कही – कहीं पर उन दीवारों की नाकाबंदी को तोड़कर मुक्त फलक में विचरण करती है । जहाँ लेखिका ने नारी को घरेलु कामकाजी नारी के में

चित्रित किया है । वहीं उन्होंने अन्य रूप से बाहरी संस्थानों में कार्यरत नारी को भी उल्लेखित किया है । कहने का तात्पर्य यही है कि घरेलु कामकाजी नारी को खेत मजदूरिन या नौकरीपेशा नारी के रूप में चित्रित किया है ।

३.७ रूढ़िचुस्त नारी :

रूढि शब्द का शाब्दिक अर्थ परम्परा से सलग्नता कायम रखना है । अंतिम दशक का हिन्दी उपन्यास इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि इसमें सत्व खो चुकी परम्पराओं के पिष्ट–पोषण का आग्रह कतई नहीं है । लेकिन समाज के लिये उपयोगी परंपराओं को भी नकारा नहीं गया है । परंपरा से स्त्री का कार्यक्षेत्र घर की चार दीवारी तक सीमित रहा है । घर की इज्जत, मान–मर्यादा, नैतिकता, इहलौकिक–पारलौकिक प्रतिष्ठा सभी का वास स्त्री के शरीर में परंपरा से स्वीकृत है । परंपरा की तुलना उस जेल से कर सकते है जिसके विषय में अमृता प्रीतम कहती है – ''जेल के बाहर डर है, भूख है, जहालत है और अन्दर साँस घुटती हैं । सब की सब औंरतें जैसे बिलखकर कह रही हैं, हमे यहाँ से बाहर न निकालिये और सबकी सब औरतें जैसे बिलखकर कही रही हैं हमें जैसे भी हो यहाँ से बाहर निकाल दीजिए ।''(७३)

ग्रामीण परिवेश के उपन्यासों में जो नारी चरित्र उपलब्ध होते हैं, उनमें बहुलांश उन नारियों का है जो पुरानी – प्रगति – विरोधी, स्त्री–विरोधी रूढियों की जंजीरों से मुक्त हो पायी हैं । किन्तु कहीं–कहीं ऐसा भी प्रतीत होता है कि कोई नारी पात्र ऊपरी दृष्टि से आधुनिक

एवं रूढिमुक्त लगे, परंतु भीतरी एवं वैचारिक दृष्टि से उसमें रूढि चुस्तता पायी जाती है ।

हिन्दी साहित्य में परम्पराओं से लिपटे अंगिनत उपन्यास लिखे गये है । जिनमें परम्पराओं को प्राधान्य दिया गया है । भारतीय समाज नारी परम्परा में जीवन बसर करना अपना भाग्य समझती है ।

मैत्रेयी पुष्पा मूलतः नारीवादी लेखिका है । इसलिए नारी उत्थान की पृष्ठभूमि के रूप में आँचलिक परिवेश को प्राधान्यता दी है । आँचलिकता के अंतर्गत परम्पराओं में बँधना अनिवार्य ही नहीं, आवश्यक होता है । इसीलिए आँचलिकता की कसौटी पर खरे उतरने के लिए, अपने उपन्यास साहित्य में परम्परायुक्त मूल्य भाव को निश्चित ही निहीत किए है । डॉ. नीलिमा वर्मा ने अपनी पुस्तक 'स्वातन्त्रोतर हिन्दी कहानी में नारी चरित्र की अवधारणा' में कहा है कि – '' परम्परागत मूल्यों के अन्तर्गत नारियाँ स्वतंत्र नहीं थीं । परिवार एवं समाज में उन्हें पुरूषों की समकक्षता प्राप्त नहीं थीं । माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों की आज्ञा को स्वीकृति देना ही उनकी नियति बन जाती है ।''(७४)

पुष्पाजी विरचित 'चाक' उपन्यास में रूढ़िचुस्त नारी पात्र को आलेखित किया गया है । जिसका सम्बन्ध परम्पराओं के साथ है । 'चाक' उपन्यास में हुकमकौर नामक नारीपात्र जो, पुरानी रीति-रिवाजों एवम् मान्यताओं में विश्वास रखता हैं । अपनी पुत्रवधू के नाजायिज गर्भधान का विरोध करते हुए कहती है कि – ''मेरे बेटे की मौत से दगा करनेवाली हरजाई बदकार ! तेरा मुँह देखने से नरक मिलेगा, खेती,

जलेगी, अकाल पड़ेगा । गंगा में सौ अस्नान करो ! तो भी यह महापाप छूटना नही हैं ।''(७५) संदर्भ से स्पष्ट होता है कि हुकमकौर (रेशम की सास) के चरित्र में रूढिचुस्तता के भाव परिलक्षित होते है । जैसे कि वह कहती है कि पति के मृत्यु के बाद विधवा स्त्री । बच्चे जन्म नही दे सकती है । ऐसा करना परम्पराओं को तोडना ही है । जिसके कारण परिवार पर अशुभ घटना घटित होती है ।

उपन्यास पूर्णरूप से ग्रामीण परिवेश में लिखा गया है । फलस्वरूप सजीवता प्रदर्शित करने हेतु पौराणिक लोककथाओं की सहायता लेना अनिवार्य होता है । पुष्पाजी ने नारी को रूढिचुस्तता के आधार पर नापा है । 'खेरापतिन के भाव दादी रूढिचुस्त नारी है । जिसके चरित्र में प्राचीनता के भाव विध्यमान है । जैसे – खेरापतिन ने भैमाता (सृष्टि की देवी) के चरणों में जल ढार दिया । अनकहे ही कह दिया मइया, तेरी सिरजना में ऐसी दुभाँति ! कोख देकर कोख का महापताका दिया बेटियों को...'' बूढ़ी गा उठती है ...

तीजन चरचा चंदना की चल रही जी,
ए जी कोई मच्यौ है सहर में सोर –
सिर बदनामी चंदना बेटी लै रहीं जी ऽऽऽ...''(७६)

इन्ही परम्पराओं की अगली कड़ी सारंग है । ग्रामीण लोगो के जीवन में तीज–त्यौहारों का महत्त्व अधिक रहता है । लेखिका ने सारंग के माध्यम से ग्रामीण परम्पराओं जीवंत किया है । सारंग होली के त्यौहारों पर गाये जानेवाले गाने–गीत गाकर, ग्रामीण सभ्यता का परिचय देती है । जैसे कि –

समहे की लाज गहो गोरी, समहे की...

नाक नथुनियाँ मो पै हति नाँय, तो क्या रे पहरि खेलूँ होरि''

अब कें तो गोरी तुम यों ही हँस खेलो, तो फिर कें गढ़ाय

दूँ दो जोडी ''(७७)

प्रस्तुत लोकगीत से ग्रामीण सभ्यता झलकती है । क्योंकि ऐसे गीत विशेष पर्व-त्यौहारों पर गाये जाते है । 'चाक' उपन्यास में प्रस्तुत गीत सारंग के चरित्र से रूढिचुस्तता के भाव मुखरित करता है ।

विशेष रूप से ग्रामीण परिवेश का मूल्यांकन करे तो, ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति को आत्मसात् करनेवाले लोग पूराने, ख्यालात में जीवन-यापन करते है । उनकी वैचारिक दृष्टि में पीछड़ेपन के पदचिन्ह दृष्टिगत होते है । लेखिका ने ऐसी विचारधारा की पृष्टि 'इदन्नमम' उपन्यास मे 'बऊ' के माध्यम से की है । 'बऊ' का चरित्र पूर्णतः ग्रामीण है । उनके विचारों में ग्रामीणता झलकती है । जैसे वह कहती है कि - ''खरबोइया तेल जिन लगाया करो । ऊपर की हवा हो लेगी संग । भूत-पिरेत का इस उमर में बड़ा डर रहता है बेटा ! चढ़ती को ही ले ढाबता है पिरेत । फिर सारी सारी उमर नहीं छूटता ।''(७८)

उपन्यास के अन्य नारी पात्र कुसुमाभाभी भी रूढिचुस्त नारी के रूप में दिखाई देती है । कुसुमा पूर्णतया आस्थावादी नारी है । उपन्यास में कुसुमा की जगह-जगह पर अवहेलना की गई है । किन्तु हताश लोग अकसर भगवान के सानिध्य में जाते है । तो कुसुमा भी ईश्वरीय अलौकिक शक्ति में आस्था रखती है । वह नित्य पूजा-अर्चना में

तन्मयता के साथ जूडी रहती है । जैसे –" भाभी भोर से ही नहा लीं । सूरज भगवान को जल ढार रही हैं । नीचे की माटी माँग से छुआ ली । तुलसी ढारीं, परिक्रमा की । आँखे बन्द किए खड़ी हैं । पतली कमर और पेट पर लिपटी धोती की तिन्नी सलीकेदार तरीके से नीची बँधी है ।"(७९)

उपन्यास का अन्य पात्र 'प्रैम' (मंदाकिनी की माँ) भी पुराने रीत–रिवाज के प्रति आस्था रखती है । जो बेटी के सगाई प्रसंग के अनुसार क्रिया–कलाप करती है । वह अपनी बेटी के पैर धौकर उसे पवित्र करना अपना कर्तव्य समझती है ।

जैसे कि – "पाँव धुवा लो बेटा ।"

पाँवों को अपने दोनों हाथों से ऐसा गहा, जैसे फूलों को अंजुरी में ले रही हों और परात में भरे पानी में डुबो दिया ।

वे झूकी–झूकी धोती रहीं । अपनी धोती के पल्ले से पोंछे और एक रूपए का सिक्का उस चरण–जल में डाल दिया ।"(८०)

पुष्पाजी के साहित्यजगत् में ऐसे ग्रामीण पात्रों का प्रणयन हुआ है । जो स्वभावगत ग्रामीण ही लगते है । उनकी बोली, उनका परिवेश और उनका सामाजिक व्यवहार । कहीं पर लेखिका ने ग्रामीण परिवेश के वंश परंपरागत रीत–रिवाजों को उजागर किया है । 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में लेखिका ने अंधश्रद्धा को 'भजनी' के माध्यम से प्रदर्शित किया है । वह पूर्णरूप से अंधश्रद्धा एवम् भूत–पिशाची में विश्वास रखती है । जैसे उनके क्रिया–कलाप –"

जमुनी.... जमुनी... जमुनी..

भजनी कदम से पीछे हट गई, ''हाय देवी माता, जमुनी चुड़ैल ने घर दबाया ।''

भजनी भूत-पिशाचों पर विश्वास करने लगी है । कज्जा लोगों का असर । सरमन गुनियाँ बुलाने लगा है ।''[८१]

उपर्युक्त संदर्भ से ज्ञात होता है कि भजनी एक रूढिचुस्त ग्रामीण नारी है । उनके आंतरिक एवम् बाह्य व्यक्तित्व में रूढिचुस्त नारी के भाव झलकते है । जिसके कारण वह भूत-पिशाचों पर विश्वास करती नजर आती है ।

मैत्रेयी पुष्पा के अधिकत्तर उपन्यासों की पृष्ठभूमि ग्रामीणांचल है । जिसकी बदौलत से ग्रामीण परिवेश को सजीवता प्रदान करना उनका कर्तव्य बनता है । उन्होंने ग्रामीण वातावरण में पुराने लोक व्यवहारों को मुखरित किया है । जैसे कि उन्होंने 'झूलानट उपन्यास में शीलो को रूढिचुस्त नारी पात्र के रूप में चित्रित किया है । जो एक त्यक्ता नारी है । किन्तु पति प्रेम को पाने के लिए, वह अंधश्रद्धा के रास्ते पर चलती हे । जैसे - ''पूस माह के दिन । कड़ाके की ठंड । जप-तप को दौर चला । भाभी अँधियारे ही ठंडे पानी से नहाकर तुलसी पीपल ढारतीं । सुंदर कांड का पाठ करके रोटी बनातीं और फिर टुकनियाँ लेकर गाय-कुत्तों के पीछे-पीछे डोला करती;

इसके बाद व्रत–उपवासों का सिलसिला । सोलह सोमवार । संतोषी माता के शुक्रवार । केला–पूजन के बृहस्पतिवार । शनि ग्रह शांति के शनिवार । भाभी सूख–सूखकर काँटा होती चली जा रही हैं ।''(८२)

प्रस्तुत संदर्भ से स्पष्ट होता है कि पुष्पाजी ने ऐसे नारी पात्रों के माध्यम से ग्रामीण परिवेश जीवंत किया है । जैसे शीलो ग्रामीण नारी है, वह पति को प्राप्त करने के जो प्रयत्न करती है । उनमें स्पष्ट रूप से रूढिचुस्तता के भाव दिखाई देते है । तो कहीं पर लेखिका ने सगुन–असगुन में परिणित रूढिचुस्तता को स्पष्ट किया है । क्योंकि ग्रामीण लोगों की सोच पुराने ख्यालातभरी होती है । जिसके कारण वह सगुन–असगुन में विश्वास रखते है । कहीं कोई शुभ कार्य हो या कहीं जा रहे हो, तब सगुन–असगुन के आधार पर ही कार्य होता है ।

प्रस्तुत कथन की पृष्टि के लिए लेखिका ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में दादी नामक पात्र का निर्माण किया गया है । दरअसल दादी के विचार और रहन–सहन पुराने ख्यालात के है । जब उर्वशी को सिरसा भेजती है । तब सगुन–असगुन का ख्याल रहती है । जैसे कि ''उरवसी बिटिया, ठहर जा । तनक पीछे जइयो । चल, लौट के पानी पीलै । ''गाँव नाखते ही रघुआ तेली आगे से आता दिखाई दिया । दादी वहीं बिदक उठीं – 'आज नहीं, घर लौट चल बेटा । नदी–नाब कौ चलवौ है । अच्छे सगुन नहीं हो रहे । मीरा, चल लौटा कें लै चल । औऽऽ.. उदय । चल घरै बैटा... आज नहीं ।''(८३)

प्रस्तुत संदर्भ में लेखिका ने दादी को रूढ़िचुस्त नारी पात्र के दायरे में प्रस्थापित किया है । जो न तो आधुनिकता को स्वीकार करती है और न ही प्राचीनता का लोप । परंपरागत रूप से बनाये हुए निषेधों को अपनाना अपना कर्तव्य समझती है । इसीलिए रघुआ तेली को देखकर सगुन-असगुन की बात को सोचती है । अन्य जगहों पर लेखिका ने ऐसी नारीयाँ को चित्रित किया है । जो खुद नारी होकर, अन्य को मान-मर्यादा एवं अपने लिए बनाये नियमों में रहने को सूचित करती है । उनकी सोच एवम् वैचारिक पृष्ठभूमि दरअसल पौराणिक है । इसीलिए वह खुद को और अन्य को भी आधुनिकता का स्वीकार करने से रोकती है क्योंकि ऐसा करना इसके लिए अक्षम्य है ।

'अगनपाखी' उपन्यास की नानी घर की इज्जत और मान-मर्यादा के लिए आधुनिक रिवाजों को अपनाना नहीं चाहती है । ऐसा करना उनके लिए घोर पाप के समान है । वह अपनी बेटी भुवन को डाटती हुई कहती है कि - ''नानी ने उसे इस बात के लिए भी पीटा, गालियाँ दीं - 'भट्टी छोत, बाप भाइया नहीं तो तू ऐसी मर्दमार मई जा रही है कि मर्द डरे । जनी के लच्छिन कब सीखेगी ? मन्नू तो ऐसी न थी, मेरी गाय सी भोरी बिटिया, किसी ने गाँव रहते नहीं जानी ।''(८४)

उपन्यास में आगे वहीं भुवन अपने व्यक्तित्व की स्वच्छंदता को विध्वंश करके पुरानी मान्यता को शिरमान्य करके चलती है । एक तरह से अपने अन्दरुनी आवेग को दबाकर, घुटन भरी जिंदगी जीती है । जैसे - ''तब जाकर रेशमी कपड़ो में लिपटी, घूँघट में ढँकी और गहनों से बँधी पोटली-सी नजर आई, वह भुवन थी भी या नहीं ? हाँ लोग जरूर

उसकी तारीफ में कह रहे थे – विजयसिंह की बहू का चेहरा आज तक किसी ने न देखा होगा । हाल तो हवेली से निकलने का काम ही क्या, मंदिर जाती है तो समझ लो कि पाँव के पंजे तक नहीं दिखते, बस हाथ पर लोटा धरा दिखाता है । इस गाँव में इतनी लिहाजवाली बहू अभी आई नहीं ।''(८५)

प्रस्तुत दो सन्दर्भों में नारी को सूक्ष्म दृष्टिकोण के आधार पर विश्लेषण करे तो, एक ओर नानी है । जो प्राचीनता को साथ लेकर चलती है । तो दूसरी भुवन है, जो आधुनिक ख्यालात की नारी है । किन्तु घर की इज्जत और मर्यादा के लिए परंपरा को मजबुरन अपनाती है । इसीलिए उनकी दैनिक क्रियाएँ, जो पूर्णरूप से परंपरागत ही होती है । वह चाह कर भी आधुनिकता को नहीं अपना सकती है । फलस्वरूप नानी और भुवन रूढिचुस्त नारी पात्र के रूप में उपन्यास में उभरते है ।

पुष्पाजी ने ग्रामीण सभ्यता एवम् संस्कृति को पूर्णतया अपने उपन्यास साहित्य में जीवंत किया गया है । जिनके अन्तर्गत पति को परमेश्वर स्थान प्रदान किया है । चाहे पति जींदा हो तब भी वह, आदरणीय है और उनकी मृत्यु हो जाये तब भी वह परमेश्वर के स्थान पर आरूढ़ रहता है । पुष्पाजी ने नारी के ऐसे समर्पित भाव रूढ़िचुस्त के रूप में प्रदर्शित किया हैं । क्योंकि आधुनिक युग में नर-नारी दोनों समान है । किन्तु ग्रामीण सभ्यता एवम् संस्कृति में आज भी असमानता देखी जाती है । जैसे 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास की नायिका 'अल्मा' अपने पति श्रीरामशास्त्री की मृत्यु के बाद जो क्रिया-कलाप करती है ।

जिससे उसकी रूढ़िचुस्ता स्पष्ट होती है जैसे- "अर्थी के ऊपर पड़ी मालाओं में से एक माला माँगी है । लो, अपने गले में पहन ली ।

अपनी माँग में भर ली । आखिरी बार सारा सुहाग-सिंगार ! हे राम ! अरे ! तुम कहते हो सती नहीं होगी, वह तो पति चिता की परिक्रमा कर रही है । माला पहनकर, कुमकुम लगाकर कैसी देवीरूपा लग रही है ! - पूरे सात फेरे किए हैं चिता के । तब यह सती हुए बिना माननेवाली । गले में आँचल बाँधकर चिता को प्रणाम किया । देखा, पति के चरणों की ओर सिर झुकाकर बैठ गई । आज अच्छा होम होनेवाला है । अपनी आँखों देख लेंगे । अल्मा ने आहिस्त-आहिस्ता अग्निमुख उडा लिया और अनवरत गूँजती मंत्रध्वनि के बीच श्रीराम शास्त्री की 'चंदन चिता' को अग्नि समर्पित कर दी ।"[८६]

ऐसे वर्णनों द्वारा उपन्यासकार ने एक ओर से ग्रामीण परिवेश को सजीवता प्रदान की है । परंतु लेखिका ने ग्रामीणता की आड़ में उनकी पुशौनी परंपरा को भी चित्रित किया है । दरअसल अल्मा ग्रामीण नारी है । पति की मृत्यु के बाद उसके व्यक्तितत्व के विभिन्न रूप प्रदर्शित होते है । वे ही उसको संपूर्णतः रूढिचुस्त नारी के रूप में प्रस्थापित करते है । क्योंकि पति की मृत्यु के बाद अंतिमक्रियाएँ वंश परंपरागत रूप से करती है । इसीलिए उनके चरित्र के बाह्य लक्षण से परिलक्षित होता है कि अल्मा एक रूढिचुस्त नारीपात्र है । जो शारीरिक रूप से ही नहीं मानसिक तौर पर भी रूढिचुस्त है ।

उपसंहार के रूप में कहना हो तो, जहाँ नारीवादी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा आधुनिक विचारधारा को पूर्णतया आत्मसात् करके अपने उपन्यासों को आलेखित किया है । किन्तु लेखिका के लिए परंपरागत मूल्यों एवम् रूढिचुस्तता को चाहकर भी छोड़ना असहनीय रहा है । दरअसल पुष्पाजी के शारीरिक एव मानसिक विकास में परंपरागत मूल्यों और ग्रामीण सभ्यता के पद्‌चिहन रहे है । फलस्वरूप न चाहते हुए भी प्राचीनता को साथ लेकर उपन्यासों का निर्माण किया है ।

दशवें दशक की उत्कृष्ठ लेखिका पुष्पाजी ने जहाँ नारीचेतना को मुखातिब होने के लिए आधुनिकता को अपनाया है । वही परंपरागत मूल्यों को भी साथ लेकर चली है । जहाँ आधुनिकता के साथ कदम-से-कदम मिलाया है । वहीं उन्होंने परंपरा छोड़ना अयोग्य समझा है । क्योंकि प्राचीनता से ग्रामीण परिवेश में सजीवता आती है । इसीलिए चाहे 'चाक' की सारंग, रेशम हो, 'इदन्नमम' की मंदा या कुसुमा । सभी उपन्यासों में वर्णित नारीपात्रों के प्रमुख दो रूपों को प्राधान्य दिया गया है । एक ओर नारी आधुनिक विचारों एवम् आविष्कारों को प्रधानता देती है । तो दूसरी ओर वही नारीचरित्र पुखतैनी परंपरा एवम् मूल्यों से मुँह फेरना अक्षम्य अपराध समझती है । उपयुक्त कथनों की पुष्टि पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में की है और नारी की रूढ़िचुस्तता को सुक्ष्म-से-सूक्ष्म ढ़ंग से प्रस्तुत किया गया है ।

३.८ रूढिमुक्त नारी :

मानव जाति के अविभाज्य अंग के रूप में स्त्री के महत्व से किसी को इन्कार नहीं है, परंतु स्त्री को सांस्कृतिक निर्मित के विरूद्ध जब-तब संघर्ष एवम् द्वन्द्व की स्थिति अवश्य उत्पन्न हुई है । जिससे स्त्री-अस्मिता अथवा स्त्री स्वातंत्र्य की अवधारणा उद्‌भूत हुई है ।

परंपरा से बाध्य होकर लिखे गये, साहित्य का विरोध करते हुए ओमप्रकाश वाल्मिकी कहते हैं - ''परम्परो जब व्यक्ति का दोहन करने लगें, प्रगति में बाधक हों तब उनका निषेध भी आवश्यक होता है । संस्कृति के नाम परोसी गई सड़ी-गली मान्यतायें और परम्परायें जब विकास में बाधक हो तब उनसे मुक्त हो जाना ही श्रेयस्कर है ।''[(८७)] इस प्रकार वाल्मिकीजी का कहना उचित ही है । क्योंकि परिवर्तन ही सृष्टि का नियम है । विकास के पथ में आनेवाली रूकावट या मान्यताओं को तोड़ना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है ।

आधुनिक युग में विभिन्न नारीमुक्ति आन्दोलनों के कारण नारियों में जागृति आने से रूढ़ि बन चुके प्राचीन मूल्यों को नारियों ने तिलांजलि देकर नारी-स्वातन्त्र्य एवं पुरूषों के समानाधिकार की माँग की । एक नवीन प्रकार के साहस के कारण अब वे पुरूषों की तरह जीवन के हर क्षेत्र में प्रवेश कर सफलता अर्जित करती हुईं मुक्ति की साँस लेने लगीं है । आज उस पर किसी प्रकार का पतिव्रत धर्म जैसा नैतिक बंधन नहीं है । वह पुरूष की, पति की दासी नहीं, सहयोगिनी है, सहधर्मिणी है । वह पुरूष पर निर्भर न रहकर, उसकी दया पर न जीकर स्वावलम्बी

होकर जीना चाहती है । आज नारी ने अपना अलग व्यक्तित्व प्राप्त किया है, अपने अस्तित्व को प्रमाणित किया है । स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय नारी के जीवन में अत्यधिक परिवर्तन आया है । एक ओर जहाँ परिवार का परम्परागत स्वरूप टूटा, वहीं दूसरी ओर स्त्री–स्वतन्त्रता के कारण स्त्रियों के स्वरूप में परिवर्तन आया । जो स्त्रियाँ आजीविका के साधन स्वयं जुटाती थीं, उनकी मानसिकता में भी शनैः शनैः व्यापक परिवर्तन आया है । इस प्रकार, उन्होंने जीवन और चिन्तन के विविध स्तरों पर पुरूषों के समान ही स्वयं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । स्वातन्त्रोत्तर युग की नारी के इस नये रूप को लेकर उपन्यासकारों ने अनेक उपन्यासों का सृजन किया हैं, जिनमें पारिवारिक विघटन से लेकर नारी के इस नये अहम पोषित स्वरूप तक का सूक्ष्म चित्रण किया गया है ।

दशवें दशक की सफल महिला उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा ने जहाँ अनुवांशिक परम्पराएँ और रूढिगत भावनों को साहित्य में अंकित किया है । वहीं आधुनिकता एवम् रूढिमुक्तता को भी अपनाया है । क्योंकि आधुनिकता ही कालांतर में परंपरा में परिणत हो जाती है । प्रत्येक परंपरा का आरंभ आधुनिकता से होता है । जिसे हम परंपरा और आधुनिकता का द्वन्द्व कहते हैं । वह वस्तुतः दो परंपराओं अथवा दो आधुनिकताओं का संधिकाल हैं । फलस्वरूप मैत्रेयी पुष्पा ने आधुनिकता को नकारा नहीं है । उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से नवीन विचारों को प्रस्फूीरत किया है । जैसे 'चाक' उपन्यास की 'सारंग' परंपराओं को तोड़कर, आधुनिक विचारधारा को अपनाती है – ''सारंग

पुरानी रीतियों, कुरीतियों, रूढ़ियों से लड़ती तो शायद इतना टकराव न होता, उसका रास्ता दूसरा है, जो बेहद टेढ़ा और शूलों भरा है । क्योंकि वह पति से लड़ना चाहती है । कई बार मन में आता है, समझाया जाए उसे कि देखो, परंपराओं में रहकर, रीतियों को मानकर तुम सुखी और सुरक्षित रहोगी । तुम ऐसी सत्ता से लड़ना चाहती हो, जिससे अब तक तो कोई जीता नहीं ।''(८८)

उपन्यास में सारंग के चरित्र से नवीन भाव स्पष्ट रूप में झलकते है । जैसे उन्हें इल्म है कि पति का विरोध करने पर उसका अस्तित्व चूर-चूर हो जायेंगा । परंतु सारंग की साहसिकता, उन्हें बाध्य नहीं कर पाती है । अन्य उपन्यास 'इदन्नमम' में लेखिका ने पैत्रिक सत्ता का विरूद्ध करती हुए नारियों को प्रस्तुत किया है । 'इदन्नमम' उपन्यास में जगेसर चाचा के मना करने बाद भी सुगना मन्दाकिनी के कार्यों में मददगार होती है । जैसे-'' सुगना तितली की तरह उड़ी चली आ रही है ! सुगना ने सारा काम सँभाल लिया । मन्दाकीनी विभोर हुई देखती रही, ''सुगना, तू मेरा ही हिस्सा है क्या ? मेरे ही अस्तित्व का एक भाग ! नहीं तो इतने बन्धन-बाधाओं को तोड़कर तू क्यों भागी आती ? कौन सी डोर खींचती है तुझे ? मेरा मन भी तो नहीं लगता तेरे बिना ।''(८९)

सुगना के चरित्र में वैचारिक क्रांति दिखाई देती है । जो मौका मिलते ही प्रदर्शित हो जाती है । इसीलिए सुगना पिता की आज्ञा को उल्लंघित करके, स्वच्छंदता की पथिक होती है । पुष्पाजी ने नारी उत्थान के कार्य के लिए भगीरथ प्रयास किए है । उन्होंने नारीचेतना के प्रवाह के उपन्यास के माध्यम से बहाया है । जैसे प्राचीन समय में नारी

की सोच और उनकी वैचारिक पृष्ठभूमि प्राचीन एवम् परंपरागत ही थी । किन्तु पुष्पाजी ने ऐसी मान्यताओं का विरोध करके नारी की वैचारिक स्वतंत्रता को वाचा प्रदान की है । जैसे 'इदन्नमम्' उपन्यास की प्रैम भौजी (मन्दाकिनी की माँ), जो आधुनिक विचारधारा में माननेवाली नारी है । वर्षों से यौन पावित्र्य के नाम पर स्त्रियों को दबाया-कुचला गया, लेकिन अब धीरे-धीरे ये बंधन ढीले पड़ने लगे है । आधुनिक परिवेश के प्रभाव स्वरूप अपनी अस्मिता का ज्ञान होते ही स्त्रियों ने सालों से चुप रही अपनी जुबान खोलना प्रारंभ किया है ।

प्रैम भौजी एक रूढिमुक्त नारी है । उसे विधवा होकर भी विधवानारी के लिए बनाये निषेधों में रहना अस्वीकार करती है । वह पूर्णरूप से मुक्ति की कामना करती है । फिर चाहे वह मुक्ति शारीरिक, मानसिक या आर्थिक हो । पति की मृत्यु के बाद भी अन्य पुरूषों के साथ संबंध स्थापित करती है । उसकी सोच के अनुसार -" उमाना (नाप) देती थी प्रेम भौजी मगन को । इंच-इंच नपवाती थी देह । क्या गजब का जोबन था ! मगन ही क्यों, रामरतन कोरी के संग देख लो । तला के पास बबूल के झंडो में अपनी आँखों से देखा है दोनों को । बऊ, तेरौ कौल, प्रैम भौजी चमेली खसिया से गोलियाँ मँगाती थी कि पेट में बच्चा न रह जाए । क्या करें, मन चलायमान है भौजी का और आँखें चंचल ।"[९०]

प्रस्तुत संदर्भ में पुष्पाजी ने नारी को पूर्ण स्वच्छंद मुक्त यौनाचारी के रूप में चित्रित किया है । जिसके फलस्वरूप प्रैमभौजी शारीरिक एवम् मानसिक रूप से स्वतंत्र दिखाई पड़ती है । यौन-शुचिता के संदर्भ

में कथाकार राजेन्द्र यादव का कथन है –'' आज नारी ने पुराने सारे संस्कार धो दिये हैं और यौन–शुचिता की 'पूत यौनि वह मूल्य चर्म पर अंकित' वाली सामंती नैतिकता आज की औद्योगिक दुनिया में उसे अपने व्यक्तित्व–निर्माण की दृष्टि से पिछड़ी और ओछी लगती है ।.. शारीरिक पवित्रता की उस दकियानूसी धारणा या किशोर संकोच भी अनुपस्थिति आज उसके मन में कोई पाप–बोध नहीं जगाती, यौन–मुक्ति भी उसे अपने अस्तित्व के अधिकार की एक मौलिक आवश्यकता लगती है और इसे यह चारित्रिक शील के साथ जोड़ना भी पसंद नहीं करती ।''(९१)

इस प्रकार यादवजी के कथन के साथ प्रैम भौजी का व्यक्तित्व संलग्नता रखता है । क्योंकि प्रैम भौजी के लिए यौन–शुचिता में कार्यरत रहना मुक्तता के पद्चिन्ह है । इसीलिए चारित्रिक शीलता के अलावा वैचारिक एवम् शारीरिक मुक्ति ही प्रधान रहती है । कहीं पर लेखिका ने विधवा नारी के चरित्र को स्वतंत्रता प्रदान की है । 'चाक' उपन्यास में 'पांचन्ना बीबी' एक विधाव नारी है । विधवानारी के लिए बनाये गये निषेधों में रहना है । किन्तु प्रेम के पंख लगते ही सारे बन्धनों को तोड देती है और पूर्ण रूप से आजाद नारी के रूप में विहरती है । जैसे –''ननद की इच्छाएँ बढ़वार में पड़ते रूख की तरह टहनी–फुनगिया बनकर सरग से जा लगी । पर जवानी के खेल निराले ! पहरे क्या, कैदें क्या ? सात पर्दों को फाड़कर जगता नगला के मेहताबसिंह से आँखे लड़ा बैठी – मेहताबसिंह के संग ऐसे जुटी थीं, ज्यों जुग–जुग की प्यासी हों । एक–एक बूँद सोखने को उतावली ।''(९२)

प्रस्तुत संदर्भ मं पांचन्ना बीबी के अवैध सम्बन्ध की प्रस्तुती हुई

है । दरअसल पांचन्ना बीबी एक विधवानारी है । पांचन्नाबीबी ने विधवाओं के लिए बनाये गये निषेधों को तोड़ा है । उसने दैहिक प्यास को बुझाने के लिए परंपराओं को जड़ से उखेड़ने का प्रयास किया है । इसीलिए पांचन्ना बीबी एक रूढिमुक्त नारी चरित्र है ।

दूसरी ओर आधुनिक युग में नवीन आविष्कारों से प्रेरित होकर, मानव मूल्य में अधिकांशतः बदलाव आया है । क्योंकि आधुनिक युग की स्वच्छंद विचारधारा, मानव को नवीन साहस के लिए प्रेरित करती है । उक्त कथन की पृष्टि मैत्रेयीजी ने 'चाक' उपन्यास में की है ।'' इस उपन्यास की नारी 'गुलकंदी' ने समाज व्यवस्था को तोडा है । उसने परंपरागत विवाह सम्बन्धी मान्यता को तोड़कर, आधुनिक युग की विवाह पद्धति को अपनाया है । दरअसल वह अन्य जाति के लडके 'बिसुनदेवा' के साथ गंधर्व विवाह करती है । जैसे - ''गुलकंदी ने गंधरव ब्याह किया है । गंधरव ब्याह ? यह क्या बला ? चरनसिंह बौहरे से पूछो । श्रीधर मास्टर भी कहता है - अपनी रजा से लड़की ब्याह करे तो उसे - 'भागना' कहकर बदनाम करना है । गंधर्व विवाह कहो, गंधर्व विवाह ।''[९३]

पुष्पाजी ने गुलकंदी को आधुनिक नारी के रूप में प्रस्थापित किया है । जिसका मुख्य आधार लेखिका की सोच और नारीवादी आंदोलनों का प्रभाव है । लेखिका की वैचारिक पृष्ठभूमि, परम्परा न होकर, आधुनिक युगीन, प्रबुद्ध वैचारिक क्रांतिकारी भावना से प्रभावित हुई है । फलस्वरूप लेखिका ने साहित्य के माध्यम से ऐसे भाव को सूक्ष्म-से सूक्ष्म रूप में स्पष्ट किया है । जिसका प्रमाण गुलकंदी जैसे

नारी चरित्र है । प्रेम और विवाह सम्बन्धी भारतीय व्यवस्था को खारिज करते हुए डॉ. गीता सोलंकी कहती है कि – ''नारीवादी आंदोलनों के प्रभावस्वरूप नारी का शिक्षित होना, आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होना – उसके नितांत निजी व्यक्तित्व को प्रभावित करने में सफल रहा है । शिक्षा और आत्मनिर्भरता के कारण नारी के आचार–व्यवहार, रहन–सहन, उठने–बैठने और विशेष रूप से उसके सोचने के ढंग से परिवर्तन आने लगा है । नई सोच ने नारी–जीवन से जुड़े हर पहलू को प्रभावित किया है; चाहे मामला स्त्री–पुरूष समानाधिकार का हो, आर्थिक स्वतंत्रता का हो, अस्तित्व बोध का हो या फिर प्रेम और विवाह का ।''[१४]

साहित्य में पाश्चात्य् विचारों की प्रधानता रही है । साहित्य ही समाज का सच्चा मार्गदर्शक एवम् पथप्रदर्शक है । साहित्यिक विचारों से प्रभावित होकर ही सामाजिक क्रांति होती है । फलस्वरूप मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्री स्वच्छंदता की पाश्चात्य विचारधारा को अपने साहित्य में संजोया है । जैसे 'झूलानट' उपन्यास की नायिका 'शीलो' संपूर्णरूप से रूढिमुक्त नारी है । वह बिना शादी या बछिया किए, अपने देवर बालकिशन के साथ रहना पसंद करती है । ऐसा करना सामाजिक रीत–रिवाज को ह्ास करना ही है । किन्तु शीलों का चरित्र संपूर्णरूप से स्वच्छदता की परिपाटी पर नापा गया है । जैसे वह पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था की शादी–ब्याह विषयक परंपरा को तोड़ती है ।'' शीलो बोली, ''यह क्या ?''

बछिया ! सास ने कहा।

न । बछिया-मछिया कुछ नहीं ।

नहीं, बिलकुल नहीं ।

हाज-गजब । गाँव-समाज को क्या मुँह दिखाएँगे ?

मुँह दिखाने को किसी की गाय मारी है क्या ?

अजस गठरिया मत बाँधे मेरे सिर, हाँ ।

अंत में शीलो ने अपने दिल की बात कह दी, "अम्मा जी, रीत-रसम लिखा हुआ रूक्का तो नहीं होती ।"

शीलो ने समझाया- तन-मन का ब्याह । तीसरा कौन होता है हमारे बीच ?"(९५)

'झूलानट' उपन्यास लेखिका ने पूर्णरूप से बुन्देलखण्डी परिवेश में लिखा है । बुन्देलखण्ड में स्त्री का दूसरा विवाह बछिया दान करके सामान्य रीति में संपन्न किया जाता है । किन्तु शीलो बुन्देलखंड के रीति-रिवाजों को तोड़कर, एक प्रकार से आधुनिकयुग के कोन्ट्राक रिलेशन में रहना पसंद करती है । इसीलिए उसके व्यक्तित्व के बाहरी एवम् आंतरिक लक्षणों के आधार पर, उसे रूढिमुक्त नारी कह सकते है । प्रेम-विषयक दृष्टिकोण के अलावा नारी के विवाह संबंधी दृष्टिकोण भी परिवर्तित हुआ है । स्वतंत्रता के पश्चात मोहभंग की स्थिति के कारण विवाह-व्यवस्था और पति-पत्नी के संबंधों में बड़े भारी परिवर्तन हुए हैं । एक समय था जब विवाह धार्मिक बंधन समझा जाता था । नारी भगवान भरोसे पति के अत्याचार सहकर भी पतिपरायण बनी रहती थी । लेकिन आधुनिक नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई

है । ऐसी जागरूकता पुष्पाजी ने 'झूलानट' उपन्यास में शीलों के माध्यम से दिखाई है । जैसे वह पति के द्वारा त्यक्ता होने के बावजूद भी देवर से सम्बन्ध जोड़ती है । अपने पति को मुँहतोड़ जवाब देती है कि- ''काये के पति-पतनी, बाबूजी ? वह अबोध मन का अच्छा है, सो बस... तुम्हारी होने के बाद भी.. पर छोड़ो उस बात को । बालकिशन तो ऐसे ही है हमारे लिए, जैसे तुम्हारे लिए तुम्हारी दूसरी औरत । बिनब्याही, मनमर्जी की । सच मानो, बालकिशन भी इससे ज्यादा कुछ नहीं ।''(९६)

प्रस्तुत संदर्भ में शीलों को रूढ़िमुक्त नारी के रूप में प्रस्थापित किया गया है । क्योंकि शीलो आधुनिक विचारोंवाली नारी है । जिसके लिए परंपरा के बंधन में बँधना सजा के समान दृष्टव्य होता है । इसीलिए पति की उपस्थिति में देवर के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का साहस करती है । वस्तुतः वह रूढ़िमुक्त नारी चरित्र है ।

तो कहीं पर पारिवारिक शान-शौकत और परम्परा का ह्ास करती नारियाँ दृष्टिगत होती है । जैसे 'अगनपाखी उपन्यास की 'भुवनमोहिनी' । जिसका ब्याह उच्च घराने में होता है । किन्तु संजोगवश एवम् परिस्थिति के अनुसार उसके व्यक्तित्व के मूलभाव जाग्रत होते है और वह पारिवारिक सभ्यता एवम् मान-मर्यादा का पर्दा हटाकर मुक्त विहार करती है । जैसे - ''चन्दर भइया ! अपनी भुवनिया ! न धूँघट न पर्दा, ऐसे अटारी पर खड़ी जैसे आम के पेड़ पर चढ़ी पके आम देखकर चहकी हो । हमें सिर उठ़ाने का मौका मिल गया । अरे ! देखते ही देखते नीचे धरती पर उतर आई और ऐसे भेंटी ज्यों मायके का आदमी

देखकर मायके में कूद गयी हो ।" यही कि भुवन गाँव की सामान्य लड़कियों की तरह मंगल के सामने धूँधट पर्दा भूल गयी ! यह सहज बात तो नहीं । हवेली की शान शौकत ने उसकी झिझक खोल दी गयी ? या... पति की बीमारी ने ही शर्म लाज और लिहाज का होश गुम कर दिया ।"(९७)

'अगनपाखी' उपन्यास की नायिका 'भुवनमोहिनी' एक रूढिमुक्त नारी है । क्योंकि वह हवेली की पुख्तैनी परम्पराओं को विध्वंश करती है । जहाँ हवेली की औरतों के लिए पर्दा प्रथा अनिवार्य है । वहीं भुवन उस को जड़मूल से उखाड़कर फैकती है । स्पष्टतः भुवन की चारित्रिक विशेषताओं से परिलक्षित होता है, कि वह रूढ़िमुक्त नारी है ।

प्राचीन समय में जहाँ स्त्री को अभिव्यक्त होने की समस्या थी । वह स्पष्ट रूप से अपने विचारों को अभिव्यक्त नहीं कर सकती थी । किन्तु आधुनिकयुग के प्रादूर्भाव से नारी जीवन में परिवर्तन अवश्य आया है । हरेक क्षेत्र में वह पुरूषों के समान हैं । चाहे वह आर्थिक पक्ष हो या व्यवहारिक पक्ष । पुष्पाजी ने अपने नारी चरित्र को मुक्ति प्रदान की है । जैसे 'अल्मा-कबूतरी' उपन्यास में कदमबाई एक ग्रामीण और निम्नवर्गीय नारी है । किन्तु मंसाराम के साथ अवैध संबंध को सबके सामने स्वीकार करती है । जैसे - "मलिया काका, मेरा बेटा कलंकी नहीं । उन्हीं चाँदी-सोने के नट-नारी से जन्मा है, जो शंकर महादेव ने भेजे थे । उस रात गैहूँ के पौधों की हरियल सेज के ऊपर आसमान में तारे झमक रहे थे । बिरवा रोपा जा रहा था । रोपनेवाला ने जंगलिया था न मंसाराम । धरती-सी हरी-भरी एक औरत थी, वह

जिसका भी अंश साधना चाहती थी साध लिया ।समय बताएगा कि यह बच्चा न कज्जा है न कबूतरा आदमी है, बस ।''[९८]

उपन्यास में कदमबाई एक रूढिमुक्त नारीचरित्र है । क्योंकि वह मंसाराम के साथ अवैध सम्बन्ध रखकर, एक बच्चे को जन्म देती है । पूरे कबूतरा समाज के सामने बच्चे के पिता के रूप में मंसाराम को स्वीकार करती है । इसीलिए वह रूढि, परम्परा और मान्यताओं पर विश्वास न करके, आधुनिक विचारधारा के साथ कदम मिलती है । अन्य नारी चरित्र 'भूरी' भी पूर्णतया रूढिमुक्त नारीपात्र है । क्योंकि सामाजिक परम्परागत पंचायतों पर उनको विश्वास नहीं है । दरअसल पति की मृत्यु के बाद समाज के लोगों ने उसे न्याय नहीं दिया था । इसीलिए यह पंचों और पंचायत का कड़ा विरोध करती है । जैसे कि - ''भूरी सनसनाकर बोली - तुम सजा दोगे ? रामसिंह के बाप को जिन्होंने मार डाला, उनके लिए सजा है तुम्हारे पास ?

- मर गया, तब क्या तुझे बदकारी का लैसंस दे गया ?

- मुखिया, तुम और तुम्हारे पंच उसे नहीं बचा पाए, वह तुमसे पंच होने का हक छीन ले गया । मैं नहीं मानती इस पंचायत को ।''[९९]

प्रस्तुत गद्यांश में भूरी के व्यक्तितत्व में विद्रोहभाव तो है ही, किन्तु साथ में समाज की पारंपारिक प्रणाली को तोड़ने की उत्सुक्ता भी दृष्टिगत होती है । इसीलिए सबके सामने पंचों के फैसले को पड़कारती है । अन्य उपन्यासों में भी पुष्पाजी ने पारंपारिक रीति-रिवाजों और पुरानी मान्यताओं को तोड़ा है । वह भी स्त्री पात्र के माध्यम से । जैसे

'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में मीरासिंह, एक ऐसा नारीचरित्र है । जो परिवार एवम् समाज की पाबंदी के बाद भी आँगनबाड़ी में नौकरी के लिए प्रस्थान करती है । उनका यह कदम साहसिकता का प्रमाण हो जाता है । जैसे - ''मगर इस स्त्री के लिए आँगनबाड़ी से सारा देश जुड गया, क्योंकि वह अब अपने बूते पर बाहर आ गई थी और उसकी हिम्मत देखकर महिला सशक्तीकरण की कार्यशालाओं से उसको बुलावा आता रहा था ।

'तब तुम घर में रहने लायक नहीं' पति ज्यादा क्या कुछ कह सकते थे ? हाँ सच वह घूँघट छोड़कर सलवार, कमीज पहनती, उन्हें निर्लज्ज लगती थी । अमर्यादित जीवन जीना सीखने वाली औरत व्रत-उपवास, साड़ी-जेवर के दायरे से निकल गई । गाँव की स्त्रियाँ ने भी थूका । और वह संस्था को परिश्रम से चमकाती रही । औरतों का दर्द ही सहायक था । अब वह समय के साथ-साथ बढ़ती हुई एम-८०, हीरा होंडा, ४ गेयर तक आ गई । सीखने के असीमित क्षेत्र में कदम दर कदम चलती रही । आज भी चल रही है, हजारों स्त्रियों के साथ ।''(१००)

सामाजिक रूढ़ि एवम् परम्पराओं का संपूर्णतया विध्वंश करते कई दृश्य मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित होते है । जहाँ परिवार की पुख्तैनी परम्परा को उखाड़कर फैकना, नारी परिवर्तन के स्पष्ट पद्चिन्ह है । वही पुख्तैनी मान-मर्यादा को छोड़कर, आधुनिकता के सस्वर में खुद का ढालना नवीनता की निशानी है । जैसे - रज्जो अपने पति की दहेलीज को लांधकर अपने प्रेमी ईसुरी को मिलती है । दरअसल यह एक परिवर्तन का प्रथ सोपान है । जैसे-कि ''वह कौन है,

जो आगे नहीं बढ़ने देता । डर है कि आगे बढ़ते ही संसार बिखर जाए गा । फिर भी ईसुरी के बिछोह का सूखा काँटा रह-रहकर कसकता है । उसे निकालकर फेंकना भी रास नहीं आता क्योंकि उसे दर्द के बिना हृदय वीरान हो जाएगा ।

वह उठी । हाथ में दिया थामा । बेंड़ा खोला और बाहर निकल आई । आँचल की छाँव में दीया जलाए । प्रेमाचन्द की कोठरी की ओर चल दी । न नाइन आगे न पिरभू संग- साथ । जो कुछ था अपना संकल्प था । लौ के संग आगे बढ़ी चली जा रही थी ।''(१०१)

इस प्रकार देखे तो रज्जो के चरित्र में परिवर्तन के गुण विध्यमान है । क्योंकि घर की मान-मर्यादा के बंधन को तोड़कर, वह प्रेमी को मिलती है । इसीलिए रज्जो रूढ़िमुक्त नारी चरित्र है । जो चार-दीवारी को छोड़कर मुक्त आकाश विहरना पसंद करती है । उपन्यास की अन्य नारीपात्र करिश्मा बेडिनी, भी संपूर्णतः रूढिमुक्त नारी चरित्र है । क्योंकि जिस प्रकार नगरीय परिवेश एवम् सभ्यता में नारी पूर्णरूप से स्वतंत्र होती है । ठीक उसी प्रकार करिश्मा भी पूर्णतया पाश्चात्य विचार से प्रभावित है । जैसे युरोपीय संस्कृति में महिलाओं का शराब पीना गुन्हा या अपराध नहीं माना जाता है । उसी प्रकार करिश्मा बेड़िनी के चरित्र में संपूर्णरूप से पाश्चात्य गुण स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते है । जैसे - ''बहरहाल बैरा वह सब ले आया, जो करिश्मा को चाहिए था । एक बोतल, दो गिलास और डोलची में बर्फ । साथ में खाने के लिए नमकीन सेब और प्याज । दो गिलास बराबर - बराबर ।

उठाओ, चियर्स । उठाओ न । देखों मैंने कितना कम डाला है । झेल जाओगी । कुछ होगा तो मैं तो हूँ । यार तुम कैसी पढ़ी-लिखी हो, दुनिया की कितनी चीजों को जानती हो ? रोटी-दाल की होकर रह जाती हैं तुम्हारी जैसी लड़कियाँ और जिन्दगीभर रोटी-दाल ही बनाती रहती हैं । घर वाले तुम्हें हर आनन्द से काटकर वाहवाही देते रहते हैं और खुद हर स्वाद के पीछे दीवाने रहते हैं ।''(१०२)

आज की नारियाँ, सामाजिक, मानसिक और आर्थिक रूप स्वतंत्र हुई है । दरअसल आधुनिकयुग के प्रभावोत्कर्ष वैचारिक दृष्टि से उनके चरित्र में बदलाव आया है । प्राचीन समय में जो नारी, अपनी मन की ईच्छाओं को अभिव्यक्ति दे नही पाती थीं । आज स्पष्ट रूप से अपने विचारों एवम् मंतव्यों को बिना संकोचता के साथ प्रस्तुत करती है । जैसे 'त्रिया-हठ' उपन्यास की स्मिता आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती है । वह तन और मन से स्वतंत्र है । अपने परिवार के सदस्यों के सामने पुरूष के साथ मित्रता होने का स्वीकार करती है । जैसे- ''परिचय? कैसा परिचय ? रिश्ता, क्या रिश्ता ? तुम लड़कों में यही बात बुरी है, डरते बहुत हो, मगर करना सब कुछ चाहते हो । मेरे दादा गजराजसिंह और मेरी दादी तक जानते हैं कि एक देवेश है, जो मेरा दोस्त है । ये समझ गए हैं कि जो लड़कियाँ पढ़ती-लिखती हैं, दोस्ती भी करती हैं । लड़कियों से भी, लड़कों से भी । यह बात और किसी ने नहीं, उन्हें मैंने समझाई है, क्योंकि उन्हें पता है, उनकी मीता चोरी-छिपे कोई काम नहीं करती, न करेगी ।''(१०३)

प्रस्तुत संदर्भ हमे आधुनिकयुग के पद्‌चिन्ह लगते है । क्योंकि प्राचीनयुग में स्त्री का अभिव्यक्त होना स्वीकार्य नहीं था । किन्तु आधुनिकयुग में स्त्री स्वतंत्र हुई है । स्मिता के चरित्र में पाश्चात्य संस्कार स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं । आधुनिक युग में नारी जागरण की भावना और शिक्षण व्यवस्था ने नारी में आत्मबल पैदा किया है । वह विवाह के नाम पर वर्षो से चले आ रहे शोषण को नकारकर मुक्ति के लिए विद्रोह कर उठी है । वैवाहिक विसंगतियों से परिचित 'कैरियरिस्ट' नारी के लिए विवाह-संस्था प्रायः महत्वहीन होती जा रही है । आज यह विचार भी पनपने लगा है कि जब बिना विवाह किए ही वैवाहिक जीवन के सुख का उपभोग किया जा सकता है, तो फिर विवाह-बंधन की आवश्यकता ही क्यों ? पुष्पाजी ने उक्त भाव का आँकन 'विजन' उपन्यास में किया है । जिसमें आभा द्विवेदी नामक डॉक्टर की विचारधारा, उपर्युक्त कथन को सार्थकता प्रदान करती है । जैसे - ''तब ही तो कहे - ब्याह करने की जरूरत क्या है आभा दी ? डॉक्टर बनकर अपना खर्च नहीं कमा सकते हमें ? कौन-सी पढ़ी-लिखी लड़की आजकल आत्मनिर्भर नहीं ? हमारी माँएँ नहीं कर पायीं, दुखिया रहीं, उनका दुख देखकर ही तो सन्तान को प्रायश्चित करना होगा । नहीं सोच पाई नेहा कि यदि कोई अपनी इच्छा से ब्याह करना चाहे तो ? आभा दी का उत्तर होगा - कौन चाहेगा हथकड़ियाँ लगवाना' ? बेडियाँ पहनना...''[१०४]

इस प्रकार आभा एक रूढ़िमुक्त नारी चरित्र है । वह विवाह-सम्बन्धी मान्यताओं पर विश्वास नहीं करती है । अपने आपको

मुक्त रखना पसंद करती है । क्योंकि उसकी मान्यता के अनुसार विवाह एक बँधन है । जिसमें नारी की स्वतंत्रता छिन जाती है । वह वैवाहिक बँधन से दूर होकर स्त्री के लिए नये पथ की अग्रगामी बनती है ।

कहा जा सकता है कि पुष्पाजी ने साहित्य के माध्यम से नारी जीवन की विविध झाँकियों को प्रस्तुत किया है । जहाँ पर लेखिका रूढिचुस्तता की हिमायत करती है । वहीं रूढिमुक्तता लिए आंदोलनकारी रवैया भी अपनाती है । उनहोंने अपने उपन्यास साहित्य में वर्णित नारी चरित्रों के जरिए, रूढ़ि मान्यताओं एवम् परम्पराओं का विध्वंश अवश्य करवाया है । किन्तु कार्यदक्षता में एहतियात जरूर बरती है । पुष्पाजी ने उपन्यास की पृष्ठभूमि पर नारी स्वतंत्रता के लिए आधुनिक एवम् पाश्चात्य् विचारधारा का सहारा अवश्य लिया है । जिसके फलस्वरूप नारियाँ कभी विवाह सम्बन्धी मान्यता को तोड़ती है । तो कभी सामाजिक बंधन, वैचारिक आंड़बर आदि को परास्त करती हुई दृष्टिगत होती हैं । इस प्रकार कहना हो तो लेखिका ने नारीजीवन की विकासयात्रा में रूकावट एवम् बन्धक बनने वाले हरेक पहलूओं को तोड़ना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य समझा है ।

३.९ मुक्त यौनाचार में विश्वास रखनेवाली नारी :

आधुनिक परिवेश तथा जीवन-मूल्यों के परिवर्तन ने प्रेम की परिभाषा ही बदल डाली है । आज प्रेम एक सहज प्रक्रिया के समान हो गया है । पाश्चात्य अनुकरणात्मक प्रभाव तथा फ्रायडीय मनोविज्ञान

एवं यौन मनोविज्ञान के आधार पर प्रेम का आत्मिक स्वरूप शरीरजन्य बुभुक्षा के समक्ष नगण्यप्राय: हो गया है । आत्मिक या प्लेटोनिक प्रेम, जो संस्कृति का आदर्श रहा है अब पुराना, अप्रचलित व अग्रगण्य प्रतीत होता है । डॉ. वेदप्रकाश भी इस बात का समर्थन करते हुए लिखते हैं – ''

प्रेम का अर्थ अब आत्मिक मिलन या जन्म–जन्मांतर का साथ नहीं है, वह अब दैहिक भोग या क्षणिक आवेश का पर्याय रह गया है ।''(१०५)

यौन आवेश मनुष्य को सबसे अधिक सम्मोहित करता है । मानव के इस यौन–सम्बन्धों की अनेकविध अभिव्यक्ति हिन्दी उपन्यासों में प्रारंभिक काल से होती रही है । आठवें–नववें एवं अंतिम दशक की भारतीय जनता यौन स्वच्छंदता के अनंत खुले आकाश में विचरण करने लगी है । युवा पीढ़ी यौनाचार में अधिक रस लेने लगी है । मैत्रेयी पुष्पा ने समय के साम्प्रत प्रवाह में अपनी लेखनी चलायी है । विशेषत: उन्होंने अपने साहित्य में परम्परागत व्यवस्था को खण्डित करने हेतु, नारी का मुक्त यौनाचारी रूपी विशेषता को प्रयुक्त किया है । दरअसल यौनक्रांति के माध्यम से रूढ़िगत समाज व्यवस्था को उखाड़कर फैकने की कटिबद्ध मंसा लेखिका के जहन की उपज ही है । प्रस्तुत विचार लेखिका के सृजन की पराकाष्ठा है । जिनमें वह नारी सशक्तिकरण का झण्डा लहराती है ।

मैत्रेयी पुष्पा के अधिकत्तर उपन्यासों में पाश्चात्य विचारधारा को अंकित किया है । जिसमें नारी अन्य पुरूष के साथ संभोग करके यौन तृप्ति करती है । जैस 'चाक' उपन्यास में 'कलावती चाची' मुक्त यौनाचार करती दृष्टिगत होती है । जैसे – 'वह यौन क्रांति के माध्यम से पहलवान कैलाससिंह की जवानी को जागृत करती परिलक्षित होती है । जैसे कि – ''मैंने कही – लुगाई है रे तू ? जबरदस्ती तैमद खोलकर फेंक दिया बंजमारे का । हाथ लगाऊँ तो बाँसन कूदे–उछिटे । अब क्या करूँ ? अरी मैंने कर्रे पकड़ लिया और ऐसे मालिस करी जैसे छः महिना का बालक हो । और फिर खाद पर लोट गई उसके बरब्बर में । बोल दिया कि लल्लू केलासी, भूल जाओ रिस्ते नाते । लाज लिहाज त्यागन कर दो । उमर का भेद नहीं रह गया हमारे बीच । इस घड़ी तुम मर्द और मैं बैयर ... सारंग, जो काम उस नाँसिया को करने थे, सो मैंने किए । मरी मरदानी को हाथ फेर–फेरकर चेतन्त किया और तुरत ही अपने लत्ता खोल के एक ओर पटक दिए । जता दिया, समझा दिया कि मेरा कुछ नहीं बिगड़ा जाता । और फिर ये तो देह रहते के खेल हैं रे । पाप–पुन्न मत सोचना ।

मइया ! इतनी खुस तो मैं तब भी नहीं हुई थी, जब पहली बेर रिसाल के दादा... । मैंने उन लल्लू को छाती से चिपकाकर, हार और जीतकर आनंद में डुबो लिया । रस ही रस फिर तो । ऐ मेरे भगवान, ऐसा दिन भी आना था मेरी जिंदगानी में ?''[१०६]

प्रस्तुत सन्दर्भ से स्पष्ट होता कि कलावती चाची यौन क्रांति करती है । हाँलाकि यौनक्रांति के माध्यम से समाज की परम्परा का ह्ास होता है ।

किन्तु साथ में नयी चेतना का संचार भी होता है । जिसके कारण नपुसंकता का आवरण हटता है । पूर्ण स्वच्छंदता की लहर हिल्लोरे लेती है ।

'चाक' उपनयास की नायिका सारंग भी साम्प्रत समय प्रवाह की धारा के साथ बहती है । पति रंजीत के अलावा स्कूल मास्टर श्रीधर के साथ दैहिक सम्बन्ध जोड़ती है । हालाँकि अन्य पुरूष के साथ शारीरिक सम्बन्ध कायम करना, यानी परम्परागत मूल्यों का हास् करना ही है । किन्तु परम्परा से मूँह फेरने का मतलब आधुनिक विचार एवम् रहन-सहन को अपनाना है । जैसे सारंग और श्रीधर की कामुक चेष्टाएँ इस प्रकार है - "... मगर जैसे ही श्रीधर की बाँहों की जकड़न देह पर कसने लगी च् च् च् करती हुई मछली सी छटपटाने लगी । पंख पसारते - पसारते मोरनी केंक - केंक करती है । श्रीधर कभी ब्लाउज के ऊप हाथ धरते है, तो कभी कनपटी पर चुम लेते हैं ।

ज्वार उमड़ा तो खुद ही बटन खोल दिए ब्लाउज के । नजर श्रीधर की नजर में मिला दी दुगुनी आतुरता से प्यार करने लगी उनको सनसनाता ज्वार सिर चढ़कर बोलने लगा । अब रूकना-ठहरना कैसा ? मोहलत नहीं देती देह फिर ।

धायल श्रीघर के ऊपर हौले से उतर गई सारंग...... लहरों पर लहरें ! अपने आप को तोड़कर श्रीधर को जिता रही है ! उनकी नस-नस में अपना सत्त भरे दे रही है । उनकी देह के रोम-रोम में बहती पीर सोखे ले रही है । होंठों के बीच ताप की ध्वनियाँ ...श्रीधर को रसकलश पिलाकर रिता डाला ।

.... आनंद के लम्बे, बहुत लम्बे क्षण ! निर्विकार हो चली वह ।''(१०७)

सारंग की शारीरिक एवम् मानसिक प्रस्तुती मूलतः निर्विवादास्पद यौनक्रांति के प्रथम चरण है । जिसमें वह अन्य पुरूष श्रीधर के साथ समागम करती दृष्टिगत होती है । दरअसल सारंग का उद्देश्य नारी को मुक्त करना ही है । इसके लिए पथ चाहे कोई भी हो । यानी मुक्त यौनाचार के जरिए सारंग नारियों को स्वतंत्रता की राह पर चलने का आह्वान करती है ।

सारंग की तरह कुसुमाभाभी भी यौन सम्बन्धों के पीछे पड़ी नारी है । कुसुमाभाभी 'इदन्नमम' उपन्यास का नारी चरित्र है । जो उन्मुक्त यौन सम्बन्धों में विश्वास करती है । क्योंकि पति के द्वारा अवहेलना के बाद वह पंचमसिंह के छोटे भाई अमरसिंह (दाऊजू) के साथ मुक्त यौन-सम्बन्ध स्थापित करती है । जैसे ''दाऊ जू ने झूमकर कुसुमा भाभी को बाँहों में बाँध लिया ।

कुसुमा, अकेली सीता जू धरती में समा गई थीं । हम तुम्हें भूमि समाधि नहीं लेने देंगे । देह धरी है तो देह का हक्क भी होता है । कुसुमा ! देह की जरूरत भी ।

दाऊजू, तुमने तो पूरे सुखसागर का सत्त निचोरकर घट भर लिया ! मरम छू लिया दाऊ जू ! यह ककराभरी छत नरम गदेला हो गई । पोर-पोर से नेह निचुरता है ।

पगलू, हमने तो अब जाना है कि औरत धरती जैसी होती है । सारे भार को फलों की तरह समेटती हुई इमरतदान देती है आदमी को ।''(१०८)

कुसुमा ने अपने पति से ऊबकर दाऊजू से मुक्त यौन-सम्बन्ध जोड़ती है । जो एक तरह से परम्परा का खण्डन ही हुआ हैं । क्योंकि भारतीय संस्कृति में पति की मौजुदगी में पत्नी अन्य पुरूष के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है, तो वह व्याभिचारी मानी जाता है । किन्तु पाश्चात्य संस्कृति में ऐसा करना कोई नयी बात नहीं । इसीलिए कुसुमाभाभी पाश्चात्य विचारधारा की धनी है । वह अन्य पुरूष के साथ शयन करके मुक्त यौनाचार करती है ।

पुष्पाजी के उपन्यास 'झूलानट' में भी नायिका शीलो यौन सम्बन्ध स्थापित करती है । 'झूलानट' और 'इदन्नमम्' के नारीचरित्र शीलों और कुसुमा समान परिस्थिति की शिकार बनती है । शीलों का पति के द्वारा त्याग होने से वह अपने देवर बालकिशन (बालू) के साथ शारीरिक सम्बन्ध जोड़ती है । जैसे- ''आवेग के क्षण या प्यार का असीम वेग- शीलो भाभी ने बाँहों में भर लिया उसे और चूम लिया । एक बार नहीं । कई बार लिया चुंबन पुच्च-पुच्च पुच्च ।

भाभी के पुचकारे भरे हमले जारी थे । अब वह भाभी की गोद में विचर रहा था ।

वह अबोध बच्चे-सा... शीलो भाभी गुनी औरत है, उसे चिपटाती जा रही है । गरम सीने में बरसों का जुड़ा ताप, बालकिशन का रोम-रोम झन्ना उठा । जवान होते बछड़े कैसे बिफरते हैं, अपने भीतर महसूस हो रहा है । बेकाबू बछड़ा बालकिशन, काबू में कर लिया शीलो भाभी ने !''[१०९]

प्रस्तुत संदर्भ शीलो के चरित्र का चित्रांकन करता है । जिनमें परम्परा का खणड़न ही उनका लक्ष्य लगता है । अपने देवर के साथ यौन सम्बन्ध जोड़कर समाज की प्राचीनतम सभ्यता पर मानो तमाचा मारती है । तो 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवन भी निर्धारित सफर में सबसे आगे निकलती है । क्योंकि भुवन अपनी बड़ी बहन के बेटे चन्दर के साथ यौन सम्बन्ध जोड़ती है । जैसे – ''हम कोठे में आ गए । दोनों एक–दूसरे का हाथ पकड़े थे, अँधेरे में प्यार करना बड़ा आसान, सुविधापूर्ण था । प्यार के नाम पर एक–दूसरे को बाँहों में भीच लेना था । एक–दूसरे में समा जाना, दुनिया के साम्राज्य को फतेह कर लेना था । भुवन जैसे जन्म–जन्म की प्यासी हो । मेरी देह का कोई हिस्सा मेरा न था । उसका शरीर मेरे हवाले था । मन में उमड़ता प्रेम तन पर ऐसे लहराता है, पता न था । एक–दूसरे में समाना किस हद तक होता है, यह भी मालूम न था ।

उस रात हम एक–दूसरे के लिए समर्पित होने का प्रमाण देना चाहते थे, अँधेरा बड़ा सहायक था । गर्मी थी, पसीना था, मगर परवाह न थी । मंजिल की चाह ने मदहोश कर डाला ।''(११०)

यह सम्बन्ध भारतीय संस्कृति में अमर्यादित आचरण के अंतर्गत आता है। लेकिन चन्दन और भुवन के बीच स्थापित सम्बन्ध में वातावरण और मनोविज्ञान का बहुत बड़ा हाथ है । इस सम्बन्ध का मनोवैज्ञानिक कारण प्रस्तुत करते हुए 'अनंत विजय' लिखते हैं । ''जिस परिवेश और परिस्थिति में चन्दन और भुवन पल–बढ़कर उम्र के ऐसे दौर में पहुँचे थे । उसमें यह सब होना स्वाभाविक नहीं तो असंभव भी नही है । (१११)

नारीचेतना को जागृत करनेवाली लेखिका पुष्पाजी ने अपने हरेक उपन्यास में यौन सम्बन्धों को प्राधान्य दिया है । 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में लेखिका ने नारी की यौन सम्बन्धों को विचारों में परिवर्तन किया है । नारी की इस बदलती सोच ने उसे व्यवहार के धरातल पर स्वच्छन्द बना दिया है । अतः विवाह पूर्व यौन सम्बन्धों के प्रति आज की आधुनिक नारी की स्वच्छन्द विचार रखती है । जैसे 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास की 'अल्मा' आधुनिक खयालातवाली नारी है । विवाह पूर्व राणा के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करती है । मूलतः अल्मा आदर्शवादी नारी नहीं है । किन्तु यथार्थवादी भोग्या नारी चरित्र है । जैसे - ''गजब, अल्मा ने कुर्ती उतार दी । अल्मा ने सलवार कहाँ फेंक दी ? जाँधों का नंगा परस ... राणा के होश ठिकाने नहीं । मर्द-भाव जागा कि अल्मा की शय-लय पर नाचने लगा, पाजामा उतार दिया । क्या कर रहे हो ? यहाँ यहाँ ? ऐसेऽऽए... हट्ट ।

क्या कर रहे हो ? धीरे ! मर जाऊँगीऽऽई... अल्मा ने राणा को नीचे धकेल दिया । 'देखते नहीं... कितनी लगती है ।''(११२)

भारतीय संस्कृति में स्त्री का अन्य पुरूष पात्र के साथ सम्बन्ध स्थापित करना व्यभिचार समझा जाता है । क्योंकि सामाजिक परिपाटी पर प्रस्तुत सम्बन्ध अनैतिक व्याख्यायित होता है । 'कही ईसुरी फाग- उपन्यास की रज्जो, अपने पति प्रताप के अलावा फाग गानेवाले ईसुरी फगवारे से शारीरिक सम्बन्ध जोड़कर सामाजिक निषेधों को तोड़ने का अथाग प्रयास करती है । जैसे - ''ईसुरी रज्जो को बुलाते हैं रात के समय, और रज्जो ईसुरी को अपने पास आने का रास्ता बताती है । वह

कहती है कि पच्छिम की दिशा में पीछे की खिड़की से गौ शाला के रास्ते आना । गायें तुम्हें पहचानती हैं मेरे कोठा में धूँधटार खिड़कियाँ हैं, वहीं में सोती हूँ ।''[११३]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि नारीवादी लेखिका पुष्पाजी ने भारतीय संस्कृति के साथ वर्णित मर्यादा, शील, लज्जा जैसे शब्दों को नारी के साथ से इस कदर हटाने का प्रयास किया है कि उन्हें पाप नहीं माना जाय । नारी निर्विवाद रूप से अब इन बंधनों से मुक्त हो रही है । लेखिका ने उपन्यासों में वर्णित नारी चरित्रों के माध्यम से उक्त कथन की पृष्टि की है । पुष्पाजी ने बड़ी सजगता एवम् साहसिकता से नारी के सन्दर्भ में यौन-सम्बन्धों के प्रश्नों को अपने साहित्य में स्थान दिया है । जैसे - 'चाक' की सारंग, कलावतीचाची, इदन्नमम् की कुसुमाभाभी, झूलानट की शीलो, अल्माकबूतरी की अल्मा, और कही ईसुरी फाग की रज्जो आदि नारियाँ मुक्त यौनाचार करती है । पुष्पाजी के नारीपात्र शारीरिक आवशयकताओं को महसूस ही नहीं करतें बल्कि खुलकर उनकी आपूर्ति की माँग भी करते है ।

३.१० राजनीतिज्ञ नारी :

सन्-१९९५ ई. में बीजिंग के चौथे विश्व महिला सम्मेलन का मुख्य विषय महिलाओं के राजनीतिक सबलीकरण का था । यद्यपि मताधिकार तथा उम्मीदवार बनने के अधिकार पहले से ही इन्हे प्राप्त हैं, तथापि महिलाओं की भागीदारी विद्यायिकाओ में अल्पसंख्य है । जीवन के अन्य क्षेत्रों की भाँति राजनीति के क्षेत्रे में भी अब महिलाएँ

अपना योगदान देने लगी है । जैसे श्रीमति मार्गॉरेट थ्रेचर, श्रीमती भण्डार नायक, श्रीमती इन्दिरा गांधी, श्रीमती मेनका गांधी, कुमारी चन्द्रिकाकुमार तुंगे, शेख हसीना, बेनजीर भुट्टो, सुचेता कुपलानी, विजयालक्ष्मी पंडित, कुमारी जयललिता, सोनिया गांधी, कुमारी मायावती, ममता बेनर्जी, उमा भारती जैसी अनेक महिलाएँ हमें राजनीति के क्षेत्र में मिलती हैं ।

ग्रामीण क्षेत्रों में हमें इस स्तर की राजनीतिज्ञ महिलाएँ मिलती है । तथापि मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में उपर्युक्त भाव पूर्णअंश से निहीत हुएँ है । पुष्पाजी कृत 'चाक' उपन्यास में सारंग एक राजनीतिक नारी चरित्र है । जो अन्य समर्थकों की सहायता से राजनीति के क्षेत्र में पर्दापण करती है । जैसे – ''यह बताओं, जब घर परिवार में औरत का दखल हो सकता है, तो राजकाज में क्यों नहीं ? हमारे संविधान में औरत को बराबरी का दर्जा मिला है ।''(११४)

अन्य जगहों पर सारंग सामाजिक आततायियों के विरोध के बावजूद भी प्रधान पद के चुनाव में खड़ी होना चाहती है । वह अलीगढ़ जाकर पर्चा भरती है । जैसे ''सारंग पर्चा भरने लगी – नाम : सारंग नैनी, पति का नाम : रंजीतसिंह ... लिखते ही नामालूम सी कँपकँपी लगी उँगलियों में । लाल किनारी की सफेद धोती में यह कौन ? सोऊ बिसे रंजीत की बहू ? भँवर ध्यानमग्न है पर्चा भराने में –– ।''(११५)

सारंग के चरित्र में राजनीतिज्ञ व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है । एक ओर से सामाजिक विद्रोह ही कहा जाता है । क्योंकि

चुनाव पर अधिकत्तर पुरूषों का प्रभुत्व ज्यादा रहता है । किन्तु सारंग पुख्त परम्परा को तोड़कर, राजनीति के क्षेत्र में कदम रखती है ।

'इदन्नमम्' उपन्यास की नायिका मंदा (मंदाकिनी) भी एक राजनीतिज्ञ के रूप में, उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । ग्रामीण क्षेत्र में शैशवकाल से अनेक प्रकार के संघर्षो से गुजरते हुए मंदा मजदूरों की नेता हो जाती है । वह मजदूरों का यूनियन बनाती है और उस यूनियन के माध्यम से मजदूरों के हक के लिए लड़ती है और ग्रामीण लोगों को वोट का महत्त्व समझाते हुए कहती है कि - ''ये नेता लोग हमें जीवित आदमी नहीं, केवल वोट समझते हैं । हम सोचने - समझने का माद्दा रखनेवाले इन्सान नहीं, इनकी निगाह में कागज पर ठुकी मोहर हैं ।

सुख-दुख, लाभ-हानि, खुशी-गमी हमें नहीं व्यापती । हम तो इनके इस्तेमाल की चीज हैं । जिसे वे चाहे जब प्रयोग करें, चाहे जब खारिज कर दें ।(११६)

अन्य जगहों पर मंदा राजनीतिज्ञों के असली चहेरों को प्रदर्शित करते हुए कहती हैं कि - ''राजनीति का आदमी डाकू, चोर, ठग से भी ज्यादा खतरनाक हो जाता है, क्योंकि इनमें से भी वह किसी एक का पेशा नहीं अपनाता । समय-समय पर तीनों के हथकड़ें इस्तेमाल करता है और अपने-आपको सबके सामने ऐसा साध-तोलकर परोसता है कि भूले से भी भ्रम न हो उसकी असलियत का ।

एक ओर अपनी वाणी से चमत्कृत करते हैं लोगों को । दूसरी ओर कथनी और करनी को अलग-अलग करके रखते हैं ।''(११७)

दरअसल 'इदन्नमम' उपन्यास में मन्दा जनवादी नारी चरित्र है । एक सच्चे राजनीतिक व्यक्ति के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । वह शोषित एवं पीड़ित लोगों को जागृत करने के लिए कार्यरत रहती है ।

मैत्रेयीजी ने 'त्रिया-हठ' में नारियों को चुनावी कथकण्डों में प्रविष्ट के रूप में चित्रित किया है । जैसे मीरा अपनी मामी के प्रधान-पद के प्रचार के लिए कार्यरत होती है । क्योंकि मीरा पढ़ी-लिखी एवम् समझदार नारी है । फलस्वरूप गँवारों को समझाने में आसानी होगी । इसीलिए मीरा को बुलाया जाता है । जैसे - ''मुझे बुलाया गया, क्योंकि मामी प्रधान-पद की उम्मीदवार के रूप में खड़ी हुई हैं । बहन-भानिज वोट माँगने में सहयोग करेंगी तो सहूलियत हो जाएगी । आदमियों को तो आदमी ही पटा लें, असल दारोमदार तो औरतों पर है ।''(११८)

इस प्रकार कहे तो मीरा के व्यक्तित्व में राजनीतिज्ञ के गुण विध्यमान है । जो औरतों को अच्छी तरह समझा सकती है । इसीलिए मामी को पूर्णतया विश्वास है कि मीरा की सहायता से वह चुनाव जीत सकती है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने नारी चरित्रों को यातनाओं की विभिन्न परिपाटी पर नापकर परिमार्जित किया हैं । 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा जहाँ अस्तित्त्व को कायम करने की दौड़ में प्रयत्नशील है । वहीं उसके चरित्र का चरमोत्कर्ष होता है । एक ओर वह भोग्या बनकर विकास पथ

को कायम करती है । अंततः वह एक राजनीतिज्ञ चरित्र के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । जैसे श्रीराम शास्त्री की मृत्यु के बाद, शास्त्री के निर्वाचित क्षेत्र से चुना लड़कर अल्मा समाजकल्याण मंत्री बनती है । जैसे - "दूसरे दिन के राष्ट्रीय और स्थानीय अखबारों के मुखपृष्ठों पर जो तस्वीर छपी, उसमे अल्मा मुख्यमंत्रीजी के पास खड़ी बातों में संलग्न है । राज्यपालजी नजदीक खड़े सुन रहे हैं ।

दूसरी सूचना थी, सत्तारूढ़ पार्टी की ओर से यह संभावना व्यक्त की जा रही है कि श्रीरामशास्त्री के निधन के कारण बबीना विधानसभा की जो सीट खाली हुई है, उसके लिए प्रत्याशी श्रीमती अल्मा शास्त्री होंगी ।"(११९)

प्रस्तुत उपन्यास में अल्मा एक सशक्त नारी पात्र है । वह बाहरी एवम् आंतरिक यातनाओं को सहकर, अपने व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं । अंत में लेखिका ने अल्मा के चरित्र को राजनीति में धकेलकर, पूर्वपर की यातनाओं को नष्ट किया हैं । मूलतः अल्मा की चारित्रिक विशेषताओं में राजनीतिक पद्चिन्ह स्पष्ट दृष्टव्य होते है ।

अंततः कहना हो तो पुष्पाजी ने नारी चरित्रों के विभिन्न रूपों को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है । जिनमें राजनीतिक नारीचरित्र पर विशेषतौर बल दिया है । जैसे राजनीतिज्ञ के रूप में पुष्पाजी ने 'चाक' में सारंग नैनी को, 'इदन्नमम' में मंदा और अल्मा कबूतरी की अल्मा और त्रिया-हठ की मीरा आदि नारियाँ को प्रस्तुत किया है । जो अपने चरित्र के विकास के लिए राजनीति की सहायता लेना आवश्यक ही नही अनिवार्य समझती है ।

३.११ दार्शनिक प्रभाववाली नारी :

बीसवीं सदी की सशक्त महिला लेखिका मैत्रेयी पुष्पाने अधिकत्तर, नारीवाद को लेकर अपने उपन्यासों सृजन किया है । नारीचरित्र के विभिन्न रूपों को सूक्ष्मतम रूप से उद्‌भाषित किया है । दरअसल लेखिका ने दार्शनिक विचारधारा को अपने उपन्यास साहित्य में स्थान दिया है । उनमें भारतीय दर्शन को विशेष रूप महत्व दिया गया है ।

मैत्रेयी पुष्पा विरचित 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में लेखिका ने रज्जो को दार्शनिक नारी के रूप में चित्रित किया है । मूलतः रज्जो का दर्शन लौकिक से अलौकिक की ओर निर्देश करता है । जिनमें प्रेम तत्त्व को प्राधान्य दिया गया है । जैसे वह कहती है कि -''वह सास के बेटे का स्वर बन गई हो । शरीर का साथ वर्षों से नहीं रहा, वहीं मन इस कदर बँधा था, इस बात को खुद भी अब जान पाई है । कह तो रही थी - गंगिया जिज्जी, हमें लगता है कि प्रेम के लिए देह जरूरी नहीं है, पर देह के लिए प्रेम जरूरी है । उनके तन की खाक ही मिल जाती, हम देह में लगाकें साँची जोगिन हो जाते । जोगिन का यह झूठा-सच्चा रूप गंगिया जिज्जी, अब कितनी देर और धर पाएँगे ?''[१२०]

प्रस्तुत संदर्भ रज्जो की दार्शनिकता चित्रित करता है । जो भारतीय दर्शनशास्त्र के अनुसार आत्मा को परमेश्वर के रूप में स्वीकार जरूर करता है । किन्तु रज्जो के लिए प्रेम से बढ़कर कोई दर्शनशास्त्र नहीं है । विशेषतः भारतीय नारी के लिए पति ही भगवान और सर्वस्व होता है । तो रज्जो की अन्तिम कामना पति की शरीर की खाक से ही जोगिन बनकर रहना पसंद करती है ।

तो कहीं पर लेखिका ने मीरा की साधना को मन्दा के माध्यम से उजागर किया है । क्योंकि मीरा के लिए गिरिधर ही सर्वस्व था । उसी प्रकार मन्दाकिनी के लिए मकरन्द गिरिधर के समान है । मकरन्द के चरित्र में मन्दा को गिरिधर की झाँकियाँ दिखाई पड़ती है । इसीलिए मन्दा बैरागिन नारी के रूप में दृष्टव्य होती है । जैसे सुगना कहती है कि- ''अब मन्दा पहली तरह मन से कीर्तन नहीं गाती । पहली जैसी उमंग नहीं है । बैरागिनी-सी होती जा रही है । हमारे जाने जोगिन - बैरागिन न हो जाय । सुनती नहीं हो, मीरा के भजन गाते-गाते कैसा रूआँसा स्वर फूटता है । लगता है, कोई बियोगिनी रो रही है ।''[१२१]

पुष्पाजी ने 'चाक' उपन्यास में दैहिक भोग के पश्चात ईश्वरीय मार्ग को सारंग के माध्यम से निर्देशित किया है । दरअसल लेखिका ने 'ओशो रजनीश' की साधना पद्धति को अपनाया है । जिनमें मन को मुक्त घोड़े की तरह दौड़ना और थककर अपना रास्ता प्रशस्त करना । क्योंकि मानव शरीर नश्वर है तो इस नश्वर शरीर से अन्य को सहायता प्रदान करें ? जैसे - सारंग की सोच है कि ''अगर तुम्हारी आँखें इस देह को देखकर आनंद पाती हैं तो जी भरकर देखो मुझे । मेरा देह धरना सुकारथ हो गया । परस से तुम्हारे धाव सिराते हैं तो छुओ न, मेरी सुंदरता सार्थक हुई । भोग करन से तुम्हारे प्राण तृप्त हों, तो आओ, रात बाकी है अभी । भवसागर से पार उतर जाऊँगी मैं । अपना कहने के लिए कुछ भी नहीं.... हरी-भरी देह- जो एक दिन सूख जाएगी, मुरझा जाएगी । पतझर और सूखा की रखवाली कौन करता है ?[११३]

'चाक' उपन्यास में लेखिका ने शरीर को महत्व न देकर आत्मतत्व को विशेष प्रधानता दी है । क्योंकि देह पंचतत्वों का बना है और यह अजर, अमर नहीं है, तो क्यों न उसका भोग किया जाय । इसीलिए लेखिका ने सारंग के जरिए सूफि साधना लौकिक से अलौकिक को अपनाकर मुक्ति की कामना की है । कहीं पर लेखिका ने सामूहिक प्रेम के सामने व्यक्तिगत प्रेम की अवहेलना की है । जैसे 'त्रिया-हठ' उपन्यास में लेखिका ने मोती एवम् धागे के माध्यम से प्रेम के दार्शनिक स्वरूप को प्रस्तुत किया है । जिनमें किसी के प्रेम की चाहना बरसों से कर रहे हो, उसे प्रेमी से बिछड़ना और बिछड़कर मिलना असह्य हो जाता है । जैसे मीरा की सोच है कि -''क्या सामूहिक प्रेम भी हुआ करता है ? मोती, जो माला में पिरोह जाते हैं, एक धागे के प्रेम में अटके रहते हैं । अगर वह धागा टूट जाता है, मोती बिखर जाते हैं । मोती बटोर लिए जाते हैं, मगर फिर उसी धागे में पिरोए नहीं जाते । क्या किसीने मोतियों से पूछा है कि वे उस शापग्रस्त धागे की चाह में जी रहे हैं, चमक रहे हैं , अपनी आब बनाए हुए हैं, क्योंकि वे उस अभिशप्त धागे की टूटन का क्रंदन सुन रहे हैं । मगर अब जिंदगी की वह कहानी कहाँ ।''(१२३)

उपर्युक्त सन्दर्भानुसार लेखिका ने प्रेम के स्वरूप को स्थुल से लेकर सूक्ष्मता की ओर निर्देश किया है । क्योंकि मीरा के लिए बैरागी एक धागे समान था । किन्तु समय की विविध परिस्थितियों को वश होकर, मोती रूपी मीरा का मिलन शापग्रस्त धागे में होना दृष्कार्य है ।

इसीलिए लेखिका में मोती एवम् धागे के दृष्टांत के जरिए प्रेम के शाश्वत रूप को प्रस्तुत किया हैं ।

'विजन' उपन्यास का सृजन लेखिका ने डॉक्टरी दुनिया की चरम-दमक के पीछे कुण्ठाग्रस्त लोगों की मानकिता को प्रस्तुती देने के लिए किया गया है । दरअसल आँख के डॉक्टरों की एक सजीव गाथा है । जिनका मुख्य सूत्रधार डॉ. नेहा है । वस्तुतः डॉक्टरों की दुनिया का निर्माण वैज्ञानिक बातों एवम् सिद्धांतों पर होता हैं । किन्तु डॉक्टरी व्यवसाय से संलग्न लोग भी दर्शनशास्त्र पर विश्वास रखते है । उनका सजीव उदाहरण डॉ. नेहा है । वह मानती है कि लोगों की सोच गलत है । क्योंकि जन्म और मृत्यु इस पृथ्वी का कालचक्र है । हरेक दिन व्यक्ति जन्म लेता है और हरेक दिन उनकी मृत्यु होती है । डॉ.नेहा अन्य लोगों कहती है कि -" आदमी यहीं आकर रूक जाता है । आपने गीता पढी है न, यहीं रूककर अपने शरीर रूपी कपड़े बदलता है ! मौत ही तो नये कपड़े लेकर आती है । देखो न, हमारे ही अस्पताल के मैटरनिटी वार्ड में आज राज कितने-कितने मनुष्य चोला बदलकर जन्मे हैं । जन्म को कोई मृत्यु कैसे कहे ? कहते हैं न मौत अमृतमयी होती है ।"(१२४)

प्रस्तुत सन्दर्भ में लेखिका ने मानव जीवन की गहन दार्शनिकता को प्रस्तुत किया है । क्योंकि व्यक्ति के लिए जन्म शुभ एवम् मंगलकारी है, तो क्याँ मृत्यु अमंगलकारी है । दरअसल मृत्यु में अमरतत्त्व रहता है । जो जन्म में नशीब होता है इस प्रकार पुष्पाजी ने दार्शनिक नारी के रूप में, नारी को प्रस्तुत करके पूरे जीवन के विभिन्न रहस्य को उजागर

किया है । जिसमें अस्तित्व से लड़ना भी और मौत को अमृतमयी मानकर हँसते-हँसते अपनाना भी है ।

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः कहना हो तो तृतीय अध्याय के अन्तर्गत मैंने मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में प्रस्तुत नारीपात्रों के विभिन्न रूपों को विश्लेषित किया है । जिनमें माता, पत्नी, प्रेयसी या प्रेमिका, रूढ़िचुस्त, रूढ़िमुक्त, कामकाजी नारी, यौन क्रांतिकारी नारी या मुक्तयौनचारी नारी राजनीतिज्ञ और दार्शनिक नारी चरित्रों को उद्भाषित किया गया है ।

मैत्रेयी पुष्पा मूलतः आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी लेखिका है । उन्होंने अपने उपन्यासों में नारियों के नाना प्रकार के रूपों को अभिव्यक्ति दी है । विशेषरूप में नारी चरित्रों के विभिन्न रूपों को नवीनतम व्याख्या में बाँधा है । जहाँ पर आदर्शवाद के अन्तर्गत नारी को चिष्टाचार में रहना अनिवार्य है । वहीं लेखिका ने उक्त मान्यता एवम् धारणा को खण्डित करके मुक्तता को प्राधान्य दिया है । लेखिका के सभी उपन्यासों नारी के काम रूप क विशेष महत्व दिया गया है । दरअसल लेखिका का उद्देश्य यौनक्रांति के जरिए सामाजिक क्रांति करवाना ही रहा है । फलस्वरूप अधिकांश तया वह सफल रही है । राजनीतिक रूपों में लेखिका ने नारीपात्रों की सूक्ष्मतम भाव-भंगिमाओं को सरलता एवम् उत्तेजना के साथ प्रदर्शित किया है ।

पूर्णतया देखे तो पुष्पाजी की नारियाँ, अपनी समयानुसार अवस्था में विभाजित होकर सामाजिक उत्त्थान के लिए सदैव कार्यरत रहती है । जिनमें विशेषत: 'चाक' की सारंग नैनी, 'इदन्नमम' की मंदाकिनी बेतवा बहती रही की उर्वशी, 'अगनपाखी' की भुवन मोहिनी, 'अल्मा कबूतरी की अल्मा, कही ईसुरी फाग की रज्जो, विजन की डॉ.नेहा, त्रिया-हठ की मीरा और झूलानट की शीला आदि नारियाँ कार्यरत रही है ।

संदर्भ सूची

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१.	विष्णुपुराण :स्त्रि शिक्षणात्री वटवाल	जयशंकर बाबर	७६
२.	कामायनी	जयशंकर प्रसाद	१०५
३.	गोदान	प्रेमचन्द	२५१
४.	उर्वशी	दिनकर	१२
५.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१२
६.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५५–५६
७.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२३
८.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३
९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२०
१०.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३६
११.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१५७
१२.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१११
१३.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२९५
१४.	मनुस्मृति में नारी	डॉ. सुमंगला झा	३३
१५.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२७
१६.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९६
१७.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५
१८.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८८

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२६
२०.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९६
२१.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६७
२२.	कही ईसुरी फाग(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१११
२३.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४
२४.	रामदरश मिश्र के उपन्यासों में नारी-शोध-प्रबंध	मनहर के. गोस्वामी	३०९
२५.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२०६
२६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५५
२७.	वही (उपन्यास)	वही	२५३
२८.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	वही	३१
२९.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०४
३०.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४७
३१.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५
३२.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७९
३३.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७८
३४.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३८
३५.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८१
३६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८६
३७.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
३८.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१
३९.	हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ. बीना रानी यादव	८०.
४०.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०६–३०७
४१.	वही	वही	३०७
४२.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६५–६६
४३.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६४–६५
४४.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९२
४५.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३७
४६.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७१
४७.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४
४८.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३८५
४९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५२
५०.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८९
५१.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१९६–१९७
५२.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२६
५३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८७
५४.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५०
५५.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४८
५६.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९९

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
५७.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६९
५८.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४८
५९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७९
६०.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३८
६१.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१७८
६२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०२-१०३
६३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६१
६४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१७९
६५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२२
६६.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१
६७.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५२
६८.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४५
६९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१५
७०.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६१
७१.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६७
७२.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४४-४५
७३.	हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ. वीना रानी यादव	८०
७४.	स्वातन्त्रयोतर हिन्दी कहानी में नारी चरित्र की अवधारणा	डॉ. नीलिमा वर्मा	१२५

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
७५.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८
७६.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११
७७.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३५९
७८.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६०
७९.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८७
८०.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३९८
८१.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५०
८२.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४२-४३
८३.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९७
८४.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३६
८५.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२७
८६.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३८८-३८९
८७.	हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ. वीना रानी यादव	९८
८८.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८३
८९.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२१
९०.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२
९१.	नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१५९-१६०
९२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७०

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
९३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५६
९४.	नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१५५
९५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४–७५
९६.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११२
९७.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८४–८६
९८.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३५
९९.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७६
१००.	कही ईसुरी फाग(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६३
१०१.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८९
१०२.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५७–२५८
१०३.	त्रिया–हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०५
१०४.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३९
१०५.	नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१५६
१०६.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०४
१०७.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२४–३२५
१०८.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८६
१०९.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७२
११०.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५३

क्रम सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१११. हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक अंक-३)	जुलाई सित २००७	(पत्रिका)
११२. अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८२-१८३
११३. कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७२-७३
११४. चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४००
११५. चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०६
११६. इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०९
११७. वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०९-४१०
११८. त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११
११९. अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३९०
१२०. कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२७८
१२१. इदन्न्मम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२००
१२२. चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२९
१२३. त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३१
१२४. विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८

चतुर्थ अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्रों की विशेषताएँ ।

- प्रस्तावना

४.१ नारी का बाह्य सौन्दर्य

४.२ नारी में वात्सल्य एवं ममत्व

४.३ नारी में परंपरा के प्रति विध्वंशता एवं साहसिकता

४.४ बहुजन हिताय और सहानुभूति

४.५ प्रस्तुत नारी चरित्रों में विद्रोहभावना

४.६ नारी चरित्रों में भारतीय सांस्कृतिक विरासत

४.७ अस्तित्व की सार्थकता एवं अस्मिता संघर्ष :

४.८ प्रस्तुत नारी चरित्रों में आधुनिकता

४.९ जूझारूपन एवं अड़िगता

४.१० नारी चरित्रों में मनोवैज्ञानिकता

- निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्रों की विशेषताएँ ।

प्रस्तावना

उपन्यास इस नये युग की नयी विधा है । यथार्थधर्मिता उसका प्राणतत्व है । अतः जिस उपन्यासकार को जीवन का जीतना ही गहरा अनुभव होगा, प्रत्यक्ष और अपरागत अनुभव होगा, यथार्थ चरित्रांकन पर वह उतना ही सही उतरेगा । उपन्यास के प्रारम्भिक दौर में तो कथावस्तु की प्रधानता रही, परन्तु प्रेमचन्दजी ने चरित्र-चित्रण की पध्धति को उपन्यास के प्राणतत्व के रूप मे रेखांकित किया है । परिणाम यह हुआ कि मानव-जीवन, कहिए मानवचरित्र को, समझने का एक प्रयास उपन्यास के माध्यम से भी होने लगा । मनुष्य मानव-जीवन का अनुभव अप्रत्ययः प्राप्त कर सकता है । परंतु उसकी अपनी समाएँ हैं और अनेक जिन्दगियाँ उसके लिए दरकार हैं । एक जिन्दगी में मानव-जीवन के व्याप को अधिक से अधिक जानने के लिए उपन्यास से बढ़कर कोई अन्य विधा नहीं है ।

उपन्यास में चरित्र-विषयक विचार निरंतर बदलते रहे हैं और बदलते रहेंगे, परंतु उसका पूर्ण छेद कभी उड़ नहीं सकता क्योंकि समूची औपन्यासिक रचना को घटाटोप में, उसके केन्द्र में तो पात्र-चरित्र सिर्फ मनुष्य ही रहता । उपन्यास में जिन घटनाओं का निरूपण होता है, उसके धारक तो पात्र-चरित्र ही हुआ करते है ।

मूलतः मानव एक सामाजिक प्राणी है । भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति के लिए लिखित और मौखिक रूपों को अपनाता है । दरअसल भाव एवं विचारों की प्रस्तुती करते समय अनायास ही चारित्रिक विशेषताएँ प्रदर्शित हो जाती हैं । फलस्वरूप अन्य लोगों की तुलना में, उनके व्यक्तितत्व का विकास पूर्णतः होता है । एक प्रकार की अलग या भिन्न पद्छाप वह छोड़ता है ।

बींसवी सदी की सशक्त नारी-विषयक लेखिका श्री मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी की भिन्न-भिन्न विशेषताओं को प्रस्तुत किया हैं । लेखिका का मुख्य उद्देश्य चारित्रिक विशेषताओं को माध्यम बनाकर नारीचरित्र को ऊपर उठाना ही है । वस्तुतः लेखिका के सभी उपन्यासों में नारी की चारित्रिक विशेषताओं के जरिए नारीवाद प्रस्थान करता हैं । परिणामतया पाठक एव विवेचक इन पात्रों कें बारें सोचने पर विवश होते हैं । स्पष्ट कहे तो मैत्रेयीजी ने नारीपात्रों की विशेषताओं को पूर्ण रूप से प्रदर्शित किया है ।

नारी पात्रों की विशेषताएँ :

४.१ नारी का बाह्य सौन्दर्य :

सामान्यतः हरेक व्यक्ति की एक पहचान होती है । क्योंकि शारीरिक भिन्नता एवम् मानसिक वैचारिकता, उन्हें अलगता की परिपाटी पर अंकित करती है । यद्यपि उनके तौर-तरिके, रीत-रिवाज, रहन-सहन आदी, अन्य लोगों से भिन्न रहते है । जिससे समाज में उनका एक अलग व्यक्तितत्त्व उभरता है । जैसे 'चाक' उपन्यास की सारंग नैनी, जो

मुख्य नारी चरित्र है । किन्तु अपने सांसारिक परिवेश में अपने बाह्य पहेरवेश के माध्यम से एक अलग व्यक्तित्व को विकसित करती है । 'सारंग' के प्रांतिय परिधान उन्हें आदर्शं नारी के रूप में प्रस्तुत करता है । जैसे - ''आज ब्याहवाली साड़ी पहनी है सारंग ने । गुलाबी रेशमी साड़ी की हरी फूलदार किनारी । माथे पर लाल बिन्दी । आँखो में काजल । पाँवों में पायजेब, गले में हँसली और कानों में झुमकी झिलमिला रही हैं । सोने का और सारंग का एक रंग । गली में घूँघट डालकर निकलती है तो लोग कनखियों से देखते हैं ।''(१)

सारंग के इस शृंगार में ग्रामीण सभ्यता एवम् संस्कृति जीवंत है । साथ में नारी की दैहिक सुन्दरता भी प्रस्तुत होती है ।अन्य उपन्यास 'इदन्नमम' में लेखिका ने मुग्धा नायिका मंदाकिनी की बाल्यास्था को चित्रित किया है । जो पूर्णरूप से युवति नहीं है । फिर भी युवति के समान आकर्षक दिखती है । पुष्पाजी स्पष्ट रूप में मन्दाकिनी की आंगिक चेष्टाओं को आधार बनाकर उनकी चारित्रिक विशेषताओं को इस प्रकार प्रस्तुत करती है । जैसे - ''वे देखती रहीं, बच्ची की आँखें कजरारी, घनी लम्बी बरौनियोंवाली हैं । जिन्हें वह पटर-पटर झपका रही है । खानेवाला मुँह छोटा है, ऊपर का होंठ धनुष की तरह कटावदार और ललामी लिये हुए । मुख पर झलकती उम्र के मुकाबले कद लम्बा है । टेढी माँग निकालकर बाल सँवारे हैं और एक लट अंडे की-सी बनगतवाले चेहरे पर बार-बार झूल जाती है, जिसको सिर झटककर वह पीछे कर लेती है ।''(२)

तो कहीं पर लेखिका ने ग्रामीण एवम् नगरीय संस्कृति को तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत किया है । 'चाक' उपन्यास की गुलकंदी, जो गौण नारी चरित्र है । किन्तु लेखिकाने गौण नारी चरित्र को उभारने के लिए, गुलकंदी के रूतबेदार सौन्दर्य को प्रस्तुत किया है । जैसे ''नए फैशन का चुन्नटवाली बाँहों का ब्लाउज, लो काट गला, पौलिस्टर की साड़ी, अँगूठा पट्टा की चप्पलें । कमर में मीनादार गुच्छा, पाँवों में चिड़ीपान की तोड़ियाँ, मछली बिछिया ।''(३)

प्रस्तुत सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि गुलकंदी एक ग्रामीण नारी है । परंतु ग्रामीण सभ्यता एवम् संस्कृति को आत्मसात करने के बावजूद भी उनके चरित्र में 'नगरीय संस्कृति' के लक्षण स्पष्ट रूप में परिलक्षित होते है ।

तो कही लेखिका ने कल्पनिकता को छोड़कर वास्तविकता का सहारा लिया है । जैसे ''बेतवा बहती रही'' उपन्यास की नायिका उर्वशी अभावग्रस्त जीवन–यापन करती है । किन्तु अभाव ने उर्वशी के बाह्य सौंदर्भ को नष्ट नहीं किया है । उसको और भी मुखरित किया है । दरअसल बाह्य सौन्दर्य सौष्ठव से उर्वशी की अभाव पूर्ण जिन्दगी साफ एवम् चमत्कृत होती है । जैसे कि –''ज्यों – ज्यों उर्वशी बड़ी हुई उसके अंग सौन्दर्य–सौष्ठव से निखर सँवरकर दिपने लगे । कृपणता तो लक्ष्मी ने बहती थी । विधाता ने रूप तो उसे जी खोलकर दिया था । कच्चे – मटमैंले घरौंदे में वह अपूर्व सुन्दरी । नानी कहतीं – कैसी गुलाब के फूल–सी मोंडी है मोहनसिंह की । कहूँ राजरनिवास में पैदा होती । यहाँ कहाँ जनमी है दिलिद्दिर में ।''(४)

मैत्रेयी पुष्पा ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में उर्वशी के बाह्य सौन्दर्य सौष्ठव को प्रस्तुत करके काल्पनिकता पर वास्तविकता की विजय की है । क्योंकि उर्वशी का परिवार अभावग्रस्त जीवन-यापन करता है किन्तु ईश्वरीय कृपा से उनकी अभावपूर्ण जिंदगी में रंगीनता का आविर्भाव होता है । उर्वशी का बाह्य सौंदर्य सौष्ठव आगे चलकर उनकी चारित्रिक विशेषताओं में वृद्धि करता हैं । तो कहीं पुष्पाजी ने नारी सौन्दर्यँता को कलात्मक एवम् उतेजनात्मक रूप में अभिव्यक्त किया है । जिन में पाठकगण की वाह-वाह और नायिका के चरित्र की विशेषताओं में बढोत्तरी ही दृष्टिगत होती है । जैसे - 'अगनपाखी' उपन्यास की सहनायिका दामिनी, जो आधुनिक ख्यालात वाली लड़की है । अपने भाव एवम् आवेगों का दमन नहीं करती है । किन्तु समयानुसार मुक्तता के रंगीन वातावरण में विहरती है । भुवन के महल में दामिनी का आगमन, मानो पृथ्वी पर चन्दमा का उदय होने के समान है । जैसे - ''भुवन उसे अपनी अटारी में ऊपर ले आई गुलाबी रंग का सूट पहने हुए करीने से दुपट्‌टा डाले हुए कंधे तक कटेवालों वाली लड़की जैसी एक लड़की दिखी । बैठा तो लड़की से ज्यादा लड़की के कानों की बालियाँ दिखीं । बिजली सी चमकती बालियाँ । उसके बाद सिर में बीच निकली टेढ़ी माँग । पिन के सहारे साधे गए घने बाल । नीचे निगाह गयी तो दुपट्‌टे के बाद हाथ की घड़ी दिखी । घड़ी-लड़कियों की घड़ी जैसी सुनहरी और चिकनी नहीं थी । चमड़े के मजबूत पट्‌टे से बँधी स्टील के डायलवाली थी । एक हाथ नंगा था ।''[५]

इस प्रकार देखें तो लेखिका ने दामिनी के चरित्र का गढ़न आधुनिक धरातल पर किया है । जिनके चलते दामिनी का बाह्य सौन्दर्यँपूर्ण रूप में प्रद्विप्त होता है । पुष्पाजी ने 'विजन' उपन्यास में डॉ. नेहा के शृँगार को बड़ी सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत किया है । क्योंकि जिस प्रकार काव्य वं कविता की सौन्दर्य, वृद्धि के लिए अलंकार की आवश्यकता होती है । उसी प्रकार नारी चरित्र के सौन्दर्य निखार मे भी अलंकार जरूरी है । लेखिका ने डॉ. नेहा की सुन्दरता को निम्न रूप मे प्रस्तुत किया है । जैसे – ''नेहा का जो रूप हुआ – गले में चमचमाता हीरों का नेकलेस, माँग में पचास ग्राम सिन्दूर । सोने की चार–चार चूडियों के बीच काँच की रंगीन चूडियाँ । पाँवों में जड़ाऊ सुनहरी बिच्छिया पहनने के बाद मंगलसूत्र की याद आ गयी जो फेरों के वक्त ससुरने पहनाया था ।''(६)

प्रस्तुत सन्दर्भ में नेहा के बाह्य सौन्दर्य पक्ष को मुखरित किया गया है । क्योंकि 'विजन' उपन्यास में डॉ. नेहा मुख्य नारी चरित्र है । किन्तु एक ओर से वह डाक्टरी व्यवसायिक नारी चरित्र की भूमिका में भी कार्यरत है । तो कहीं पर लेखिकाने मुग्धा नारी के बाह्य रूप को प्रस्तुत किया है । जैसे 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास की नायिका 'अल्मा', जिसने पूर्णतया युवावस्था में प्रवेश नहीं किया है । परंतु उसका शारीरिक गठन, स्पष्ट रूप में युवावस्था को दस्तक देता है । जैसे कि मुग्धावस्था में युवावस्था के पद्‌चिह्न स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होते है । जैसे – ''आई बप्पा ! कोयल की–सी महीन बोली । भीतर से गले में चुन्नी सँभालती हुई एक लड़की निकली । तेजी से बाहर आती है । गुलाबी सलवार–कमीज पहने हुए, छाती पर दो लम्बी–लम्बी काली चोटियाँ

पड़ी हैं । नुकीली ठोडीवाला गोरा चेहरा । नाक में लोंग चमकती है । कानों में बालियाँ पहने है । काली और बड़ी–बड़ी आँखे ।''(७)

'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में पुष्पाजी ने रज्जो के बाह्य पक्ष को चित्रित किया है । छोटी उम्र रज्जो की थी । किन्तु सौन्दर्य की बदौलत से निखारपन स्वाभाविक लगता था । जैसे – ''वह रज्जो की उम्र बीस वर्ष से कम थी । उसका मूँह खिलौने जैसा सुन्दर था, गालों में गड्ढे पड़ते थे । भरा हुआ चौड़ा–चकला चेहरा पूर्ण रूप से विकसित खिले हुए फूल–सा दिखता । वह अपने काले बालों की पटिया परती थीं और माँग में सिन्दूर भरकर रहती थी । कलाईयों में सुर्ख चुड़ियाँ जेवर–सी दिपतीं । माथे पर लगी बिन्दी दो काली कमान भवों के बीच बीरबहूटी–सी लगती । और नुकीली ठोडी पर गुदने का बूँदा रज्जो लड़की–मुख को नजर लग जाने से बचाता । वह चलती तो मतवाले हाथी की याद आती । उसकी मजबूत बाँहो, पुष्ट और मांसल जाँधें... पाँवों में वह पेंजना पहनती है । आल में पके रंग की धोती और हरे रंग की अंगिया ॥''(८)

'कही ईसुरी फाग' उपन्यास की अन्य गौण नारीचरित्र करिश्मा बेडिनी का व्यक्तित्व दो तरफा है । एक तो ग्रामीण परिवेश पहना है । तो दूसरी और आधुनिक संस्कृति को आत्मसात् करती नजर आती है । करिश्मा बेडिनी के बाह्य चरित्र में प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति का समन्वय दृष्टिगत होता है । जैसे उनके बाह्य सौन्दर्य की झलक को देखें तो – ''पीले रंग के शलवार – कमीज पर हरे लहरिया की चुन्नी ओढ़े वह मेरे सामने बेठी थी । कन्धे पर बैग लटकाकर किसी कालिज गर्ल की तरह अवतरित हुई थी । बालों की घुँघराली लट माथे पर झूल

रहीं थी, बाकी बाल पौनीटेल में पीछे की ओर बँधे थे । साँवले रंग की युवती की गोल नाक और चिकना सुन्दर माथा । ठोड़ी पर काजल की बिन्दी गुदना के रूप में । पच्चीस वर्षीया करिश्मा की मुस्कान ही शरीर का करिश्मा कही जा सकती हे, होठ तिरछा करके हँसना उसका अपना ढंग था ।''[९]

प्रस्तुत सन्दर्भ हमे करिश्मा बेडिनी के भोलेपन का जायजा करवाता है । किन्तु भोलेपन के साथ आधुनिक खटराव अप्रत्यक्ष रूप में दृष्टव्य होता है । यूँ कहे तो दो काल को आत्मसात् करके करिश्मा बेडिनी चलती है ।

व्यक्ति की सही पहचान उनके व्यक्तित्व से होती है । जिस प्रकार पानी में गोता लगाने से पहले, उनकी स्तरियता को देखा जाता है । उसी प्रकार किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को जानने एवम् समझने के लिए बाह्य व्यक्तित्व से सुपरिचित होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य होता है । प्रस्तुत मुद्दे में नारी के बाह्य सौन्दर्य को प्रस्तुत किया है । जिनमें वह कहीं ग्रामीण संस्कृति को बया करती है । तो कहीं पाश्चात्य विचारों से प्रभावित होकर उसे बाह्य सौन्दर्य के माध्यम से प्रदर्शित करती है । लेखिका ने अपने उपन्यासों में नारी सौन्दर्य को बड़े कलात्मक एवम् परिस्थितियों के अनुसार नारी के बाह्य सौन्दर्य को प्रस्तुत किया गया है । जिनमें वह कही मुग्धा, ग्रामीण, शहरी और पाश्चात्य के रूप में मुखरित होती है ।

४.२ नारी में वात्सल्य एवं ममत्व :

नारी के विभिन्न रूपों में माँ का रूप सर्वाधिक गौरवशाली है । पत्नी के रूप में उनके व्यक्तित्त्व का विकास अवश्य होता है, किन्तु मातृत्त्व के बिना उसके जीवन में पूर्णता नहीं आतीं । संतान को जन्म देना, उसका पोषण करना, हर स्थिति में उसकी रक्षा करना, उसके लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करना और हर स्थिति में उसका कुशल क्षेम चाहना मातृत्त्व की पहचान है । नारी के ममत्त्व एवम् वात्सल्य से परिपूर्ण शाश्वत मातृत्व की चर्चा मैत्रेयी पुष्पा की रचनाओं में अभिव्यक्त हुई है ।

डॉ. सावित्री मठपाल के मतानुसार – ''हिन्दी उपन्यासों में माता के इस शाश्वत रूप के सभी पक्षों का सविस्तार वर्णन किया गया है । सन्तान चाहे अयोग्य हो, कर्तव्यच्युत हो, समाज की दृष्टि में पतित हो, माँ का वात्सल्य–भरा आँचल सदा उस पर छाया रहता है । कठिन से कठिन परिस्थिति में भी माँ अपना वात्सल्य नहीं भूलती ।''(१०) ममता, वात्सल्य की भावना नारी के जननी रूप का सम्बन्ध उसके अपने रक्त से होता है । इसलिए नारी वात्सल्य की अनुभूति को उत्कृष्टता से अनुभव करती है । पुष्पाजी ने नारी के इस शाश्वत रूप को अपने उपन्यास साहित्य में बड़ी सूक्ष्मता एवम् प्रभावोत्पाादक रूप में चित्रित किया गया है । 'चाक्' उपन्यास की नायिका सारंग नैनी में वात्सल्य–भाव स्पष्ट रूप में मुखरित होता है । वह अपने पुत्र चंदन में अपना अस्तित्व ढूँढती है । क्योंकि चंदन ही सारंग का अंश है । चंदन के बिना सारंग की दुनिया अधूरी और अस्पष्ट है । जैसे सारंग कहती है कि ''मैं किसी

के गिराए नहीं गिरूँगी; मेरा अपना है मेरा चंदन मेरा बेटा । उसको बुलाना होगा । उसके आने से यह घर कई-कई गुना मेरा हो जाएगा । चंदन मेरी फुनगी नहीं, जड़ है । बसावट है । दुनिया है । सृष्टि है ।''(११)

'इदन्नमम' उपन्यास में प्रैम एक विद्रोही नारी चरित्र है । जिनके लिए सामाजिक बंधन कतिपय स्वीकार्य नहीं है, दरअसल उनके चरित्र में पाश्चात्य विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होता है । किन्तु आखिरकार प्रैम एक माँ है । जो विभिन्न परिस्थितियों से लड़ती हुई, अपनी बेटी मन्दाकिनी को देखने के लिए तरसती हैं । जिस प्रकार नदी, समन्दर से मिलने के लिए बाँवरी होती है । गाय बछड़े को देखकर रंभाती है । उसी प्रकार वह अपनी बेटी मन्दाकिनी से मिलाप और सामीप्य के लिए तड़पती है । जैसे कि - ''पर प्रैमाभौजी ने यह कहा है कि बिनती करना हमारी ओर से, भी माँगना, दादा एक बार हमारी बिटिया का मुख हमें दिखा देवें । भगवान उनको सात जनम तक सतजुगी सन्तान दे । ऐन सुपात्तर पूत ।

समझ ले उनकी बहन, उनकी बेटी कह रही है, कर रही है गुहार ... बस, एक बेर अपनी आँखे हेर लेवें मन्दा कों ।''(१२)

प्रस्तुत उपन्यास में प्रैम को लेखिका ने विद्रोहीनारी के रूप में अवश्य प्रस्थापित किया है । किन्तु समयानुसार वात्सल्य की मूर्ति बनाकर पाठकों के सामने उभारा गया है । जिनकी सार्थकता उपयुक्त सन्दर्भ से होती है । तो कहीं लेखिका ने मातृप्रेम या वात्सल्य का अंकन मर्यादा के बाहर किया है । जैसे - ''कही ईसुरी फाग' उपन्यास में

प्रताप की माॅ (रज्जो की सास), जो एक वात्सल्य की प्रतिमा के रूप उपस्थित होती है । जिनके लिए पुत्र बिछोह असह्य एवम् कष्ठदायक होता है । बेटे के प्रति माँ की ममता, अंततः उसे पागल करार देकर अस्तित्व फना करती है । उनकी दर्दनाक चिखें, मानो पाठक गण को विवश एवं लाचार बनाते है जैस - ''प्रताप को मार डाला गया । उनकी माँ माधोंपुरा में पागल की तरह घूमती है । गाँव के लोग बताते हैं कि बूढ़ी ने खबर सुनी तो सच नहीं मानी । कितने दिनों से क्या, जुग-जुग से सिपाहियों की मौत और जिन्दगी का खेल चलता रहा है, सो अब क्यों नहीं चलेगा ? ऐसी ही नजर से देखती सोगवारों को ।

धीरे-धीरे यह हुआ कि घर से निकलना छोड़ दिया और भीतर से धार में बेंडा लगा कर रहन लगी । कोई खुलवाता तो कहती - कह दो पिरताप नइयाँ इतै । हत्यारों को लौटा दो । फिर देखें मोरे बेटा खों कौन फिरंगी मरवाएगा । फिर अपनी छाती पीट्-पीटकर घर में चिल्लाती ।''(१३)

पुष्पाजी ने 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में प्रताप की माँ के चरित्र को बड़ी ही तन्मयता एवम् परिस्थितियों के अनुसार प्रस्तुत किया गया है । जिनमें पुत्र के प्रति अथाग स्नेह, वात्सल्य और ममता की बौछार है । जो अंत तक कायम रहती है । जो पुत्र मिलन के लिए बावरी-सी हो जाती है । अंततः प्रतिक्षा करते-करते अस्तित्व को समाप्त करती है । कहना हो तो सिर्फ 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास तक प्रस्तुत नारी चरित्र सीमित नहीं है । किन्तु संपूर्ण हिन्दी साहित्य में ऐसा अद्वितिय मातृहृदय नारीचरित्र नहीं है । जिसके साथ तुलना की जा सके । वास्तव प्रताप की माँ का चरित्र अवर्णनिय है । जिनके प्रशस्ति के लिए लब्ज अधूरे है ।

अन्य उपन्यास 'चाक' में भी लेखिका ने मातृहृदय की कसौटी को प्रस्तुत किया है । सारंग नैनी प्रस्तुत उपन्यास की मुख्य नायिका है । उनके चरित्र में नाविन्यता सहज ही है । किन्तु पुत्र प्रेम के आगे सब न्यौछावर करती है । दरअसल सारंग बेटे की जुदाई को बरदाश्त नहीं कर पाती है । अत: अपनी व्यथाओं को अन्य स्त्री पात्रों के सामने अभिव्यक्त करती है । जैसे कि – ''तुम्हें चैन कैसे पड़ा था बीबी ? मैं तो पागल हुई जा रही हूँ । रोटी देखकर लगता है, वह भूखा होगा । पानी पिऊँ तो, वह प्यासा होगा । नल के पास जाते ही चंदन की दुबली देह आँखों के सामने प्रकट हो पड़ती हे – नादान नहाया होगा कि नहीं ? ये छोटी-छोटी चिंताएँ मेरे मन में ऐसी लगी हैं ज्यों दीमक पड़े को खत्म करने पर लगी हो । तुम कैसे रहीं बीबी ।''(१४)

उपन्यास में आगे सारंग जहाँ अपने बेटे चंदन को लेकर परिवार के सदस्यों पर मौत का तांडव खेलती है । वही सारंग समय आने पर चंदन की जिंदगी के लिए आततायियों से लड़कर, अपने अस्तित्त्व की शहादत के लिए संकल्प सिद्ध नारी के रूप उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । जैसे – डोरिया मुझे फाड़कर खा जाता, मेरी बोटी-बोटी... रंजीत, मैं तब भी अपने बेटे को दाँव पर न लगाती । औरत का कलेजा कैसा होता है, तुम क्या जानो ? कब वह पथ्थर की शिला हो जाता है और कब पिधला हुआ मोम ? चंदन से ज्यादा प्यारी नहीं है मुझे अपनी देह ।''(१५)

माँ शब्द को सौ प्रतिशत पवित्रता, स्नेह, वात्सल्य और ममत्त्व की कसौटी पर खरेपन के लिए साहित्यविदों ने जो अथाग प्रयत्न किये है ।

जो सही मायने में खरे उतरे है । माँ का बेटे या बेटी के प्रति जो प्यार और लगाव है । वह समय के साथ कभी भी परिवर्तित नहीं होता है । किन्तु निरंतर वह प्रवाह बढ़ता ही रहता है । पुष्पाजी ने ऐसी माताओं को अपने उपन्यास में सर्वोपरि स्थान दिया है । पुष्पाजी विरचित । 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में उर्वशी ऐसा ही नारी चरित्र है । जिनका ममत्वभरा आँचल सदा लबरेज रूप में भरा ही रहता है । जो परिस्थितियों के अनुरूप ममत्व की प्यास को बूझाने में तत्पर रहती है । उर्वशी, जब अपने पुत्र देवेश को छोड़कर बरजोरसिंह के साथ दुसरा ब्याह रचाती है । किन्तु देवेश के प्रति जो प्रेम और ममता में धटौती नहीं होती है और भी बढोत्तरी के साथ उबलती है । उनसे मिलन के लिए तडपती है । क्योंकि आखिरकार उर्वशी एक माँ है । जो पुत्र-वियोग में मिलाप की कामना करती है । जैसे - ''जंगल मे अकेली मैना बैठी रह गयी हो । देवेश बड़ा हो गया होगा । कैसा रहा माँ-बेटे का संबंध, एक-दूसरे से मिलना भी न हो सका । अब क्या पहचानेगा ! गिनकर चार बार भी तो मिला न होगा ।

बेटे की याद रह-रहकर सालती । उदय आते तो पास बैठकर जी भरकर रोती । - दाऊ ने योगेन्द्र और बैरागी के साथ देवेश को भेजा था । यहाँ से उदय, मीरा और वह गये थे । तभी मिल था बेटा । कैसा रोया था हिलकी बाँधकर । कितनी देर तक सुबकता रहा । मिठाई दे-देकर हार गई, उसने छूई तक नहीं । कंधे में मुँह गाड़े सिसकता रहा ।

जाने के लिए योगेन्द्र ने गोदी में लिया तो माँ का पल्ला पकड़कर चिघाड़ने लगा । आसपास के लोग देखने को ठिठक गये । उसकी

छाती में कैसी पीर हुई थी , फट जाने जैसी... हूक उठी, फिर आँखों नीची किये लौट आयी, रोती हुई, मेले के बीच तमाशा न बन जाती ।''(१६)

प्रस्तुत सन्दर्भ में नारी चरित्र की सत्यनिष्ठ विशेषता को उजागर किया गया है । जो, समय एवम् काल के साथ तादात्मयता आवश्य साँधती है । मातृत्व भावना का प्रवाह निरंतर रूप में बहता रहता है । जिनकी सार्थकता उर्वशी के चरित्र से होती है । उर्वशी दुसरा ब्याह रचाती है । किन्तु देवेश के प्रति उनकी ममता कम नहीं होती ।

नारी जीवन का उज्जवल पक्ष मातृपक्ष है । पुष्पाजी दरअसल नारीवादी लेखिका है । वस्तुतः उनका मूल उद्देश्य नारीचरित्र को पुरूषचरित्र से सशक्त और स्वतंत्ररूप में प्रदर्शित करना है । एतएव इस मुद्दे के अन्तर्गत पुष्पाजी ने नारीचरित्रों में ममत्त्व एवं वात्सल्य भाव को प्रस्तुत किया है । जो सारंग, उर्वशी, कदमबाई आदि नारीयों के माध्यम से उजागर होता है ।

४.३ नारी में परंपरा के प्रति विध्वंशक एवं साहसिकता :

जिस प्रकार गोताखोर समन्दर की गहराई को नापने के लिए गोता लगाकर, साहसिकता का परिचय देता है । उसी प्रकार परम्परागत रीति-रिवाजों और मूल्यों को तोड़ना ही साहसिकता को परिचायक है । एक कथन है कि दुनिया वो ही बदल सकता है, जिसे अपनी सुरक्षा का डर नहीं । साहस से ही परम्परा का विध्वंश होता है । साहस ही मनुष्य के व्यक्तितत्व की सही पहचान है ।

नारी के प्रति समाज और साहित्यकार के परम्परागत रवैये पर चोट करते हुए अमृताजी ने अत्यंत निर्भीक, निड़र एवं मौलिक टिप्पणी देते हुए कहा है – "हमारे शास्त्रों में भी औरत को जंजाल और सभी विपत्तियों की जड़ माना गया है, पुरूष की पाशविक प्रवृति को नहीं, जिसके कारण सीता हरी गयी या द्रौपदी निवर्सना और अपमानित की गयी, पर चूँकि सैक्स और औरत दुनियाँ के सबसे बड़े आकर्षण हैं । उसके चटकारेपन में लोग न डूबे, ऐसा मुमकिन नहीं होता ।[१७] यही निर्भीकता और मौलिकता उनकी नारी चेतना की पहचान है और इसी के गर्भ से जन्म लिया है उन नारीचरित्रों ने, जो उनके उपन्यास साहित्य की पहचान है ।

वैसेभी अब परम्परा और रूढ़िवादी संस्कारों की बैशाखी के सहारे जिंदगी की गाड़ी को ढुलमुल खींचने वाली हिन्दुस्तानी औरत का तेवर बदल रहा है । कमर तक लटकते, घूँधट में से नीचे जमीन पर कदम गड़ाये हुए और अपने पति परमेश्वर के पीछे कदम मिलाकर चलनेवाली उसकी तस्वीर बदल रही है । परम्परावादी लकीर को पीटने के बजाये वह अब खुले दिमाग से दुनिया को समझने लगी है । सामाजिक परम्पराओं और रूढियों को अपनी जानकारी के अनुसार उसका नये सिरे से मूल्यांकन करने लगी है । व्रत, अनुष्ठान, रीति रिवाज अब उसकी जीवन शैली को प्रभावित नहीं करते बल्कि अब जीवन शैली की जरूरतों और सुविधानुसार वह अपने जीवन को बदल रही है ।

नारी चरित्रों की वकालत से प्रसिद्धि प्राप्तकर्ता श्री मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में नारी चरित्रों को परम्परा और रूढ़िवादीता में न

बाँधकर, मुक्ति एवं स्वतंत्रता की साँस के लिए अग्रसर किया गया है । 'चाक' उपन्यास में लेखिका ने सारंग नामक नारी पात्र को परम्परागत रिवाजों में न बाँधकर, उनकी आवश्यकताओं के अनुसार, सारंग की जीवनशैली में बदलाव लाया है । दरअसल सारंग के लिए पति परमेश्वर अवश्य है । किन्तु जीवन की जरूरतों की पूर्ति के लिए पति के बनाए हुए बंधन को विध्वंश करने का साहस भी अवश्य करती है । जैसे - ''सारंग पुरानी रीतियों कुरीतियों, रूढियों से लड़ती तो शायद इतना टकराव न होता, उसका रास्ता दूसरा है, जो बेहद टेढ़ा और शूलों भरा है । क्योंकि वह पति से लड़ना चाहती है । कई बार मन में आता है, समझाया जाए उसे कि देखों, परंपराओं में रहकर रीतियों को मानकर तुम सुखी और सुरक्षित रहोगी । तुम ऐसी सता से लड़ना चाहती हो, जिससे अब तक तो कोई जीता नहीं । रंजीत का विरोध करके खुद ही चूर-चूर हो जाओगी ।''[१८]

लेखिका ने सारंग को रणचण्डी के रूप में चित्रित किया है । सारंग मातृहृदय नारीचरित्र है । किन्तु समय आने पर, मातृहृदय नारी आग मे परिणत हो जाती है । अपने बेटे चंदन को लेकर पति रंजीत और जेठजी के सामने बंदूक उठाने में हिचकीचाती नहीं है । जैसे - ''पिटकर सारंग दोगुनी ताकत का अनुभव हुआ सारंग को, बुरी तरह लपक पड़ढी हाथ-पाँवों में, पागल, विक्षिप्त की भाँति दौड़कर खूँटी से बंदूक उतारी और बिजली की सी फूर्ती से चला दी दोनाली धाँय-धाँय ! यह भी न सोचा कि निशाना किधर...

असल मर्द है तो छू चंदन को छू ? रणचंड़ी बनी खड़ी है सारंग ।"(१९)

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि सारंग के चरित्र में रूढिवादी परंपरा के लिखाफ लड़ने का जज्बा है । समयानुसार नारी की सोच में बदलाव लाया है । बरसों पुरानी रीति की उन्मुलन करना ही अपना उद्देश्य समझती है । अन्यथा सारंग अपने पति और जेठ के सामने बंदूक उठाने का साहस करती ? पूर्णतया सारंग के चरित्र में साहसिकता बबरेज रूप में भरी है । जो समयानुसार प्रस्तुत हो जाती है ।

परिवर्तन सृष्टि का सनातन नियम है । यद्यपि साहित्य में भी परिवर्तन आया है । क्योंकि पहले का साहित्य नियमों के आधिन होकर लिखा जाता था । किन्तु अब निषेधों को तोड़कर मुक्त रूप से प्रस्तुत होता है । भारतीय मध्यमवर्गीय समाज का परंपरावाद और दूसरी ओर अत्याधुनिक शिक्षा प्रणाली के माध्यम से प्राप्त नवीन बौद्धिक चेतना ने स्त्री को अपने जीवन साथी के चयन के विषय में भ्रमित ही अधिक किया है । समाज स्त्री को गंधर्वविवाह करने की अनुमति देने की स्थिति में अभी नहीं आया है । इसी विडंबनापूर्ण स्थिति को लेखिका ने 'चाक' उपन्यास में सुरूचिपुर्ण कथानक के माध्यम से व्यक्त किया है । द्वन्द्व की स्थिति में भारतीय स्त्री को स्वयं अपना मार्ग चुनने का मनोबल प्राप्त हो चुका है । 'चाक' उपन्यास की 'गुलकंदी' अपने प्रेमी से विवाह करने हेतु गृहत्याग करके चली जाती है ।

गुलकंदी ने अपनी बिरादरी के रीत-रिवाजों एवं परंपरा का विध्वंश करके अन्य बिरादरी के लड़के बिसुनदेवा के साथ गंधर्वविवाह किया है ।

जैसे ''ताई, मैंने राई–रती भर नहीं छिपाया । इनने कह दिया, बाबा तिहारी कुटिया की ताबेदारी करेंगे । मैंने गुलकंदी से गंधरब ब्याह किया है । जाति की नाइन है । बेटा गुलकंदी अब तेरी पत्नी है । यह नाइन कैसे हुई ? जिस दिन तु जोगी होकर यहाँ आया तेरी कोई जाति न रही । अब इस छोरी ने तुझसे ब्याह किया है तो यह भी तेरी बिरादरी में आ गई । औरत की तो वैसे ही कोई जाति नहीं मानी गई । वह तो जिससे ब्याह कर ले, उसी जाति की हो जाती है । तू बाह्मन होता तो यह ब्राह्मनी तू भंगी होता तो यह भंगिन तू तपसी है तो यह तपसिन ।[२०]

भारतीय समाज में दाम्पत्य संबंध चिरकालीन एवं शाश्वत माना गया है । किन्तु इस चिरकालिक संबंध के नाम पर स्त्री प्रताड़ित एवं अपमानित भी होती है । वर्तमान नारी जागरण तथा बौद्धिक चेतना ने स्त्री को विवश एवं पीडायुक्त दाम्पत्य जीवन को त्यागकर मुक्त होने का अधिकार प्रदान किया । प्रेम में असफलता या प्रेमविवाह की असफलता या विवाह की असफलता – इन सभी स्थितियों में स्त्री का जीवन नारकीय हो जाता है । 'चाक' उपन्यास में लेखिका ने असफल विवाह से उत्पन्न स्थितियों से धिरी 'रेशम' की मानसिक पीड़ा को चित्रित किया है ।

'रेशम' एक साहसिक एवम् परम्परा विध्वंशक नारी चरित्र है । उनके लिए सामाजिक बंधन और परम्परा अमान्य है । दरअसल रेशम एक विधवा नारी है । किन्तु विधवा हो जाने के बावजूद भी अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए, खुद के पेट में पलते बच्चें को जन्म देना

अपना अधिकार और कर्तव्य मानती है । जैसे ''तुम तो रेशम की ऐसे फिकर करती हो, जैसे वह दूध पीती बच्ची हो । जो औरत बिना आदमी के बच्चा पैदा करने का दमखम रखती है; वह क्या-क्या नहीं कर सकती ? तुम हो कि उसकी चिंता में घुली जा रही हो । साधजी के घरवालों की सारी ऐंठ निकालकर धर दी । बने फिरते थे बड़े बलधामा लङ्गबाज, रेशम से पेश नहीं जा रही ।''[२१]

प्रस्तुत सन्दर्भ में रेशम के चरित्र की विशेषता को अभिव्यक्त किया गया है । रेशम एक निर्भीक और साहसिक नारी है । जिसे परंपरा में बँधकर जीवनयापन करना असह्य लगता है । रेशम की तरह 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में कदमबाई भी परंपरा विध्वंशक के रूप में उभरती है । उनके चरित्र में साहसिकता को लेखिका ने ठुस-ठुसकर भरी है । वास्तविक रूप में कदमबाई विवाहित नारी है । पति की मृत्यु के बाद मंसाराम के साथ अनैतिक सम्बन्ध रखती है । फलस्वरूप सामाजिक आततातियों से लड़ते - लड़ते मंसाराम के अंश के रूप राणा को जन्म देना आदि निर्भीकता के प्रमाण है । जैसे ''मगर नंगे ठुँठ सी कदमबाई ने गजब कर ड़ाला । हथेलियों के बीच तक नाजुक पंखुड़ी दबाह बवंडर में खड़ी है, उन्हें इल्म नहीं था ।

गर्भ में बच्चा सधा रहा । न गिराया न गिरने दिया । हौल गर्दिश छाती पर झेलती रही, पेट तक आने ही नहीं दी । रेतगर्द में अँटी कदमबाई ने मुटठी खोलकर देखी और मुस्करा पड़ी । जनेऊधारी विद्वान बने मंसाराम का मखौल उडाती बच्चे के साथ लुका-छिपी करने लगी ।[२२]

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि कदमबाई के चरित्र में संपूर्णतः निर्भीकता विध्यमान है, जो मंसाराम के प्रसंग के साथ अभिव्यक्त होती है । वैसे निर्भीकता से ही साहसिकता के पथ पर कदम रखे जाते है । कदमबाई ने सामाजिक व्यवस्था को विध्वंश किया है । कदमबाई एक ओर समाज की पुरानी परंपरा को परास्त करती है । तो दुसरी और नारी स्वतंत्रता की सुगंध मेहकती है । समाज के आधुनिकीकरण ने व्यक्ति के रहन-सहन और विचारधारा में व्यापक मात्रा में परिवर्तन किया है । नारी शिक्षा एवं विभिन्न व्यवसायों में प्रवेश इसी प्रक्रिया का एक अंग है । इसी कारण नारी स्वातंत्र की धारणा ने भी नैतिकता के मूल्य बदल दिये हैं । डॉ. सुशील वर्मा ने अपनी किताब ''आधुनिक समाज की नारी चेतना' में नारी विषयक चिंतन को प्रस्तुत किया है कि-'' यौन संबंधों के प्रति भी नारी की इच्छा अनिच्छा को महत्व मिला है घर से बाहर आने के बाद वह भोग्या होने की नियति एवं विवशता को दरकिनार कर भौकत्री बनने की भी इच्छा करने लगी और मनचाहे पुरूषों का सम्बन्ध यदि उसे पूर्ण और संतुष्टिपूर्ण लगता है तो वह परिवार की मर्यादा एवं मातृत्व की गरिमा को भी ठुकरा देती समकालीन कथा साहित्य में इसे लेकर लेखकों ने साहित्य रचना की है ।''[२३]

सुशील वर्मा के मंतव्य को लेखिका पुष्पाजी ने 'इदन्नमम' उपन्यास में क्रमशः कुसुमा और प्रैमभोजी के रूप में सार्थक किया है । प्रस्तुत उपन्यास में कुसुमाभाभी विवाहित नारी है । किन्तु कारणवश पति के द्वारा त्यक्ता के रूप में रहना उसके हृदय को कष्टदायक प्रतीत होता है । परिणाम तः वह अपने छोटे ससुर अमरसिंग से अनैतिक सम्बन्ध जोड़ती

है । फलस्वरूप कुसुमाभाभी के पेट में बच्चा पलता है । जो सामाजिकरूप में अवैध माना जाता है । जैसे – ''वह खड़ी की खड़ी रह गईं । फिर मिचली ! ओ मतारी ! उलटी आएगी । उल्टी आई । उलटियों का सिलसिला चल निकला । उसी सिलसिले में से कुछ लम्हे छोटी ननद चुरा ले गई ।

सरग पताल हो गई ननद । कुसुमा ठगी–ठगी–सी देखती रह गई । पूरे घर में फैल गई बात । राम दुहाई, तेरौ कोल, महामाई की सौं खा–खाकर सबको बता आई छोटी ननद । बेटी से माँ तक, माँ से छोटी तक, छोटी से यसपाल तक... अब क्या होगा ? क्या करेगा पति ? कौन–सा दंड होगा ? कुसुमा कई तरह से सोचती, निरवारती गुत्थियों का घनघोर परिवर्तन हुआ ।''(२४)

इस संक्रांतिकालीन दौर मं जहाँ पुराने मूल्य टूट रहे हैं और नये के आकर ग्रहण करने में पर्याप्त समय है, वहाँ कथा चरित्रों का संघर्षशील होना अनिवार्य शर्त भी है । खुद की पहचान के लिए संघर्षरत ये पात्र परिवार, विवाह, पत्नीत्व, मातृत्व आदि परंपरागत मूल्यों से विद्रोह करके बिखरते भी हैं, टूटते भी हैं परंतु अपना जुझारूपन नहीं छोड़ते और फिर अपने मोर्चे पर डट जाते हैं । ये जानते हैं कि परंपरा की बंधी–बंधाई लीक को छोड़कर चलने में सैंकडों खतरे हैं, फिर भी ये पीछे मुड़कर नहीं देखते । अस्मिता प्राप्ति के इस संघर्ष में पीछे पलट कर देखना संभव भी नहीं है । नेपाली कवियित्री बनीरा गिरी के शब्दों में

''मुझे रूलाई रोनी है, मुझे हंसी हंसनी है,
मुझे जीवन बाचना है,
मुझे भी तोड़ना है शिव का धनुष ।''(२५)

स्त्रियाँ पहले भी चाह करतीं थी अब करती हैं परंतु उनकी चाहत में फर्क आया है तो इतना कि अब यह चाहत गहने-कपड़े तक सिमट कर नहीं रह गई है । ब्लकि उनकी आकांक्षा का आकाश बहुत विस्तार पा चुका है । वह स्वविवेक सम्मत पक्ष का समर्थन करती है । फिर चाहे इसके लिए घर छूटे या पति । 'इदन्नमम' उपन्यास की प्रैमभौजी भी वैसी ही अदम्य आकांक्षा के साथ जीती है । सुलभ समयानुसार अपने प्रेमी रतनसिंह यादव के साथ भाग जाती है । प्रैमभौजी का यह कदम साहसिकता और परंपरा का विध्वंशक अवश्य है । जैसे -'' भोर की होने में वे उठी थीं । देखा कि दरवाजा खुला पड़ा है । खटिया खाली है प्रैम की... उनकी टाँगे काँपने लगीं । आँखों के आगे अँधेरा छा गया । वे जान गई कि आज बहू ... लेकिन कैसे हल्ला करतीं कि मेरे महेन्द्र की दुल्हन रतन यादव के संग... कि इस गाँव के जमींदार सुभागसिंह की पुत्रवधू भाग गई उस नीच के संग ।''(२६)

उपर्युक्त सन्दर्भ में प्रैमभौजी का रतनसिंह के साथ भाग जाना, पूर्ण रूप से सामाजिक परंपरा को परास्त करना ही है । साथ में उनके चरित्र में विध्यमान साहसिकता और निर्भीकता के गुण को प्रस्तुत करता है । एक तरह से प्रैम ने अपनी आंतरिक ईच्छाओं की पूर्ति के लिए परंपरागत सामाजिक प्रणाली को तोड़ा है । तो एक ओर समाज में विधवा नारी के लिए नयी राह को कायम किया गया है ।

वर्तमान नारी बोध के अंतर्गत विवाह को नारी के विकास में बाधक माना जाने लगा है । दाम्पत्य का आधार भी विवाह है । यद्यपि हिन्दू धर्म में यह एक परंपरागत संस्कार है, जिसमें तमाम विसंगतियाँ, बालविवाह, बहूविवाह, अनमेल विवाह, वृद्ध विवाह आदि विद्यमान रही हैं, तथापि महिलाओं के समर्थन से यह कायम रहा है । लेकिन जैसे-जैसे स्त्री जागृत हो रही हे, अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो रही है, वैसे-वैसे विवाह और दाम्पत्य सम्बन्ध तेजी से विघटित होता जा रहा है । वेसे ही दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों को मैत्रेयी पुष्पाने 'अगनपाखी' उपन्यास में चित्रित किया गया है । प्रमुख समस्या अनमेल विवाह को लेकर लेखिका ने परम्परा का विध्वंश किया है । भुवन का ब्याह अर्धपागल विजयसिंह के साथ सम्पन्न होता है । किन्तु विवाह की विभिन्न अवधारणा को भुवन अपनी वैचारिक दृष्टि से खारिज करती है । जैसे भुवन का सोचना है कि - ''अम्मा ब्याह करना पाप नहीं तो ब्याह छोड़ना क्यों पाप है ? तुम अपने ऊपर पाप मत चढ़ाओ, तुम्हें तो वर के बारे में कुछ पता ही नहीं था । अब में अपनी अक्ल के हिसाब से जो भी करू । नरक स्वरग मेरे लिए बनेगा ।''(२७)

प्रस्तुत सन्दर्भ में भुवन के चरित्र में पाश्चात्य विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होता है । क्योंकि वैवाहिक बंधन में बँधना भारतीय संस्कृति का एक भाग है । किन्तु बंधन में बँधने के बाद अपनी सोच के अनुसार खुद को ढालना, अपना नजरियाँ है । परंपरा को तोड़ना भुवन का लक्ष्य नहीं है । परंतु अनायास परंपरा टुटती है । 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास की अल्मा में मुक्ति की छटपटाहट विधमान

है । जो संजोगवश प्रकट होती है । अल्मा को सूरजभान कैद करता है । किन्तु अल्मा साहस के साथ उक्त बन्धन से मुक्त होने के लिए तत्त्पर होती है । जेसे - ''मानसिक संताप में जलता हुआ वह इस मुहाने पर आकर थम जाता है - अल्मा क्या यहाँ कैद रहनेवाली थी ? वह दीवार फलाँगने से चूकती क्या ? उसकी देह उड़ने के लिए कसमसाती थी । वह तो बस किसी मौके की तलाश में थी । इस संसार के भेद में बिना उलझे हुए यात्रा पर निकलनेवाली ।''(२८)

जहाँ पर अल्मा खुद को मुक्त करने के लिए अथाग प्रयत्न करती है । वही 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी भी जीवन की यंत्राणा पूर्ण यात्रा से मुक्ति की कामना करती है । उर्वशी के चरित्र में साहसिकता है, जो विधवा हो जाने के बावजूद भी बरजोरसिंह से पुनःब्याह रचाती है । जिसके फलस्वरूप उर्वशी ने समाज की परम्परागत मान्यता को खंडित किया है । एक प्रकार से उर्वशी का यह कदम साहसिकता का उमदा दृष्टांत है । जैसे - ''पता नहीं यह रास्ता है या बेबसी, जीवन है या आत्मघात, मुक्ति है या विनाश, सम्मान है या मान-हनन-वह कुछ नहीं जानती । फिर क्या नाम दे इसका ? जो भी कुछ है - यातना-यात्रा का मुक्ति-द्वार है । इसी में होकर गुजरना है शेष जीवन''(२९) प्रस्तुत उपन्यास में उर्वशी एक पीड़ित एवं कुण्ठित नारी है । जो समय और परिस्थिति के अनुसार खुद के व्यक्तितत्त्व को प्रस्तुत करती है । उर्वशी परिस्थिति से वश होकर अपने भाई अजीत से अपना सम्बन्ध तोड़ती है । एक प्रकार से परम्परागत सामाजिक सम्बन्धों को तोड़ना साहसिकता का अनुमोदन ही है । जैसे -''अजीत भइया से भाई-बहन कौ सम्बन्ध रहौ

कहाँ है । बहन तो उनके लिए रूपइया बनके रह गयी ... केवल कागज के कुछ नोट । उर्वशी तो कब की खतम हो गयी मीरा ! मिट गऔ वो सम्बन्ध...। सम्बन्ध खून के नहीं होत, अब तो मानोगी न ! सम्बन्ध तो काकाजू से हतो मीरा । वे तुम्हारे नाना, हमारे धरम पिता ! उनके दुनिया से उठवे के संग ही राजगिरी की धरती परदेश हो गयी... वहाँ गलियाँ बीरानी । फिर अब.... ।''(३०)

परंपरा ने सदैव स्त्री को भय दिखाया है नैतिक मूल्यों का, पाप भावना का, असुरक्षा का, लोकापवाद का, कभी अतीत का सहारा लेकर तो कभी भविष्य की दुहाई देकर जिससे वह कभी क्षण को, वर्तमान को न तो पहचान पाई न जी पाई । परंतु यह आधुनिकता ही है जो स्त्री की यौनेच्छा को भी समान महत्त्व देती है, पुरूष की भाँति परंपरा इसे पाप मानती है । विसंगति यह है कि इस पाप से रक्षा का भार भी स्त्रियों पर ही डाला गया है । सदियों से इस परंपरा को यथावत् निभाती आई स्त्रियों की परंपरागत सोच में अब दरारें पड़ी है । जो समाज स्त्री और पुरूष को कदापि समानता की परिपाटी पर अंकित नहीं करता था । अब स्त्रियों ने उक्त सोच एवम् परंपरा को नष्ट किया है । आधुनिक नारी पुरूषप्रधान समाज के सामने पूर्ण स्वच्छंद होकर स्त्री-पुरूष के मैत्री संबंध को स्विकार करती है । जैसे 'त्रिया-हठ' की स्मिता ऐसी ही नारी है । जो पूर्ण स्वस्थता के साथ देवेश और उसके संबंध को प्रस्थापित करती है । जैसे - ''वह देवेश को कहती है कि - ''परिचय ? कैसा परिचय ? रिश्ता क्या रिश्ता ? तुम लड़कों में यही बात बुरी है, डरते बहुत हो, मगर करना सब कुछ चाहते हो । मेरे दादा

गजराजसिंह और मेरी दादी तक जानते हैं कि एक देवेश है, जो मेरा दोस्त है । वे समझ गए हैं कि जो लड़कियाँ पढ़ती-लिखती हैं, दोस्ती भी करती हैं । लड़कियों से भी, लड़कों से भी । यह बात और किसीने नहीं, उन्हें मैंने समझाई है, क्योंकि उन्हें पता है, उनकी मीता चोरी-छिपे कोई काम नहीं करती, न करेगी ।''(३१)

इस प्रकार उक्त कथन की आलोचना करे तो, स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होता है कि स्मिता का चरित्र पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित है । जो स्त्री और पुरूष को समानता की धूरी नहीं ब्लकि एक दूसरे का पूरक मानती है । प्रस्तुत उपन्यास में स्मिता ने समाज की पुरानी परंपरा को खारिज करके, आधुनिक युग की सभ्यता एवं संस्कृति को आत्मसात करने की पहल की है । प्रस्तुत सन्दर्भ में भी उपर्युक्त भाव निहीत है । जिसके अन्तर्गत नारी केवल पुरूषों के पीछे रहती है । ऐसी मान्यता का खंडन करके समानता की पृष्ठभूमि पर आँकने का साहसिक प्रयास किया गया है ।

'विजन' उपन्यास की पृष्ठभूमि लेखिका ने डॉक्टरी जगत से उभारी है । डॉक्टरी जीवन के रहस्य को सूक्ष्मता से नापने का सफल प्रयास किया है । डॉ. नेहा प्रस्तुत उपन्यास का मुख्य नारी चरित्र है । उनके चरित्र में परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई पडता है । वह पुरानी सोच ए वं विचारधारा - जैसे ''शताब्दियों पर शताब्दियाँ बीती चली जा रही हैं, समय की लहरों में परिवर्तन बहते आ रहे हैं, लेकिन, समाज केवल स्त्री को, जिसे उसने दासता के अतिरिक्त और कुछ देना नहीं सीखा, प्रलय की उथल-पुथल में भी शिला के समान स्थिर देखना चाहता है । ऐसी स्थिरता मृत्यु का श्रृंगार हो सकती है, जीवन का नहीं ।''(३२)

इस तरह पुष्पाजी ने 'विजन' उपन्यास में डॉ. नेहा को परिवर्तनधात्री के रूप प्रस्तुत किया है । जो समय को महत्त्व देकर नयी चेतना को प्रयोगात्मक के आधार पर प्रवाहित करना अपना उत्तरदायित्व समझती है । जो नारी खुद को शीला के समान स्थिर न प्रतिपादित करके चंचल झरनों की भाँति नव-प्रस्फूरित धाराओं में बहना अपना सौभाग्य और कर्तव्य मानती है ।

इस प्रकार ध्यानावित करे तो, प्रस्तुत मुद्दे के अन्तर्गत नारी की आन्दोलित विशेषता को प्रस्तुत किया गया है । विशेष रूप से लेखिका पुष्पाजी का उद्देश्य भी नारी चरित्र को उग्रता और प्रबुद्धता के सहित चित्रित करना है । उन्होंने अपने नारीचरित्रों के जरिए समाज की सड़ी-गली एवम् रूग्गण परंपरा को परास्त किया है । विशेष रूप में 'चाक की सारंग, रेशम, लौंगसिरि, 'इदन्नमम' की मन्दा, कुसुमा, प्रेमभौजी त्रिया-हठकी अल्मा-कबूतरी की अल्मा, कदमबाई, बेतवा बहती रही की उर्वशी स्मिता, 'अगनपाखी' की भुवन, विजन की डॉ. नेहा और डॉ. आभा आदि नारी चरित्र अद्बितीय रूप में उपस्थित हुए है । प्रस्तुत नारी चरित्रों ने अपनी अकथनीय विशेषताओं के जरिए पाठकगण एवम् आलोचकवर्ग को अभिभुत किया है ।

४.४ बहुजन हिताय और सहानुभूति :

स्वतंत्रता पूर्व ही गांधीजी के नेतृत्व में राष्ट्र मुक्ति संघर्ष जब सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पक्षों को लेकर चला तो नारी मुक्ति के लिए भी भारतीय जनमानस में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ और

इसका कारण गांधीजी की लेखनी और वाणी की । क्योंकि एक बार जब किसी ने गाँधी से पूछा – स्त्रियों के सामाजिक कामों में आने से क्या घरेलू उत्तर–दायित्वों की अवहेलना नहीं होगी ? तो गांधीजी का उत्तर था – "मेरे विचार से महिलाओं की पारिवारिक गुलामी हमारी बर्बरता का उदाहरण है । अब वह समय है, जब हमारा स्त्रित्व इन दुराग्रहों से मुक्त हो चुका है, स्त्रियों के जीवन का सारा समय पारिवारिक कर्तव्यों के लिए नहीं होना चाहिऐ ।"[३३]

स्वतंत्रता संग्राम के समय से नारी ने घर के बाहर निकलकर बाह्य दुनिया में रूचि लेना आरंभ कर दिया था । निजी स्वार्थ से ऊपर समाज सेवा में कदम रखना शुरू कर दिया था । राजनीतिक जीवन में भी वे अपने परिवार के साथ ही न केवल सक्रिय रहीं अपितु अपनी पहचान भी बनायी ऐनीबेसेंट, सरोजनी नायडू, विजयालक्ष्मी पंडित, इन्दीरा गाँधी, मदर टेरेसा, आदि ऐसे नाम हैं जो जाज्वल्यमान नक्षत्र की भाँति समाज सेवा के आकाश में चमक रहे है । नारी की इस उदार वृति ने भी अनेक कलाकारों को अनेक रचनाओं की प्रेरणा दी है ।

समकालीन लेखिकाओं की भाँति मैत्रेयी पुष्पा ने भी नारी और उसके परिवारेत्तर जगत पर प्रकाश डाला है । नारी होने के कारण इस लेखिका को इस क्षेत्र में अधिक सफलता मिली है । पुष्पाजी के अधिकत्तर नारीचरित्र परिवार की कैद से आजाद होकर, बहुजन कल्याण की कामना रखते हैं । अत्याधिक नारीचरित्र पारिवारिक गुलामी की जंजिर को तोड़कर सामाजिक क्षेत्र में प्रवेश करते है । जिसके फलस्वरूप उनके व्यक्तित्व का विकास अधिकांशतः श्रेष्ठता को प्राप्य हो जाता है ।

यहाँ पर नारी का कर्तव्य सिर्फ नारी उत्थान ही नहीं रहता । नारी के साथ-साथ पीडित एवम् शोषित पुरूष वर्ग का उभ्युत्थान करना भी अपना कर्तव्य समझती है ।

मनुष्य मुलतः एक सामाजिक प्राणी है । समाज के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है । जन्म से शुरू करके मृत्यु तक की जीवनयात्रा समाज में ही करता है । अतएव उनका भी कर्तव्य बनता है कि समाजपयोगी कार्य करे । परिणामतया समाज के विभिन्न वर्गों को सहायता प्रदान कर सके । प्रस्तुत उपन्यास 'इदन्नमम' में 'मंदाकिनी' मुख्य नारी चरित्र है । किन्तु साथ ही सामाजिक चरित्र के रूप में उपन्यास की पृष्ठ भूमि पर उभरती है । दरअसल उसका संपूर्ण जीवन दूसरों के लिए समर्पित है । वह व्यक्तिगत दुःख को समष्टि में विलीन करती है । 'मन्दाकिनी' अपने गाँव सोनपुरा के विकास के लिए अथाग प्रयत्न करती है । स्वयं को कष्ठ एवं पीड़ा देकर बहुजन हिताय के लिए कार्यरत रहती है । जैसे - ''वह सुबह चार बजे उठ जाती, नहा-धोकर पूजा-अर्चना और फिर प्रधान काका के साथ एरय तक मीलों की पैदल यात्रा, कभी बैलगाड़ी से और फिर बस में झाँसी । सुबह से लेकर धूलभरी दोपहरी में और धमसभरी शाम तक वह प्रधानजी के साथ सी.एम.ओ. के ऑफिस के आगेवाले बरमादे मैं बैठ़ी रहती, जैसे धरना देने का इरादा रखती है ।''(३४)

उपरोक्त सन्दर्भ से मन्दा के चरित्र में बहुजन हिताय के भाव परिलक्षित होते है । वस्तुतः गाँव के विकासलक्षी कार्यों को पूर्णता

प्रदान हो, ऐसे मेहच्छा से सरकारी ऑफिसों में, कारिंदों आदि के सामने अपनी समस्याओं प्रस्तुत करना आदि कार्य करती है । आम तौर पर जनता के लिए या शोषित एवं पीड़ित लोगों के उद्धार के लिए जो व्यक्ति कार्यरत रहता है, उसे जनवादी कहा जाता है । जिस प्रकार श्रीकृष्ण एक जनवादी चरित्र है । विशेष रूप में कहे तो लोकरंजक चरित्र है । यहाँ लेखिका ने 'मन्दाकिनी' के चरित्र को लोकरंजक रूप में अंकित किया है । दरअसल मन्दा कभी मजदूरों की समस्या के लिए मालिक वर्ग से लड़ती है, तो कभी दारोगा के साथ शाब्दिक वाक्‌युद्ध करती है । मानो मन्दा के हरेक कदम आम जनता के लिए उठते है । जैसे वह अपनी दादी से कहती है कि – ''बाऊ जाना जरूरी न होता तो हम जाते ? चुनाव जल्दी ही है, सलाह–मशवरा करना है । पहाडों के मजदूरों के भी वोट हैं । उनसे बाते करनी हैं । और दो–चार गाँव छोड़कर हर गाँव में पहाड़ पर मशीनों लगी हैं । सो बझ लो, हमें तो एक दिन भी खाली नहीं दीखता अब ।''[३५] उपन्यास में अन्य जगहों पर मन्दाकिनी सांसारिक जीवन का मोह छोड़कर समष्टि हिताय के वास्ते संकल्पसिद्ध नारी के रूप में उभरती हे । जैसे – ''उसने वहीं बैठे–बैठे संकल्प उठाया । मुझे तो किसी सरकार से भी नहीं लड़ना, किसी राजतंत्र का विरोध नहीं करना, चन्द व्यापारियों के विरूद्ध ही तो आवाज उठानी है । वह भी ये जो परदेशी हैं हमारी भूमि पर । रात में देर तक सोचती गुनती रही वह ।[३६]

प्रस्तुत गंधाशों में मन्दाकिनी की चारित्रिक विशेषताओं में बहुजन हिताय के भाव निहीत है । मन्दाकिनी की लडाई व्यक्तिगत न होकर समष्टि के रूप में परिणत होती है । अपनी लड़ाई के माध्यम से

भूमिविहीन और मजदूर वर्ग को न्याय प्रदान हो इसीलिए वह अथाग प्रयत्न करती है । जिस प्रकार कहा जाता है कि मरिजों के प्रति लगाव हो जाने से, उनकी तिमारदारी करना कठिन होता है । किन्तु लेखिका ने उक्त कथन को डॉक्टर का जीवनमंत्र बनाया है । क्योंकि मरीजों से ही डॉक्टरी की दुनिया शुरूआत होती है । अन्यथा उनके प्रति स्नेह और लगाव आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य होता है । जैसे आभा दी 'विजन' उपन्यास में डॉ. नेहा को मरीजों के प्रति सहानुभति रखते हुए कहती है कि - ''डियर, सब कुछ भूल जाना, मगर नहीं भूलना कि हमारी दुनिया में मरीजों के दुख दर्द और उन दुख दर्दों से निजात पाने के उपायों से बढ़कर अहमियत किसी चीज की नहीं । यही तो हमारे सुख का सागर है । इससे अलग हम सोचते भी क्या हैं, एक्सैप्ट दिस ओशन ऑफ हैपीनेस ।''(३७)

लेखिका ने डॉ. आभा के माध्यम से डॉक्टरी जगत के रहस्य को उद्घाटित जरूर किया है । किन्तु साथ-साथ मरीज और डॉक्टर के सम्बन्धों की जाँकी को प्रस्तुत भी किया गया है । इस प्रकार डॉ. आभा के चरित्र में भी बहुजन हिताय के भाव परिलक्षित होते हैं । तो कहीं लेखिका ने रूढ़िगत नारी चरित्र को भी बहुजन हिताय के रूप में प्रदर्शित किया है । 'झूलानट' की बालू की अम्मा एक ऐसा नारीपात्र है । जो बेटे के जरिए त्यक्ता पुत्रवधू को सँभालना अपना कर्तव्य समझती है । क्योंकि समाज में अन्य लोग देखें तो नारी को त्यागें नही और नारी के प्रति सम्मान की दृष्टि से देखें, ऐसे उद्देश्य से अम्मा बहू के प्रति सहानुभूति रखती है । जैसे - '' अम्मा थाली में तरकारी-रोटी नहीं, भाभी के लिए

मोह–ममता परोस रही थीं, पराई–जाई के लिए इतने दुक्ख। रोटी खबा बहू कों – तेरी बात न टालेगी। न माने तो अपने सीस की सौगंध देना होते–सोते खसम का सबर नहीं बँधता जनी को... ।''(३८)

प्रस्तुत सन्दर्भ में अम्मा के चरित्र में सहानुभूति के लक्षण स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं । ज्यादात्तर नारी की मनोव्यथा को नारी सहजता एवम् गंभीरता के साथ समझ सकती है । अतएव सास पुत्रवधू के दु:ख को भली भाँति जानती है । अत: उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करती है । गांधीजी का प्रिय भजन 'वैष्णव जन तो तेने कहिए २...' के अन्तर्गत कहा गया है कि पर पीडा को व्यक्तिगत पीडा या दु:ख समझकर सेवा सुश्रुषा करना ही सही अर्थ में इन्सानियत है । क्योंकि सारा संसार 'वसुदेव कुटुम्बकम्' की भावना से बँधा है । सब जीवों के प्रति स्नेह, प्यार और अपनत्व की भावना को कायम रखना हमारा कर्तव्य है । उक्त कथन की पुष्टि लेखिका ने 'कही ईसुरी फाग' की रज्जो के माध्यम से किया है । रज्जों ईसुरी महाराज के घायल हो जाने के बाद पारिवारिक मर्यादाओं का उल्लंघन करके उनकी सेवा में कार्यरत रहती है । क्योंकि एक विवाहित औरत का परपुरूष की सेवा करना, सामाजिक निषेधों को तोड़ने के बराबर है । किन्तु रज्जों निषेधों की परवाह नहीं करती हैं । जैसे – ''रज्जा हँसी भूल गई । लपककर दरवाजे तक आई । आकर जल्दी से भीतर लौटी और काँसे के बेला में हल्दी भिगो ली । भिगोकर पीस डाली । बेला में हल्दी लेकर बाहर निकली तो ईसुरी अपने घुटने से निकलते खून को गौर से देख रहे थे । चबूतरे से टिके बैठे थे । वह हल्दी फगवारे के घुटने पर पोतने लगी । ताज्जुब कि

गली से कोई नहीं गुजरा । नहीं, एकांत गली थी वह । या गिरने का समय ही अकेला था निर्द्वन्द्व ।''(३९)

तो कहीं पर लेखिका ने व्यक्तिगत पीड़ा एवम् दु:ख को समष्टि में विलीन करके समग्र मानव समुदाय के प्रति सहानुभूति के भाव प्रदर्शित किये है । प्रस्तुत उपन्यास में गंगिया बोडिनी एक विद्रोही नारी है । जो हमलावरों का निर्भीकता से सामना करके पुरे आवाम् को सुरक्षा प्रदान करने का मंशुबा रखती है । एक प्रकार से वह जनवादी नारीचरित्र है । समग्रतया गंगिया बोडिनी जनकल्याणर्थे कार्यशील रहकर समूदाय हिताय की भावना को उजागर करना चाहती है । जैसे गंगिया कहती है कि - ''हमे समझ रहे हैं कि तुम्हारा कलेजा दरका हुआ है । अपने भीतर लहूलुहाऩ ही रही हो । होगी नहीं, चौतरफा जंग लड़ रही हो । पर बहन, जंग कहाँ नहीं है ? हमें तो लगता है हर आदमी की जिन्दगी जंग है न ? एक हैं फिरंग जो आदमी को मार-मारकर खून पी रहे हैं, एक हैं राजा लोग जो अपनों को कुचल रहे हैं, एक हैं मुसाहिब लोग जो कलाकारों की जान के दुश्मन हैं, एक है हम जनी मानसें, जिनको कहीं टेक नहीं...!'(४०)

उपर्युक्त सन्दर्भ में गंगिया बेडिनी की चारित्रिक विशेषताओं के तहत समुदाय के प्रति दया, प्रेम और सहानुभूति आदि भाव दृष्टव्य होते है । तत्कालीन परिस्थितियों से वाकिफ होकर, आनेवाले वक्त में आम जनता का जीवन सुखाकारी हो । इसीलिए चिंतित एवम् अथाग कार्यशील रहती है । जिनकी बदौलत आवाम् आनंदमय जीवन बसर कर सके । मैत्रेयीजी ने 'अगनपाखी' उपन्यास की नानी (भुवन की माँ)

के चरित्र में भी सहानुभूति और बहुजन हिताय के भाव प्रचुर मात्रा मे भरे है । फलस्वरूप मजदूरवर्ग नानी के खेतों में काम करने के लिए उत्साहित रहता है । 'अगनपाखी' उपन्यास में नानी के चरित्र की सार्थकता स्पष्ट करते हुए लिखा है कि – ''औरत होने के नाते नारी में मजूरों के लिए कुछ नरमाई रहती है, हो सकता है इसलिए मजूर उनके काम पहले साधते हो । नानी मजूरी में भी ज्यादा नाप जोख नहीं करतीं, नानी मजूर के खाने–पीने का भी ख्याल रखती हैं, मजूर कहते हैं कि वे माँ हैं । जो भी कारण रहा हो, उनको कटइयों की कभी नही पडीं ।[४१]

अंत में सारतः कहना हो तो कह सकते है कि पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में नारीपात्रों की विशेषताओं में निहीत विभिन्न भावों को पात्र की सक्षमता के आधार पर प्रस्तुत किया है । उक्त विशेषताओं के अन्तर्गत उन्होंने नारी पात्रों के माध्यम से समाज के शोषित एवम् पीड़ित लोगों के प्रति सहानुभूति की भावना को समुदाय हिताय के केन्द्रबिन्दु में विलीन किया है । विशेष रूप में 'इदन्नमम' की मन्दा के चरित्र में बहुजन हिताय और सहानुभूति की भावना लेखिका ने ठुस–ठुस कर भरी है । अन्य पात्र जैसे – अखनपाखी की नानी, विजन की डॉ. आभा, झुलानट की अम्मा, कहीं ईसुरी फाग की रज्जो और गंगिया बेडिनी आदि नारी चरित्रों में उपर्युक्त भाव प्रचुर मात्रा में विध्यमान है । जिसके फलस्वरूप कुंठीत और हताश लोग पुनः जीवनधारा में बहने के लिए तत्त्पर हो जाते हैं ।

४.५प्रस्तुत नारी चरित्रों में विद्रोहभावना :

वर्तमान मानव जीवन, सामाजिक विषमताओं एवं विसंगतियों से ग्रस्त अत्यन्त असंतुष्ट जीवन व्यतीत कर रहा है । नवम एवम् दसवें दशक हिन्दी उपन्यासों में व्यक्ति की अतृप्ति व्याकुलता, कुंठा, अभाव, भूख, आक्रोश तथा सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह का अंकन बडे मार्मिक रूप से हुआ है । इन समस्याओं ने व्यक्ति में अनेक अंतर्विरोधों को जन्म दिया । आर्थिक वैषम्य, राजनीतिक भ्रष्टाचार, जीवन मूल्यों का विघटन महँगाई, मानव-संबंध, बेकारी की नई व्यवस्था, रिश्वतखोरी, नैतिक पतन, चारित्रिक संकट ए वं आत्मविश्वासहीन संदर्भों ने उसे इस सीमा तक विवश कर दिया कि भविष्य के प्रति उसके मन में कोई आशा ही शेष न रह गई । यह एक ऐसी स्थिति है कि आज व्यक्ति पंगु और अपाहिज बनकर बैसाखियों के सहारे खुद को घिसट रहा है । हिन्दी उपन्यासकारों ने अपने इस आक्रोश को अपनी कृतियों में व्यक्त किया हैं । इन सारी अव्यवस्थाओं के विरोध में उन्होंने अपनी लेखनी चलाई है ।

उक्त अव्यवस्थाओं को दशवें दशक की सशक्त लेखिका श्री मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य का मुख्य आधार स्तंभ बनाया है । तत्कालीन समाज व्यवस्था की आड़ में नारी पर हो रहे अत्याचारों को साहित्यकारों ने उपन्यास का केन्द्रबिन्दू बनाकर पाठकवर्ग के सामने समस्या और समाधान के रूप में वर्णित किया हैं । नारी जागृतता एवम् सचेतता पर कड़ा व्यंग्य प्रस्तुत करते हुए जानी मानी लेखिका तसलीमा नसरीन स्त्रियों की तथाकथित अवदशा को उद्‌घाटित करते

हुए लिखती हैं – ''कुशासन के विरूद्ध आवाज उठाने या किसी भी तरह की विषमता को दूर करने के लिए स्त्री की पहली जरूरत है स्वावलंबी होना । स्वावलंबी न होने से हर स्त्री की जबान बंध रहती है । पाँव अंचल और हाथ स्थिर रहते हैं । चेतना भौंथरी हुई रहती है । भौंथरी चेतनावाली स्त्रियों से, इन जड़ वस्तुओं से किसी भी अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने की उम्मीद करना वैसा ही है, जैसा कि खच्चर के आदमी होने का सपना देखा जाए ।

स्त्री शिक्षित हो, आत्मनिर्भर हो, तभी वह अपने अधिकार के प्रति सचेत होगी ।''(४२)

अति आधुनिकयुग में जिसका नाम परंपरा विध्वंशक के रूप प्रसिद्ध है, वह मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में समाज की दमित एवम् शोषित नारी को वाचा प्रदान करने का अवसर दिया है । चुँकि व्यक्ति आज, शारीरिक रूप में स्वतंत्र अवश्य हुआ है । किन्तु मानसिक धरातल पर, आज भी उसे दमित करने का दुस्साहस किया जाता है । पुष्पाजी के 'चाक' उपन्यास में सारंग की फूफेरी बहन रेशम का सामाजिक रीति – रिवाजों एवम् पुरानी मान्यताओं के प्रति खुला विद्रोह दर्ज हुआ है । क्योंकि विधवा के लिए बच्चे को जन्म देना असंभव–सा है । किन्तु रेशम समाज के आततायियों से लड़कर बच्चे को जन्म देने का फैसला करती है । रेशम की तुलना देवेश ठाकुर के 'जनगाधा' उपन्यास की मिस सलमा के साथ कि जाती सकती है । सलमा एक बोल्ड नारी है । वह एक बच्चे की माँ होकर भी अपने नाम के साथ 'मिस' लगाती

है । आधुनिक नारी चोट सहकर विद्रोही बन जाती है । वह कहती है – '' क्या कुमारी बच्चा नहस जन सकती ?''(४३)

इस प्रकार मिस सलमा का विद्रोह समाज की पुरानी व्यवस्था के खिलाफ है । जिनमें स्त्रियों को स्वतंत्रता के अन्तर्गत नहीं परतंत्रता की निगरानी में रखा जाता था । उसी प्रकार 'चाक' की रेशम भी समाज की पुरानी व्यवस्था और मान्यता के खिलाफ विद्रोह करती है । विशेषतः उक्त विचार पाश्चात्य संस्कृति का समर्थन करता है । सो लेखिका ने रेशम के जरिए अभिव्यक्त किया है । जैसे – ''रेशम विधवा थी – जमाने के लिए, रीति–रिवाजों के लिए, शास्त्र–पुराणों के चलते घर और गाँव के लिए । विधवा सिर्फ विधवा होती है । वह औरत नहीं रहती फिर । यह बात पता नथी उसे किसी ने समझाई कि नहीं ? किसी ने कहा नहीं कि इच्छाओं के रेशमी तारों में आग लगा दे रेशम ? उसने तो केवल इतना माना कि पेड़–हरा–भरा रहे तो फूल–फल क्यों नहीं लगेंगे ? ऐसा हो सकता है कि ऋतु आए और बलरी लता फूले नहीं ? औरत ऋतुमती हो और आग दहके नहीं ?''(४४)

उपर्युक्त सन्दर्भ में ज्ञात होता है कि रेशम एक विद्रोही नारी है । जो समयानुसार अपना विद्रोह भाव प्रदर्शित करती है । दरअसल विधवा होकर बच्चे को जन्म देने की मंशा रखना । शायद भारतीय सभ्यता और संस्कृति के मूल्यों को विध्वंश करने के समान ही है । प्रस्तुत उपन्यास की नायिका सारंग के व्यक्तित्व के विभिन्न रूप उपन्यास में परिचयाक बनते है । नारी शोषण की परंपरा आज के मानस की उपज नहीं है । यह परंपरा बहोत–ही पुराने समय की देन है ।

जिसमें पिसना नारी की नियति है । किन्तु आधुनिक युग में पाश्चात्य विचारधारा के फलस्वरूप नारी की स्थिति में सुधार आया है । गुलामी की लकिरों को तोड़ना उसका उद्देश्य बन पड़ा है । पुष्पाजी ने नारी चरित्रों के जरिए समाज की पुरानी व्यवस्था और मान्यताओं को तोडने का सशक्त प्रयास किया है । जिनमें व्यक्ति के परिवार को महत्त्व न देकर स्व अभिव्यक्ति को प्राधान्यता दी गई है । जैसे 'इदन्नमम' की 'कुसुमा भाभी' एक सशक्त विद्रोही नारी है । उनके चरित्र में आधुनिक एवं प्राचीन दोनों गुणों का समन्वय है । जो परंपरा में बँधना अपना नियति समझती है, तो परंपरा को तोड़ना अपना कर्तव्य मानती है । उपन्यास में कुसुमा त्यक्ता है । किन्तु दैहिक प्यास को अपने छोटे ससुर दाऊजी (अमरसिंह) से बूझाती है । परिणामतया वह गर्भवती होती है । परिवार के सदस्यों द्वारा विरोध करने पर, पारिवारिक लोगों के सामने गर्भ न गिराकर, पति के सामने क्रोध व्यक्त करती हुई कहती है कि - ''लाज-लिहाज त्यागकर चीज पड़ी वह ''ओ नकीले ! खैर मना कि बच्चा दाऊ जू का है । नहीं तो किसी का भी होता, जात का आन जाता का । गैल चलते आदमी का ।

''तुम होते कौन हो हमारी नाकेबन्दी करनेवाले ?''

''तुम्हे क्या हक्क ... कुत्ता की जात नहीं गिनते हम तुम्हें ।''

यशपाल - ''जुबान खींच लूँगा तेरी । चली जा सीधे अस्पताल और खतम करा...''

नही जाऊँगी ! कभी नहीं ! आकास-पाताल एक हो जाँय तो भी नहीं ।''(४५)

उक्त सन्दर्भ में कुसुमा के चरित्र की विद्रोह भावना से हम परिचित होते हैं । चूँकि पति के होते हुए भी अन्य पुरूष से गर्भधारण करना, एक प्रकार का सामाजिक विद्रोह ही है । 'चाक' उपन्यास की नायिका भी एक ऐसा विद्रोही नारी चरित्र है । जो अनायास विद्रोह के पथ पर अग्रसर होती है । वह स्त्री को पुरूषों के द्वारा दमित करने की भावना के खिलाफ अपना विरोध दर्ज करके, स्त्री जाति को मुक्ति देना, अपना लक्ष्यांक मानती है । जैसे ''कि अपनी सी पर आ जाए औरत तो मर्द को दस पटखनी ... लोग मानें न मानें स्त्री आदमी से दोगुना खाती है, चार गुनी लज्जाशील, छः गुनी हिम्मती और आठ गुनी कामिनी । तभी तो इसे गहनों से बाँध-छेदकर रखा जाता है । पर यह रंजीत की लुगाई आदमी से कितनी गुनी बलवान है कि बाँधने - छेदने पर भी इतनी खौफनाक ।''[४६]

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि स्त्री को गहनों और प्रेमालाप में बाँधकर रखना चाहिए । क्योंकि स्त्री अपने स्त्रीत्व पर उतारू होने पर पुरूषों से ज्यादा बलवान और कामिनी होती है । अगर वह विद्रोह करे तौ, संसार के श्रेष्ठतम पुरूष को परास्त कर सकती है ।

विशेषतः मैत्रेयी पुष्पाजी का संपूर्ण साहित्य नारी जीवन के आसपास ही लिखा गया है । जिसके अन्तर्गत नारी जीवन के विभिन्न पहलूओं को उजागर किया है । पुष्पाजी का विहंगावलोकन नारी को चार दिवारों में कैद न देखकर, ऊर्जा स्त्रोत के रूप में दृष्टिगत होता है । 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग में भी वहीं भाव मुखिरित किए है । जो अत्याचारों को चूपचाप सहना नहीं चाहती है । उनके खिलाफ आवाज

उठ़ाना ही नारी का मुक्ति ध्येय है । सारंग कहती हैकि – ''जब तक स्त्री का अपमान होता रहेगा, ऊसर भूमि ऐसे ही जलती रहेगी । फसल को वीराने में बदल देगी । मंझा स्त्री थी, स्त्री की पीर जानती थी, तभी तो साधु–महात्मा से एक चावल नहीं, अपनी जैसी बाँझपन भोगती हुई सौ रानियों के एक चावल नहीं, अपनी जैसी बाँझपन भोगती हुई सौ रानियों के लिए सौ चावल लाई थीं । चन्दना की पुकार भी यही कहती है – बेटियों का मार–काट कर कोई हरित क्रांति नहीं कर सकता । हमारा जीवन ...... हमारा हक्क .... चंदना पुकारती है ।(४७)

तो कहीं सारंग पर सामाजिक बंधनों का पर्दाफाश करती दिखाई पड़ती हैं । पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था में नारी देवी के समान जरूर प्रस्थापित की गई है । किन्तु स्त्री की स्वतंत्रता पर पुरूष परहेज अवश्य करता है । क्योंकि लौहे में ढली औरत को मांस–मज्जा से बना आदमी, अपने से बलवान कभी नहीं मानेगा । अतएव ऐसा करना मर्द जाति अपनी तौहिन ही समझेगा । पारंपरिक मान्यताओं को खारिज करके सारंग कहती है कि – ''अरे ! हम इसी तरह हवन करते रहेंगे अपनी देहों का ! हमें मारकर ही इनकी आनबान का झण्डा फहरेगा ? भँवर, कैसे लोग है ये ? इनके पास अपना कुछ भी नहीं ! घर–बार की खुशी, शान–शौक्त हमारे घूँघट के नाम लिख दी है । तुम्हारे भइया । पढ़े–लिखे बनते हैं और घूँघट ऊँचा होते ही गुर्राने लगते हैं ।''(४८)

प्रस्तुत सन्दर्भ से सारंग की विद्रोहभावना स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होती है, जिनके तहत नारी स्वतंत्रता को लेकर, पुरूष वर्ग कभी भी रियायत नहीं देंगा । किन्तु स्त्री चाहे तो बँधन की दिवार गिराकर

मुक्ति की राह पर चल सकती है । तो कहीं पर लेखिका ने वर्गभेद की समस्याओं को प्रस्तुत किया है । किन्तु गंभीर समस्या का बयान नारी के जरिए करवाया है । आज भी भारतीय लोगों पर 'मनुस्मृति' का विचार शैली प्रभावित करती रहती है । मनुस्मृति से प्रभावित लोगों के मानसपट से वर्गभेद या जातिवाद एक गंभीर समस्या है ।किन्तु नारीचेतना की धरोहर मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास साहित्य में जातिवाद की रूग्ण विचारधारा को खदेड़ने का अथाग प्रयत्न किये है । 'चाक' उपन्यास की गुलकंदी एक विद्रोही नारी है । जो समाज की पुरानी परंपरा को तोड़कर, जाति भेद को मिटाने का प्रयास भी करती है । अन्य जाति के लड़के के साथ ब्याह रचाकर, परंपरा का उन्मूलन करती है । जैसे - ''भइया, एसी राह न निकले तो साला दहेज सुरसामुख-सा बढ़ता जाएगा । गुलकंदी को तो शाबाशी देनी चाहिए कि उसने नई राह दिखादी गाँव की छाई-छापरियों को (लड़कियों को) इसमें बुरा मानने की कोई बात नहीं।''(४९)

गुलकंदी की तरह उपन्यास की नायिका सारंग नैनी भी ऐसी मान्यताओं, उच्चनीच के भेदभाव, जैसी रूग्ण विचारशैली का विरोध करती दिखालाई पड़ती है । जैसे ''आजकल जाति-बिरादरी ! तुम भी बीबी पुराने समय की बात ....' माना कि दोहरा अपराध कर बैठी हूँ । एक परदेशी गैरमर्द, दूसरे, छोटी कौम के पाँवों में सिर टेकना । लेकिन वहाँ ऊँचता नीचता जाति को लेकर नहीं थी ।''(५०) इस प्रकार सारंग भी जातिवाद मे परिणत समाज व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करती है । क्योंकि किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व की शिनाखत जाति के आधार

पर, नहीं । उनके कर्मों के आधार होनी चाहिए । सारंग उक्त मान्यता का समर्पण करके श्रीधर से लगाव बढाती है । उसे प्यार करती है ।

तो वहीं पर 'अगनपाखी' उपन्यास की नायिका भुवनमोहिनी भी जातिवादी के प्रति अपना विरोध दर्ज करके उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । दरअसल मैहतर के घर का खाना खाने से छूआछत की मान्यता में विश्वास करनेवाले लोगों का वह खुलकर विरोध करती हे । भुवन के चरित्र में भी समाज की रूग्ण विचारधारा को नष्ट करने का जज्बा है । जैसे दौड़कर गयी और पनका मैतरानी के घर में घुस गयी । जरा भी झिझकी नहीं, जैसे रोज ही आती जाती हों ।

वहाँ से टठुलिया में रोटी और बैंगन की तकरारी ले आई । सात-आठ रोटियों के टुकडे-टुकडे, बैगन की तरकारी में कई तरकारी मिली हुई । हमसे बोली-लो, खाओ । अब तुम्हें अपनी नानी, अपनी अम्मा का मुँह नही ताकना पड़ेगा ।''(५१)

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि भुवन के चरित्र में विद्रोह भावना पूर्ण रूप में विध्यमान है । जो परिस्थितियों से वश होकर उबलने लगती है । समाज की दरिद्र मानसिकता से त्रस्त होकर उनके खिलाफ विद्रोह करना अपना कर्तव्य मानती है । इसीलिए निम्न जाति के घर का खाना खाकर, समाज की मानसिकता को बदलन का प्रयास भी करती है । तो कहीं पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था के अन्तर्गत नारी स्वतंत्रता को लेकर विभिन्न अमानुषक पाबंधियाँ लगायी गई है । जिनके परिणाम स्वरूप नारी को घर से बाहर निकलना काल्पनिक

लगता है । किन्तु पाश्चात्य विचारों से प्रभावित नारी अब सारे बँधन एवम् मान्यताओं को खारिज करके स्वतंत्र रूप में जीवन यापन करना चाहती है । 'इदन्नमम' उपन्यास की नायिका मन्दा के चरित्र में भी समाज व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश व्यक्त हुआ है । वह कहना चाहती है कि क्या स्त्री होना अपराध है ? क्या वह बँधी ही समझी जाएँगी ? जैसे वह अपनी दादी के सामने अपना विरोध व्यक्त करते हुए कहती है कि –" बऊ, ऐसे ही ले जाएगी पुलिस ? मैं पुलिसवालों के हाथ आऊँगी ? मेरे माथे पर लिखा है कि मैं मन्दा हूँ ? कि मैं ही अम्मा की बेटी हूँ ? स्कूल के पास खड़ी किसी भी लड़की को कैसे बाँध ले जाएगी पुलिस ?

बऊ... मैं कितने निदों तक बन्द रहूँगी ?"(५२)

आज की नारी का सामाजिक संस्थाओं के प्रति विश्वास कम होता जा रहा है । पुरानी शादी–ब्याह विषयक मान्यताओं पर विश्वास नहीं करती है । इनके लिए स्वच्छंदता ही सर्वोपरि है । वह पुरूषप्रधान समाज व्यवस्था के अन्तर्गत शादी–ब्याह को एक सामाजिक बंधन मानती है । जिसके अन्तर्गत नारी को पशु समान मानकर, पुरानें रिवाजों के तहत बाँध दिया जाता है । किन्तु आधुनिकयुग की नारी अब पूर्णरूपेण सचेत हो गई है । वह जैसे 'झूलानट' उपन्यास की नायिका शीलो एक विद्रोही नारी है । उनके नजरियों से शादी–ब्याह पुरूषों को नारी पर अत्याचार या सितम ढाने का लायसेंस ही है । फलस्वरूप नारी पर अत्याचारों का सिलसिला शुरू होता है । अतएव शीलो उक्त विधि के प्रति अपना विरोध प्रकट करते हुए कहती है कि – "बछिया ! सासने कहा ।

'न । बछिया-मछिया कुछ नहीं ।

नहीं । बिलकुल नहीं ।

हाय गजब । गाँव-समाज को क्या मुँह दिखाएंगे ?

मुँह दिखाने को किसी की गाय मारी है क्या ?

अजस गठरिया मत बाँधे मेरे सिर, हाँ ।

अंत में शीलो ने अपने दिल की बात कह दी, अम्मा जी, रीत-रसम लिखा हुआ रूक्का तो नहीं होती ।

शीलो ने समझाया - तन-मन का ब्याह । तीसरा कौन होता है हमारे बीच ?''(५३)

जिस प्रकार आधुनिक युग में पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता का अन्धा अनुकरण हो रहा है । शहरी संस्कृति में जिस प्रकार बिना ब्याह किए स्त्री और पुरूष एक साथ रहकर सकते हे । उस शहर की स्वच्छंद प्रणाली का चित्रण झूलानट में किया है । जिसके अन्तर्गत शीलो बिना-ब्याह या बछिया किये बालू के साथ रहती है । सामाजिक तौर पर यह एक विद्रोह हुआ है । बेतवा बहती रही' उपन्यास की मीरा भी एक विद्रोह भाव से परिपूर्ण नारीचरित्र है । मीरा का विद्रोह, स्त्री पर होते रहे अत्याचारों के खिलाफ है । उर्वशी उसके बचपन की सहेली है । किन्तु परिस्थिति वश सौतेली माँ के रूप में उर्वशी का आगमन उसे असह्य कष्टदायक लगता है । परिणामतया सामाजिक परंपरा एवम् पुरूषप्रधान समाज के खिलाफ अपना विरोध दर्ज करती है । जैसे -

''साहसा चेतनाशून्य देह में सम्वेदना का तीव्र संचार । रोम-रोम उससे लिपट जाने को आतुर । अपमान, उसका, उर्वशी का या... इस धरती पर जन्मी हर औरत का ... पता नहीं, भीतर कोई शिला भारी होती जा रही थी दम घोंटने का ।

उर्वशी, तुम्हें विधवा देखा था तो कष्ट सहने की क्षमता थी । पर आज... आज... । इससे अधिक मीरा फिर कुछ न कह सकी ।''(५४)

तो कहीं वही उर्वशी घायल होकर ओर भी मजबूत हो जाती है । अपने पर हुए अत्याचार अन्य नारी पर न हो इसीलिए सावधानी भी बरती है । विजय की विधवा बहू को ब्याह उदय के साथ सम्पन्न हो इसीलिए अथाग प्रयत्न करती है । पूरी समाज व्यवस्था के खिलाफ होकर, अन्याय का विरोध करती है । जैसे उर्वशी बरजोरसिंह को ललकारते हुए कहती है कि - ''अन्याय हम नहीं होने देंगे 'गाँव से रंजिश करके चैन नहीं सकत तुम्हे... मान लो अब भी । उदय की शादी के लिये जो लोग आये हैं, पइसा वाले हैं, अपनी बेटिया के लिए आसानी से उदय जैसा वर खोज लेंगे । ... लेकिन हमारे विजय की बहू... कहाँ जायेगी वह ? कौन ब्याहने आयेगा उसे ? तुमने कबहूँ सोची जे बात ? कैसे कहेगी उसकी जिन्दगानी ... ?

बेटा नहीं रहौ तो बहू बिरानी हो गयी ? धक्का मारदऔ वाय ? हमारे रहते जा अनरथ नहीं हो सकत ... एक से हजार तक नहीं.... ?''(५५)

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि उर्वशी की विद्रोह भावना अकेले विजय की बहू के लिए कदापि नहीं है । किन्तु उर्वशी का विद्रोह समग्र

नारी वर्ग के लिए है । क्योंकि विधवा होना शाप दायिक अपराध माना जाता है । परंतु उर्वशी विजय की बहू का पुनः ब्याह करवाकर समाज व्यवस्था के सामे विद्रोह अभिव्यक्त करती है । पुष्पाजी का सृजन क्षेत्र विभिन्न परिवेश को सम्मलित करता है । क्योंकि 'विजन' उपन्यास का सृजन करके लेखिका ने डॉक्टरी जगत् के विभिन्न रूपों का परिचय दिया है । जिसके अन्तर्गत डॉक्टर लोगों का मरीज के साथ अमानुषिक अत्याचार आदि समस्या का सूक्ष्म रूप में चित्रण मिलता है । डॉ. नेहा 'विजन' उपन्यास का मुख्य नारी चरित्र है । उनके चरित्र में हमदर्दी, सेवा परायणता आदि मानवीय भाव लेखिका ने ठुस-ठुसकर भरे है । किन्तु अन्याय एवम् अत्याचार के खिलाफ त्वरीतता से विरोध करना भी नहीं भूलती है । डॉक्टरी व्यावसाय के साथ संलग्न लोगों की व्यावसायिक शोषित नीति के सामने डॉ. नेहा अपना विरोध दर्ज करते हुए कहती है कि – ''जिस तरह तुम एक क्रुर शासक से ज्यादा कुछ नहीं, उसी तरह तुम्हारा आज्ञाकारी पुत्र नहीं, पालतू कुत्ता है । बस । मगर अफसोस ... कि तुम फिर भी मान बैठे हो कि तुमने उन पिताओं की दुनिया फतह कर ली जो मेडिकल कॉलेजों, अखिल भारतीय चिकित्सा संस्थानों से लेकर अनेक प्रशासित संस्थाओं और राजनीतिक गलियारों तक जाती है । उन रास्तों पर भी तुम्हारे जैसे अनेक पिता जीत का परचम लहराते हुए मिल जाएँगे । वे अजय की तरह के डिग्रीधारी पुत्रों के जरिए अगली पीढ़ियों तक आलाकमान बने रहने का लायसेंस पा गए हैं और इसीलिए राह के रोड़े प्रतिभावान नौजवानों को ठिकाने लगा रहे हैं ।''(५६)

उपर्युक्त सन्दर्भ से डॉक्टरी व्यवसाय के साथ जूडे लोगों की असलियत प्रदर्शित होती है । हालाँकि नेहा का विद्रोह अपने पति और ससुर तक सीमित नहीं है । किन्तु समस्त भ्रष्टाचारी लोगों के खिलाफ है । जो डॉक्टर जैसे पवित्र व्यक्ति का मुखोटा पहनकर भ्रष्टाचार को गति प्रदान करते है । सही अर्थों में एक काबेल डॉक्टर होने के नाते नेहा का मरीजों के प्रति सहानुभूति पूर्ण व्यवहार स्वाभाविक है । किन्तु अत्याचारियों का विरोध करना अपना धर्म एवम् कर्तव्य मानती है । फलस्वरूप अपने ससुर डॉ. शरण की शोषण नीति और अपने पति अजय की काबेलियत पर संदेह करके उनकाभी विरोध करती है ।

प्रस्तुत विश्लेषित मुद्दे के अन्तर्गत पुष्पाजी की नारियों की विद्रोह भावना को अंकित किया गया है । प्राचीनतम ग्रंथों की आलोचना करे तो, 'महाभारत' में भी भगवान श्रीकृष्ण का कहना है कि जुल्म, अन्याय, अत्याचार, अधर्म आदि उपद्रव बढ़े तो उसका विनाश करना श्रेयस्कर है । आधुनिक युग का सशक्त और तटस्थावादी आलोचक डॉ. ओमप्रकाश वाल्मिकी जी कहते है कि परंपरा जब व्यक्ति के विकास को बाँधक बनायें तो उक्त परंपरा से मुक्त होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास में नारी चरित्रों की विद्रोहभावना को मुखरित किया है । विद्रोह भावना को सजीवता प्रदान करने के लिए उन्होंने विविध नारी पात्रों का सहारा लिया है । जिनमें विशेषत: सामाजिक विद्रोहकर्ता नारीचरित्रों, परंपरा के प्रति विद्रोह करते नारीपात्रों को चित्रित किया गया है ।

४.६ प्रस्तुत नारीचरित्रों में भारतीय सांस्कृतिक विरासत्त :

आज के भौतिकवादी युग के नये आविष्कारों की उपस्थिति में संस्कृति अब पुरात्तनकाल को प्रेरणा प्रदान करनेवाली नहीं रहीं है । फिर भी आज भारतीय परिवेश में जहाँ धर्म का अनुसरण किया जाता है, वहाँ विशिष्ट सांस्कृतिक रूप में निहित मूल्यवान तत्व किसी न किसी रूप में युगीन उपन्यास में परिलक्षित होते है । संस्कृति जिसका संबंध ईश्वर, धर्म अध्यात्म नैतिकता, संसार, त्यौहार, पूजा तथा रीतिरिवाज आदि से होता है । मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में यततत्र सांस्कृतिक परिवेश का वर्णन हुआ है ।

मैत्रेयी पुष्पा जी का लेखन क्षेत्र विशेषतः ग्रामांचल रहा है । जिसमें विन्धयांचल के आसपास के पहाडी क्षेत्र को प्रमुख स्थान दिया गया है । उपन्यास में सजीवता और रोचकता कायम हो उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए आसपास की संस्कृति का सूक्ष्मतम अंकन अनिवार्य होता है । पुष्पा ने जिन क्षेत्रों की कथा को बुना है उसकी सभ्यता एवं संस्कृति की झलक अनायास ही उपन्यासों में प्रकट हो गई है ।

'चाक' उपन्यास के रचनाकार ने उपन्यास की पृष्ठभूमि को देहांताचलों के रूप में उभारा है । दिल्ली के आसपास के वातावरण को सजीवता प्रदान की है । विशेषतः उनकी मान्यता, पहनावा (पोशाक), खान–पान रीति–रिवाज, अंधविश्वास आदि महत्त्वपूर्ण मुद्दे को परिलक्षित किया गया है । उपन्यास की नायिका सारंग एक आस्थावादी नारीचरित्र है ।

मुश्केलियों के समय समय भगवान ही आधार है । ऐसा माननेवाली सारंग दास भाव से प्रेरित होकर भगवान से याचना करते हुए कहती है कि -''

ओ देवी मइया ! ओ इस गाँव के देव पितरो ! तुम्हारे पास चंदन की रक्षा की कोईअसीस हो तो आज बरसा दो । जीवन भर कुछ न माँगूँगी । ओ मेरे मियाँमसानी ... जहर - पीर .... ।''[५७]

तो कहीं नारी आस्थावादी दृष्टिकोण, उनके सामाजिक धरातल पर रूढ़िवादी परंपरा पर अंकित करता है । 'झूलानट' की शीलो पति प्रेम के लिए विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान करती दृष्टिपात होती है । जैसे - ''पूस माह के दिन । कड़ाके की ठंड । जप-तप का दौर चला । भाभी अँधियार की ठंडे पानी से नहाकर तुलसी - पीपल ढारतीं । सुंदर-कांड का पाठ करके रोटी बनाती और फिर टुकनियाँ लेकर गाय-कुत्तों के पीछे-पीछे डोला करतीं ।

इसके बाद व्रत-उपवासों का सिलसिला । सोलह सोमवार । संतोषी माता के शुक्रवार । केला-पूजन के बृहस्पतिवार । शनि ग्रह शांति के शनिवार ।[५८]

उपर्युक्त व्रत-उपवास की तरह त्यौहारों के दिन में होनेवाली विशेष पूजा-पाठ का चित्रण पुष्पाजी ने 'चाक' उपन्यास में किया है । संक्रांति के दिन धार्मिक क्रिया-कलापों को लेखिका ने सूक्ष्मतम रूप में वर्णन किया गया है । जैसे कि - ''सूरज का घाम है कि चाँदनी ? माघ माह की किटकिटाती ठंड में अतरपुर की जन-परजा करबन नदी के पाट

पर जमा है । पछइयाँ शीत हवाओं के महूरत में पुण्य नहान जो न नहाए गर्दभ योनि को जाए ।

पाट पर नहाई भीगी औरतें बेर, तिल, चावल, दाल और नया गुड थालियों मं धर-धरकर बैठी है ।''[५९]

प्रस्तुत सन्दर्भ में तत्कालिन लोगों की मानसिक स्थिति प्रस्तुत होती है । त्यौहार के अवसर पर विविध धार्मिक अनुष्ठानों का स्वरूप लेखिका ने उक्त नारीचरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया हैं । तो कहीं पर जाति विशेष के लोग अपने पारंपारिक रीति-रिवाजों और धार्मिक क्रियाओं हु-ब-हु रूप में अभिव्यक्त करते है । 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में जंगलिया की मृत्यु के पश्चात कबूतरा जनजाति के लोग मरणोपरांत क्रियाओं को अपने समुदाय की पारंपारिक विशेषता के रूप प्रस्तुत करके, सांस्कृतिक चेतना को उजागर करते है । जैसे - ''कुँआरी लड़की से चबूतरा लिपवाया गया । अगरबत्ती-मोमबत्ती जलाई गई । देवताओं की मढ़िया बनाने के लिए कोरा कपड़ा थोड़ा ऊपर उठाकर ताना गया । तब बारी-बारी लोग आते गए । उन्हें काँती (बलि का बकरा काटनेवाला चाकू) पकड़ाई जाती । वे देवी के चबूतरे पर कट्टस (x) का निशान बनाते ।

कबूतरियों ने सिसक-सिसककर गीत गाया -

> आजो तो जाजो तो रे पन फूटो मत जात रे
> घोड़ो घोड़ो घूमती, मोर आवतीं / फूलवादी केवड़ा
> आवतीं, आवतीं हमीर दे चीर दे ... ।''[६०]

उपर्युक्त गद्यांश में लेखिका ने कबूतरा जनजाति के रीति–रिवाज एवम् मान्यताओं का परिचय दिया गया है । कबूतरा जनजाति में विभिन्न क्रिया–कलापों में गाना आदि लोक व्यवहारों के माध्यम से उनकी सांस्कृतिक विरासत उभरती है । अन्य जगहों पर लेखिका ने बुन्देलखण्ड के आसपास के परिवेश का चित्रांकन किया है । 'अगनपाखी' उपन्यास में लेखिका ने 'झुआटा' की गौण कथा को स्थान देकर क्षेत्रिय विशेष लोगों की सांस्कृतिक धरोहर को परिलक्षित किया गया है । उपन्यास की नायिका भुवन सांस्कृतिक विरासत को जीवंतता प्रदान करते हुए, कार्यरत रहती है । जैसे कि –'' दशहरे की छुट्टियों में हम शीतलगढ़ी पहुँचे तो भुवन अपने द्वार पर 'सुआटा' बनाने की तैयार में मिट्‌टी गूँध रही थी । सहेलियाँ सुआटा की सजावट के लिए सामान ले आईं । आँखों की जगह कौड़ियाँ चिपकाई गईं । हाथों में टूटी चूड़ियों के टुकडे सजाए । बिन्दी के ऊपर बालों से झाँकता बेंदा पहनाया गया । कानों में बुंदे । होठों पर लाली और नाक में नथ की शोभा । लाल सितारेवाली चुनरी ओढ़कर सुआटा तैयार हुआ । सुआटा के नीचे चबूतरे की धरती ताजा लिपी और रंगोली से सजी हुई । फूल मिठाई चावल हल्दी चढ़ाकर पूजा हुई ।''(६१)

विशेषतया दृष्टिपात करे तो 'सुआटा' बुन्देलखण्ड़ के आसपास की लोक संस्कृति का सजीव और रोचक हिस्सा है । मूलतः मोहम्मद तुगलक के नरपिचाशियों के मानवसंहार से मृतक सैनिकों की पत्नियों ने सामुहिक रूप से जौहर किया था । उन वीरांगनाओं की स्मृति के रूप में आंचल विशेष की नारियों उन्हे सुआटा याद करती है । एक प्रकार

से बुन्देलखण्ड के आसपास के विस्तार की स्त्रियाँ सांस्कृतिक विरासत को जीवंत रखने के लिए, उक्त प्रसंग को प्रस्तुत करती है ।

सशक्त नारीवादी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम सांस्कृतिक चेतना को जीवंतता प्रदान की है । लोगों के सामाजिक व्यवहारुपन को सुक्ष्मतम ढंग से चित्रित किया है । 'चाक' उपन्यास में 'लेखिका ने करवाचौथ व्रत के प्रसंग को अंकित करके भारतीय नारी की एक अलग पहचान दी है । पति की लम्बी उम्र और अखण्डित सौभाग्यवती की कामना के लिए निर्जला उपवास-व्रत स्त्रियाँ करती है । उक्त संस्कृति के पहलू को लेखिका ने 'चाक' उपन्यास में सारंग के माध्यम उकेरा गया है । जैसे - ''सारंग ने करवाचौथ काढ़ी है, ज्यों कागज पर छपी तस्वीर हो - पूरे चंद्रमा का गोला, जिसके हाथ, पाँव, पेट, कमर, आँख, नाक कान सबकुछ । आसपास सात भाभी-चुनरी ओढ़े हुए । छः भाई कुर्ता-धोती पहने हुए, एक भाई नसैनी प चढ़ा चलनी में ढककर दीपक दिखाता हुआ । बीजा बहन अर्ध्य देती हुई .... बाकी चुड़ी-बिछिया के संग सुहाग - पिटारी ।''[६२]

प्रस्तुत गद्यांश भारतीय अस्मिता का परिचायक है । क्योंकि भारती संस्कृति के अन्तर्गत पति को परमेश्वर का स्थान दिया गया उक्त की पूर्ति के लिए भारतीय आर्य नारी करवाचौथ का व्रत रखती है । 'चाक' उपन्यास में सारंग के चरित्र से सांस्कृतिकता की झलक देखने को मिलती है । आम तौर द्रष्टिपात करे तो, भारतीय संस्कृति मूलतः ग्रामीण अँचलों में ही विध्यमान है । क्योंकि विभिन्न प्रसंगोपर उनका पहनावा, रहन-सहन, खान-पान आदि अन्य लोगों से भिन्न और

वैविध्यपूर्ण होता है । जिन से उनकी संस्कृति के दर्शन स्पष्टतया होते हैं । पुष्पाजी ने सांस्कृतिक विरासत को प्रादेशिकता के अनुरूप प्रस्तुत किया है । जैसे 'बेतवा' नदी के क्षेत्रिय विस्तार के जनजीवन को प्रभावित करता उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में ग्रामीण संस्कृति को प्रदर्शित किया गया है । जिनके अन्तर्गत ग्रामीण दुल्हन के पहनाव को विशेष ध्यानांवित किया है । लेखिका ने 'उर्वशी' के दुल्हन रूप को बड़े सजीव एवं मार्मिक रूप में प्रस्तुती दी है ।

जैसे उर्वशी के पोशाक का वर्णन करते हुए लेखिका उपन्यास लिखती है कि - ''गुलाबी अधरों पर बिछलती तीन फूल की नथ घुंघरूदार जंजीर के हुक से बालों में फँसी थी । सुहाग के कचारा (काली चुडी) और बीच में चौड़ी बेल चूड़ी, आगे शेर के मुहवाले चूरा (कंगन), मीनाकारी के पुरानी चाल के ठप्पेदार दस्तबन्द । हार-हँसली के बुन्देलखण्ड़ी और मराठी मिली-जुली गढ़त का तिदाना, जो नाजुक-सी गोरी पतली ग्रीवा से चिपका था । स्वर्णखचित करधनी और रजत रंगत के पाजेब-बिछुए ।

हरे-गुलाबी साटन का घाघरा था - सुनहरी गोटा-जड़ा और सितारोंदार गुलाबी चुनरी।''(६३)

उक्त कथन मे बुन्देलखण्ड के क्षेत्रिय परिवेश तथा लोक संस्कृति से साक्षात्कार होता है । मूलतः ग्रामीण परिवेश शादी-ब्याह के अवसर पर, उनके पारंपारिक वस्त्र-परिधान और सजावट, अंचल-विशेष के लोगों की संस्कृति के आधार होते है । जिनकी पुष्टि उर्वशी का दुल्हन

स्वरूप है । तो कहीं ग्रामीण परिवेश में खान-पान को विशेष महत्त्व दिया जाता है । अतएव रूढ़िगत परंपरा को सर्वस्व माननेवाले लोग, खान-पान के सन्दर्भ में विशेष रूप से सतर्क रहते है । ग्रामीण संस्कृति में ब्राह्मण को भोजन करवाना, सांस्कृतिक विशेष है । तो कहीं त्यौहार आदि विशेष प्रसंग के अनुरूप ग्रामीण संस्कृति के अंतर्गत गाना-बजाना प्रादेशिक रूप में अपने आपमें विशेष महत्त्व रखता है । एक प्रकार से उनकी लौकिक सभ्यता एवं संस्कृति को महत्ता प्रदान की जाती है । 'चाक' उपन्यास का परिवेश 'अतरपुर' अंचल-विशेष को प्राधान्यता देता है । लेखिका ने उक्त परिवेश की सार्थकता के लिए प्रसंगोपात गाने-बजाने के रिवाज को उपन्यास में मुखरित किया है । जैसे - जब खेतों में फसल परिवपक्वता प्राप्त करके लहलहाती है । तब उनके सौन्दर्य को ग्रामीण औरतें शब्दों बाँधकर, लयात्मक रूप से अभिव्यक्त करती है । जैसे - ''उधार लड़कियों - बहुओं के दो दल तैयार हो गए - फसल का गीत गाया आएगा । -

मैं तो रारौं, मैं तो रारौ, बुवाऊँगी ऐसे ऐसे
मोय दाऊ की सों ऐसे ।

कुंती घुँघट डालकर बहू बन गई । बीज बोने का अभिनय करती हुई गुलकंदी के पाले में आई -

मैं तो झिनमा, मै तो झिनमा बुवाऊँगी ऐसे-ऐसे
मोय दाऊ की सों ऐसे ।''(६४)

उपर्युक्त फसल गीत ग्रामांचलों की सांस्कृतिक धरोहर है । जो अनायास ही पुख्तैनी संपत्ति के रूप में अर्जित होती है । प्रस्तुत गीत में कृषक जीवन की लाक्षणिकता को अभिव्यक्त किया गया है । दरअसल प्रस्तुत गीत कृषक जीवन की लाक्षणिकता को अवश्य प्रदर्शित करता है । किन्तु साथ ही उनकी संस्कृति को भी सहजता से परिलक्षित करता है । तो कहीं लेखिका ने बुन्देलखण्ड के त्यौहार पर होनेवाले नाच-गान को भी चित्रित किया है । 'चाक' उपन्यास में होली के त्यौहार पर ग्रामीण लोक संस्कृति को उजागर करता दृश्य लेखिका ने प्रस्तुत किया है । ग्रामीण परिवेश के अन्तर्गत लोग सभी रागद्वेष और आंतरविरोध भावना को भूलकर, हर्ष-उल्लास के साथ त्यौहार की रंगत में सम्मलित होते है । जैसे सारंग अपने प्रेमी श्रीधर के साथ सम्मलित होकर, होली के उपलक्ष्य में अपनी महीन आवाज में गाती है । - ''लेकिन होली की रंगत है कि प्यार में हद से गुजरने की ? फागुन का मद है कि श्रीधर के संग-साथ का हौसला, सारंग ने महीन आवाज में -

''समहे की ला गहो गौरी, समहे की ..

नाक नथुनियाँ मो पै हति नाँय, तो क्या रे पहरि खेलूँ होरी

समहे की ...

अब के तो गोरी तुम यों ही हँस खेलो, तो फिर कें गढाय दूँ दो जोड़ी समहे की .. ।(६५)

जिस प्रकार 'चाक' उपन्यास में होली पर गाने-बजाने के परंपरागत रिवाज को चित्रित किया गया है । उसी प्रकार 'इदन्नमम' उपन्यास में

होली के त्यौहार को रंगों की रंगत के साथ सम्पन्न हो, ऐसी ग्रामीण आँचलों की मान्यता है । दरअसल चीज-त्यौहारों से हम लौकिक संस्कृति के परिचयाक हो सकते है । 'इदन्नमम' उपन्यास में लेखिका ने लोग के रहन-सहन, तीज-त्यौहार, एवम् मान्यता के जरिए ग्रामांचलों की संस्कृति को अभिव्यक्त किया है । जिस प्रकार ब्रज भूमि पर किशन-कनैया, गोपियों के संग होली के त्यौहार पर रंगों की बौछार करते थे । ऐसा ही चित्रांकन लेखिका ने उक्त उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उजागर किया गया है । जैसे - होली के पर्व पर नारियों की प्रतिक्रियाए ँ ''एकाएक बहूने जलधरा में से पीला रंग उलीचना आरम्भ किया । सारी ननदें सराबोर कर दीं । सँभलन का अवसर ही न दिया । मीरा बोली, 'मन्दा तुम काहे ठोडी रह गई । भिगो नहीं पा रही 'नर्मदा को । लड़कों ने रंग डाला बहू को कोई कपोलों को सहला रहा है तो कोई उसे बाँहों में भीच रहा है । कोई ब्लाउस के नीचे उघड़ी कमर पर गुलाल मल रहा है । नर्मदा भाभी ने मकरन्द पर रंग उड़ेल दिया । एक पुरा से दुसरा पुरा, एक आदमी से दुसरा आदमी फाग खेलने में मस्त है ।''[६६]

उपर्युक्त दृश्यांकन में ग्रामीण अंचलों की सभ्यता एवम् संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है । पूर्णरूपेण निःस्वार्थता और भाईचारें की सामूहिक भावना, उनके चीज-त्यौहार की रंगत बनती है । उक्त सन्दर्भ में बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति को उजागर किया गया है । जो उनकी पारंपारिक पैत्रिक संपति है । उनको सँवारना और पीढी-दर-पीढी बरकरार रखना भी उनका कर्तव्य है ।

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में होली के त्यौहार का वर्णन मिलता है । होली भी उल्लास और प्रसन्नता का त्यौहार है । इस अवसर पर लोग एक-दूसरे पर अबीर-गुलाल डालकर और सभी मत भेदों को भूलाकर आपस में गले मिलते है । कबूतरा बस्ती में होली के त्यौहार का वर्णन करते हुए लेखिका लिखती हैं -" कबूतरा बस्ती में ढोल बजा ।... लोगों के मन थिरक उठे । कबूतरा बस्ती में गाँव से होड ले-लेकर ढोल-मजीरा बने । औरतें हँस रहीं थी । बच्चे नाच रहे थे । मर्दों और औरतों के गोल घेरे में गीत के बोल उठे -

'मोरी चन्दा चकोर, काजर लगा के आ गई भोर ही भोर
मोरी चन्दा चकोर, छतिया पै तोता, करिहा पै मोर
मेरी चन्दा चकोर,
चोली में निबुआ धँधरा घुमेर...
जगमगाती धूप में रंग-बिरंगे गुला उड़ने लगे ।"[६७]

इस प्रकार 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में कबूतरा जनजाति की वंशपरंपरागत विशेषताएँ गीतों के माध्यम से प्रस्तुत होती हे । उनके लोकगीत, धार्मिक प्रसंग के अनुसार प्रस्तुत होकर, उक्त कबूतरा जनजाति की सांस्कृतिक विरासत से परिचित करवाते है । तो कहीं लेखिका ने सगाई जैसे शुभ अवसर पर ग्रामीण परिवेश में, उनके लोक प्रचलित सगाई गीतों को औरतों के द्वारा पक्ष-प्रति पक्ष में गाने की मान्यता 'इदन्नमम' उपन्यास में दिखाई पड़ती है । प्रस्तुत उपन्यास में मकरन्द और मन्दाकिनी की सगाई को ध्यानांवित करके । लेखिका ने ग्रामांचलों के प्रचलित गीतों को उपन्यास की पृष्ठभूमि पर अंकित किया है । जैसे

– ''कुसुमाभाभी और मीराबुआ घर की औरतों के साथ मिलकर कन्या–पक्षी गीत गान लगीं :

''छोटी–सी बनरी के लम्बे – लम्बे केस,
सो खेलें बबुल दरबार भलें जू ।
कै तुम बेटी मेरी साँचे में ढ़ारी,
कै गढ़ी सकल सुनार भलें जू ।''

बऊ स्वयं गाने लगी :

''चार कहार जब खेयी रे पालकी
बिटिया ने रूदन मचाए मोरे लाल ।
झरप उठाके बेटी देखन लगीं
माय के कों कोऊ न दिखाय मोरे लाल ।''(६८)

प्रस्तुत सन्दर्भ में हमे बुन्देलखण्डीय संस्कृति की महक आती है । बुन्देलखण्ड के क्षेत्रिय परिवेश में ग्रामीण नारियाँ उक्त परंपरा को प्रसंगोपात प्रस्तुत करके, सजीवता प्रदान करती है । दरअसल गीतों के जरिए, उनकी मानसिकता, स्तरियता और परिवेश का साक्षात दृश्यांकन होता है । अतएव लेखिका को अँचल–विशेष के सांस्कृतिक वातावरण को रेखांकित करने तक बाँधा जाये तो, वह अन्याय ही होंगा । क्योंकि जिस तन्मया एवं तत्परता के साथ ग्रामीण सांस्कृतिक परिवेश को हु–ब–हु ढंग से चित्रित किया है । उसी प्रकार शहेरी सभ्यता और परिवेश को बड़े उत्सुकतापूर्ण ढंग से उपन्यास में निहीत किया गया है । पुष्पाजी विरचित 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में, उन्होंने शहेरी परिवेश

को सुक्ष्मतम और सत्यता के साथ अभिव्यक्त किया है । जैसे लेखिका ऋतु के जरिए शहेरीवृतांत को हाले-बयान करते हुए कहती है कि ''' होते हैं कोई-कोई लोग, ऐसी जगह रहने के लिए अभिशप्त होते हैं बेचारे, जहाँ खराब से खराब मौसम होता जा रहा हो, क्या करें कानों को तिपहिया स्कूटर, उधारी पर चलती कारों, ठेके की बसों और कर्कश होर्न बजाते ट्रकों का शोर सुनकर ही उन्हें नींद आती है । जैसे शहरी धरती माता की ये ही लोरियाँ हों । जागते हैं तो टेलीविजन के भीतर संस्कार चैनल में भक्ति, धारावहिकों में ढिशुम-ढिशुम और मारकाट की शक्ति दिमाग को रूई की तरह धून देती है, तब जाकर ताजगी आती है ।''(६९)

उपर्युक्त कथन में शहेरी संस्कृति को दृष्टिगत किया गया है । ऐसा नहीं कि पुष्पाजी ने सिर्फ ग्रामीण वातावरण को ही चित्रित किया है । किन्तु 'कही ईसुरी फाग' में शहेरी सभ्यता एवम् रहन-सहन को चित्रित करके उक्त मान्यता को नकारा गया है । शहेरी की भाग-दौड भरी संत्रास जिंदगी के विभिन्न पूर्जो को प्रस्तुत सन्दर्भ के जरिए सत्यार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

अतः संशोधन के उक्त मुद्दे पर दृष्टिपात करे तो लेखिका श्री पुष्पाजी ने प्रस्तुत नारी-चरित्रों में सांस्कृतिक चेतना परिवेश में ही भारतीय संस्कृति की अवधारणा को निर्धारित किया गया है । जिनके अन्तर्गत उनके रहन-सहन, खान-पान, लोककथा, लोकगीत एवम् विशेष प्रसंगोपात मान्यता में सांस्कृतिक धरोहर विध्यमान है । पुष्पाजी के उपन्यास साहित्य में अधिकत्तर 'चाक् इदन्नमम, अल्मा कबूतरी कही

ईसुरी फाग, बेतवा बहती रही, अगनपाखी और झूलानट आदि के नारी चरित्रों में सांस्कृतिक चेतना के गुण दिखाई पड़ते है । या अनायास ही सांस्कृति चेतना प्रकट हो जाती है । दरअसल पुष्पाजी के अधिकतर उपन्यासों की पृष्ठभूमि के रूप में बुन्देलखण्ड के क्षेत्रिय विस्तार को ध्यानांवित करके, उपन्यासों का सृजन किया है । फलस्वरूप उनकी सांस्कृतिक विरासत को प्रस्तुत का अनिवार्य बनता है ।

४.७अस्तित्व की सार्थकता एवं अस्मिता संघर्ष :

सदियों से नारी पुरूषों की तुलना में स्वयं को हीन और कमजोर मानती रही, अपनी रक्षा का भार पुरूषों को सौंपती रही, जीवनयापन के लिए हंमेशा पुरूषों पर निर्भर रही, लेकिन आज शिक्षा व आधुनिकता के प्रभावस्वरूप नारी अपनी संकोचित विचारशैली से मुक्त होने लगी है । धीरे–धीरे ही सही पर आज की नारी को अपनी गुलामी का अहसास होने लगा है । परिणामतया उनसे मुक्ति पाकर स्व अस्तित्व के लिए कार्यरत हुई है ।

आज की नारी अपना स्वतंत्र अस्तित्व, अपना वजूद तलाशने लगी है । वह महसूस करने लगे है कि उसका अपना कहने से क्या है ? वह अपने – आप में क्या है ? यहाँ तक कि उसका अपना नाम भी उसकी पहचान नहीं ? क्या वह आने वाले वर्षों में भी मिसेज सकसेना, मिसेज शर्मा, मिसेज जोशी या मिसेज गुप्ता के नाम से ही पहचानी जाती रहेगी ? क्या ये समाज उसे बेटी, पत्नी, माँ के रूप में क्रमशः पिता, पति और बेटे के अधिकार की वस्तु बनाए रखेगा ? क्या एक मानवी के रूप में

उसकी स्वतंत्र सत्ता कभी स्वीकार नहीं की जायेगी ? आज नारी के मन में बार-बार सवाल उठता है - ''माँ सिर्फ ममता ही है क्या ! क्या उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व के सूत्र अब भी पिता, पति और पुत्र के हाथ में है ।''(७०)

वर्षों से गुलाम रही नारी अब मुक्त होने के लिए छटपटा रही है । सदियों से दबाई गई अपनी आवाज को आज नारी बुलंद कर रही है । लगभग हर स्वतंत्र्योत्तर कालीन लेखिकाओंने अपने कथा-साहित्य में नारी की इस छटपटाहट को, उसकी मुक्ति-कामना को अपने-अपने तरीके से वाचा प्रदान की है । नारी मुक्ति के लिए अथाग प्रयत्नशील लेखिका श्री पुष्पाजी भी नारी-जगत में हो रहे इस परिवर्तन से अछूती नहीं रहीं । उन्होंने भी नारी के अस्तित्वपरक गुण को पारदर्शिता के साथ प्रदर्शित किया गया है ।

प्रस्तुत तथ्य को विश्लेषित करते हुए गॉल्सवर्दी ने कहा है कि - ''यदि कोई पुरूष विवाह संबंध की निष्ठा को भंग करता है तो वह अपने परिवार में कोई नया रक्त नहीं ला रहा होता ? जबकि पत्नी के अस्तित्व से परिवार में नया रक्त प्रविष्ट हो रहा है । इसलिए पत्नी का व्यभिचार अधिक पापपूर्ण माना जाता है ।''(७१)

वस्तुतः यह घन संपत्ति ही वह कारण है जिसके चलते 'चाक' उपन्यास की रेशम को अपने अजन्मे शिशु सहित प्राणों से हाथ धोना पड़ता है । आधुनिक युग में इसके विरूद्ध कानून है, फिर एक जवान विधवा परिवार के लिए आर्थिक संबल भी बन सकती है । इसलिए

कर्मवीर की मृत्यु के पश्चात् रेशम को किसी ने शकुन नहीं माना । रेशम भी यह बात समझाती है इसीलिए सारंग से कहती है – ''एकबार उस घर से उखड़ गई तो जमने नहीं देंगे वे दुष्ट ! तुरी भी समझ में आती होगी यह बात कि डोरिया को औरत की जरूरत है, और थानसिंह को जमीन और मजदूर दोनों की कितने फायदे की बात है मेरे बड़े जेठ थानसिंह मास्टर के लिए, कि करमवीर के हिस्से की जायदाद के संग–संग मैं भी डोरिया के खाते में चली जाऊँगी और जेठजी के लिए मजबूत कद–काठी का बेवकूफ भाई और उसकी जोरू के रूप में – दो गुलाम मिल जायेगे । संग–संग एक मुश्त खेती ।

नहीं तो कर क्यों नहीं लेता डोरिया का ब्याह ? जरूरत की मारी बहु तेरी मिल जायेंगी । अनाथालय से ले आये, पर यहाँ तो जर–जोरू दोनों पर आँख है ।''(७२)

संशोधित रूप में कहे तो नारी अस्मिताको गौरवंति करने का प्रयास ही नारी के अस्तित्व को नष्ट करने का षड्यंत्र है । जीवंत दृष्टांत के रूप में 'चाक' उपन्यास की रेशम है । जो नारी अस्मिता की लड़ाई लड़ते–लड़ते खुद के अस्तित्व को मीटाती है । तो कहीं रेशम की तरह सारंग भी नारी अस्मिता की यात्रा में सम्मलित होकर, अस्तित्व की अखंण्डिता पर विचरण करती है ।अपनी अहमियत और सामाजिक स्तर पर नारी अस्मिता की प्रतिष्ठा को कायम रखने के अथाग प्रयत्न करती है । पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था के सामने लड़कर भी नारी अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा करना अपना कर्तव्य समझती है । जैसे – ''आज मुझे जिंदगी का एक और सत्य मालूम हो गया रंजीत ! एक

पेच और खुल गया । मेरी इच्छा का मोल कितना है, यह मुझे बार–बार मत समझाओ । इससे तुम्हारे लिए बनाए हुए भरोसे की चुडियाँ टूटने लगती हैं । जिस घर की मिट्टी का रेशा – रेशा मेरे हाथों सजा सँवरा है, जिसके आँगन में मेरे पाँवों के निशान जीवित है; विश्वास नहीं होता रंजीत कि एक पल में ही वह मुझसे कैसे छिन गया ? मुझे कुम्हार के डोरे की तरह चाक से काट ले जाता है, न मालूम तुम्हारा अहंकार इतना पैना है कि मेरे औरत होने की लाचारी का गीलापन ।''(७३)

वस्तुतः आज की नारी अपनी अहमियत और अस्मिता की शिनाख्त करने में खरी उतरी है । 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग उक्त विचारों से प्रभावित होकर, अपने–आप में अपनी अहमियत और अस्तित्व की खोज में सक्रिय होती है । किन्तु पुरूषों के सामने आज नारी का मूल्य क्या है ? एक जटिल समस्या खड़ी हुई है ।प्रस्तुत समस्या के समाधान के लिए नारी की भटकन यायावर ही सिद्ध होती है ।

परिवर्तित युग में, नारी का सामाजिक, राजकीय, आर्थिक आदि क्षेत्रों परिवर्तन मुख्य उद्देश्य रहा है । सभी क्षेत्रों में आमुल बदलाव आया है । किन्तु नारी विषयक अस्तित्वपरक, अस्मिता और अहमियतपूर्ण भावनाओं में परिवर्तन नगण्य रहा है । आज के बुद्धिजीवी एवं प्रबुद्ध विचारकों के जहन में परिवर्तनयुक्त विचार आवश्यक प्रस्फूरित होते है । किन्तु सुधारात्मक अभिगम अपनाने में पीछे रहे है । 'त्रिया–हठ' उपन्यास की मीरा भी प्रबुद्ध विचारकों की रुग्गण विचारधारा से असंमत होते हुए, आज की नारी की अहमियत और अस्तित्व की ओर इंगित करती हुई कहती है कि – ''देवेश, तुम मुझे बहू मरने का

कानूनी विधान समझा रहा हैं । लड़की मरने का इसे विधायिका में कोई जिक्र नहीं । कुँआरी लड़की मरे (या मार दी जाए) तो कौन होगा सलाखों के पीछे ? भ्रूण–हत्या भले ही जुर्म हो, जवान लड़की का मरना तो पिता के कंधों से बोझ का हटना है । और तुम्हारी माँ मरी नहीं और न उस समय कोई उस मार सका, बस पिता और भाई की गर्दन उसके विवाह का वजन तोड़ने लगा ।"(७४)

इस प्रकार नारी की अस्मिता क्या है ? सामाजिक धरातल पर नारी की अहमियत क्या है ? उक्त प्रश्नों के जवाब में मीरा का चरित्रांकन सार्थक सिद्ध हुआ है । दरअसल वैचारिक युग में नारी की अहमियत आज भी पैरों तले ही है । जिनका उत्कर्ष हो, ऐसा भगीरथ कार्य अभी तक नहीं हुआ है । फलस्वरूप मीरा के चरित्र के माध्यम से लेखिका ने नारी अस्मिता की विड़म्बना को वाचा प्रदान की है । पुष्पाजी ने जहाँ नारी अस्मिता को लेकर खलबल मचायी है । वहीं नारी अहमियत को प्रतिष्ठापद प्राप्त हो इसीलिए जददोजहद् भी करती है । पुष्पाजी के उपन्यासों में नारीचरित्रों की अहमियत को लेकर एक बहश छेडी गई है । जैसे 'बेतवा बहती रही' उपन्यास की उर्वशी, जो परिवार और समाज के सामने नारी अहमियतता को लेकर, कहना चाहती है कि समाज और परिवार के लिए स्त्री की स्तरियता शून्यता ही है । उनके लिए विशेष महत्त्व और पद–प्रतिष्ठा नहीं है । जैसे–" आज फिर.... क्या हुआ घर ? उसका कोई घर नहीं । वह घर तो उसके पिता का है । घर उसके पति का था और घर है उसके भाई का । शायद हर औरत झूठे व्यामोह रच

लेती है । जहाँ भी बैठती है, चौड़े उजाड़ में भी बसने के सपने देखती है... मरीचिका के पीछे भागती रहती है ।''(७५)

तो कही नारी अपनी अहमियत के लिए परिवार के सामने प्रश्न करती हुई दिखाई पड़ती है । जैसे 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवनमोहिनी, अपनी सास के सामने प्रश्न रखकर जवाब-तलब करना चाहती है कि आखिर औरत क्या गुलाम है ? इनके लिए मुक्ति क्या अभिशाप है ? सामाजिक स्तर पर उनका कोई मान-सम्मान नहीं है ? आदि प्रश्नों के माध्यम से लेखिका ने नारी अहमियतता को चित्रित करने का प्रयास किया गया है । जैसे भुवन, चन्दर से कहती है कि - ''चन्दर, नफरत का तूफान गंदगी से नहीं उठा, गीत से उठा । गू को तो गू का कीड़ा ही प्यार कर सकता है । उस दिन मैं सास के सामने तन गई थी - मैं धोबी मैतर सबसे नीची, मेरी जात क्या और औकात क्या ? या अपने राजकुँवर का गू गोड़ना छिपा रहे हो ? कि धोबी नहीं लगाते !''(७६)

उपर्युक्त सन्दर्भ में भुवन के चरित्र सें नारी अस्मिता एवम् अस्तित्व की भावना निश्चित रूप में दृष्टिगत हो रही है । लेखिका ने भुवन जैसे नारी चरित्रों के माध्यम से नारी अस्मिता को आधारस्तंभ बनाकर नारी स्तरियता को भी मुखरित किया गया है । तो अन्य जगहों पर नारी अहमियत और अस्तित्व के मुद्दे को भी उभारने का प्रयास किया गया है । 'झूलानट' उपन्यास की शीलो, जिनके लिए करूपता एक अभिशाप है । पति के सहवास से वंचित होकर ओर भी दुखदायी जीवन व्यतित करती है । परिवार में शीलो की अहमियतता की गणना हो । इसीलिए अपनी सास से निवेदन करती है कि ''अपने चरणों से अलग न करना, अम्मा । इस

घर में पड़ी रहने दो, मैं खेत की घास... बुरी घड़ी में जनमी, तुम्हारी चाकरनी बनकर रहूँगी । बालू की दुलहन की टहल करूँगी । उनके बच्चे पालूँगी । रूखी-सूखी खाकर घड़ी काट लूँगी मायके में क्या सवाल-जवाब नहीं होंगे ? दिन-रात की सूली... ।''(७७)

इस तरह शीलो के चरित्र से नारी अस्मिता एवं अस्तित्व के भाव प्रस्तुत होते है । क्योंकि आज भी शीलो जैसी कई नारियाँ है । जो पुरूष प्रधान व्यवस्था से त्रस्त होकर, परिवार के सदस्यों के सामने अपनी अस्मिता एवं स्तरियता के लिए याचिका बनकर रहना अनिवार्य हो जाता है । अन्यथा परिवार और समाज से बहिस्कृत होना पड़ता है । पुष्पाजी ने नारी के अस्तित्व विषय में गहन अध्ययन किया है । इसीलिए तो, उन्होंने नारी अस्तित्व को आतंकित करनेवाले आततायियों से लड़ने की पहल है । इस संसार में काबेलियता के आधार पर मनुष्य का मूल्यांकन होता है । किन्तु नारी के सन्दभँ में उक्त प्रणाली पूर्णतया परिवतर्तित हो जाती है । क्योंकि नारी की काबेलियतता पुरूष अहम् का हनन अवश्य करती है । इसलिए पुरूष वर्ग जाने-अनजाने नारी के अस्तित्व और अहमियत का हनन करने पर उतारू होता है । जैसे 'विजन' उपन्यास की डॉ. नेहा, एक सिद्धहस्त आई सर्जन है । किन्तु उनकी काबेलियत ही उनके अस्तित्व के लिए भय स्थान पैदा करती है । जैसे कि - ''बहू, बाप बेटे को अप्रसंगिक न कर दे और एक दिन इस अस्पताल की सत्ता पर काबिज हो जाए ! ऐसी औरतें भयानक होती है ं । वह हमें ही डराने लगेगी... क्योंकि वह दोनों पुरूषों से अलग प्रजाति की है । मनुष्य है, मगर मनुष्य का मूल रूप नारी । अत: नारी का काम

पुरूषों के काम में दखल देना नहीं बताया गया । डॉ. होने के नाते वह परिवार के लिए पदक जैसी है । शी हज अ मैडल । देखने दिखाने भर की चीज ... नहीं, नहीं, चीज बना दी है डॉ. शरण ने ।''[७८]

प्रस्तुत सन्दर्भ में लेखिका ने अवश्य ही डॉ. नेहा के चरित्र की विशेषता को प्रस्तुत किया है । किन्तु अनायास ही प्रबुद्ध विचारकों के समक्ष नारी की काबेलियता उनके अस्तित्व और अस्मिता के लिए खतरनाक सिद्ध हो रहे प्रश्न को रखने का प्रयास किया गया है । तो कहीं नारी खुद अपने अस्तित्व में अपने आप का होना संशोधित कर रही है । 'त्रिया-हठ' उपन्यास की मीरा, जो एक आधुनिक विचारधारा से प्रभावित नारी है । परंतु उर्वशी और खुद की अहमियत के प्रश्न के खोजती नजर आती है । नारीचरित्र के अनेक रहस्य होते है । जिनकी शिनाखत करना आसान ही नहीं असमर्थ भी है । मीरा खुदे के अस्तित्व की शिनाखत करते हुए कहती है कि -

''मैं मीरा खुद को विस्मित-सी देखती हूँ कि जिंदा रह गई हूँ, क्यों और कैसे ? अपना भूत पीछा नहीं छोड़ता, बार-बार खींचता है अपने काल में । तुम्हारी माँ के इर्द-गिर्द नाचते रहे हैं, नीम अँधेरे में पिशाचिनियों की तरह । सच, इससे ज्यादा हमारी पहचान भी क्या थी ? बस गुमशुदा वजुदों के गड्डमड्ड लेख, जो पढ़े नहीं जाते, बेदखल, बेनामी दस्तावेज जिसके लिए न आश्वासन, न इनकार ।''[७९]

तो कहीं लेखिका ने ऐसी जनजाति की औरतो के अस्तित्व और अस्मिता को प्रस्तुत किया है । कबूतरा जनजाति औरते जो सभ्य

समाज की अवहेलना पर ही जीवन बसर करती हैं । उनके अस्तित्व की जीवंतता को लेकर लेखिका ने गहनता बरती है । क्योंकि कबूतरा जनजाति के पुरूष वर्ग की कोई सामाजिक स्तरियता नहीं हैं । तो फिर स्त्री वर्ग की क्या परिस्थिति हो सकती है । उक्त समस्या एवं विशेषता को लेखिका ने 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है । जैसे कदमबाई, राणा को कबूतरा जनजाति की अहमियता और स्तरियता के बारे में बताते हुए कहती है कि - ''पगले, गाय, भैंस, बसवटो की निशानी होती है । और हमारी जिंदगी खरपतवार, कज्जा लोग उखड़ने पर आमादा रहते है । देखता नहीं, पुलिस पीटने आ जाती है । ठेकेवाले बेबात ही हमे खदेडते हैं ।''[८०]

अत: प्रस्तुत मुद्दे को विश्लेषित करे तो, लेखिका ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी की अहमियत, अस्मिता पर जोर दिया है । हालाँकि नारी शोषण की परंपरा उच्चवर्ग और निम्न वर्ग में एक समान ही है । किन्तु सिर्फ शोषण के तौर तरीके बदलते है । पुष्पाजी के अधिकत्तर उपन्यासों में नारी की अहमियता पर विशेष ध्यान दिया गया है।

पुष्पाजी के नारीचरित्रों में विशेषत:'चाक' की रेशम, सारंग, इदन्नमम की अल्मा, त्रिया-हठ की मीरा, बेतवा बहती रही की उर्वशी, अल्मा कबूतरी की कबूतरियाँ, कही ईसुरी फाग की गंगिया बेडनी, झूलानट की शीलो, अगनपाखी की भुवन और विजन की डॉ. नेहा आदि नारी चरित्रों उक्त विशेषताएँ द्रष्टिगत होती है ।

४.८ प्रस्तुत नारी चरित्रों में आधुनिकता :

मैत्रेयी पुष्पा मूलतः आधुनिक और पाश्चात्य विचारधार से प्रभावित साहित्यकार है । अतः उनके साहित्य में आधुनिक विचार एवं प्राशचात्य विचारों का प्रभाव स्पष्टतः दृष्टिगत होता है । परिणामतया अनायास ही उनके पात्रों में उक्त विशेषताएँ अवश्य रहती है ।

आज हम बीसवीं सदी के अवसान के बाद इक्कीसवीं सदी के आरंभ-स्थल पर खड़े हैं तो महिलाओं की इक्कीसवीं सदी वाली संभावनाओं को जाँचा-परखा जाना चाहिए । चूँकि यह बात नारीवादियों से आगे बढ़कर पूरी बौद्धिक-वैश्विक चेतना से उभरी है; अतः इसके मूल में कहीं - न - कहीं यह भावना भी निहित है कि महिलाएँ केवल महिलाओं की दृष्टि से ही सक्षम - समृद्ध नहीं होगी, ब्लकि उनकी ताकात के बल पर इस सदी के विश्व-मानव का आधार तैयार होगा ।

पुष्पाजी के उपन्यासों में वर्णित नारी-चरित्रों में भी आधुनिक रहन-सहन, वैचारिकता आदि भाव विध्यमान है । चूँकि पुष्पाजी का लेखन क्षेत्र मूलतः ग्रामीण सभ्यता और सांस्कृति को उजागर करता है । किन्तु ग्रामीण नारि चरित्रों में भी आधुनिक बोध को निर्देशित करने का प्रयास किया है । वस्तुतः ग्रामीण नारियों का चरमोत्कर्ष होगा तभी तो इक्कीसवीं सदी भारतीय महिलाओं के नाम होंगी । जैसे मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण औरतों को आधुनिक युग के विकास पथ पर सम्मलित करने हेतु, शहेरी सभ्यता की भावना को ग्रामीण पात्रों में निहित किया गया है । 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास की मीरासिंह के विचारों में आधुनिकता

स्पष्ट मुखरित हुई है । जो ग्रामीण सभ्यता और संस्कृति में रहते हुए भी शहरी एवम् आधुनिक विचारधारा को अपनाती है ।

जैसे – तुम घर में रहने लायक नहीं पति इसे ज्यादा क्या कुछ कह सकते थे ? हाँ, सच वह घूँघट छोड़कर सलवार, कमीज पहनती, उन्हें निर्लज्ज लगती थी । मर्यादित जीवन जीना सीखनेवाली औरत व्रत उपवास, साडी-जेवर के दायरे से निकल आई । गाँव की स्त्रियों ने भी थूका । और वह संस्था को परिश्रम से चमकती रही । औरतों का दर्द ही सहायक था । अब वह समय के साथ-साथ बढ़ती हुई एम-८०, हीरोहोंडा, ४ गेयर तक आ गई, सीखने के असीमित क्षेत्र में कदम दर कदम चलती रही ।''(८१)

उपर्युक्त सन्दर्भ के अन्तर्गत मीरासिंह के चरित्र में आधुनिक भाव-बोध स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते है । चूँकि ग्रामीण परिवेश में रहकर भी, मीरासिंह नारी के विकासोत्कर्ष की होड में सम्मलित होती है । जिनके चलते अन्य नारी चरित्रों का विकास संभव होता है । तो कहीं लेखिका ने ऐसे नारी चरित्रों का निर्माण किया है । जो पूर्णतया आधुनिक ही है । उनका रहन-सहन, पहनावा और उनकी जीवन प्रणाली आदि क्रिया-कलापों में आधुनिकता के दर्शन होते है । जैसे 'त्रिया-हठ' उपन्यास की स्मिता, जो पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित नारी है । उनकी नजर में स्त्री-पुरूष एक समान और एक-दुसरे के पुरक है । उपन्यास में वह नर -नारी के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध को सहजता से स्थापित करके, एकरारनामा प्रस्तुत करती है । जैसे देवेश से कहती है कि – ''परिचय ? कैसा परिचय ? रिश्ता, क्या रिश्ता ? तुम लड़कों में यही

बात बुरी है, डरते बहुत हो, मगर करना सब कुछ चाहते है । मेरे दादा गजराजसिंह और मेरी दादी तक जानते है कि एक देवेश है, जो मेरा दोस्त है । वे समझ गए है कि जो लड़कियाँ पढ़ती-लिखती हैं, दोस्ती भी करती हैं । लड़कियों से भी, लड़कों से भी । यह बात और किसी ने नहीं, उन्हें मैंने समझाई है, क्योंकि उन्हें पता है, उनकी मीता चोरी-छिपे कोई काम नहीं करती, न करेगी ।''(८२)

प्रस्तुत सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि स्मिता एक आधुनिक नारी है । उसका व्यवहार भी आधुनिक भाव बोध एवं पाश्चात्य विचारों से प्रभावित है । अतः लेखिका ने उपन्यास में स्मिता को आधुनिक नारी के रूप में चित्रित किया है । अन्य जगहों पर नारी पूर्णतया आधुनिकता को आत्मसात् करती दिखाई पड़ती है । 'विजन' उपन्यास की सहनायिका डॉ. आभा, जो संपूर्ण रूप से आधुनिक विचारधारा से प्रभावित नारी है । उनकी दृष्टि से स्त्री-पुरूष एक समान और एक-दुसरे के पुरक है । किन्तु अगर पुरूष स्त्री पर अधिपत्य स्थापित करने की चेष्टा करे तो उससे मुक्ति ही श्रेयस्कर है । आभा, अपने पति से कहती है कि -'' मुकुल, आई वांट अ डायवोर्स' आई वांट अ डायवोर्स । आई वांट अ डायवोर्स... मैं तलाक चाहती हूँ ।

तुम कहते हो, हमारे मुल्क में पति अपनी पत्नी को पीट देता है तो नया क्या है ? मानती हूँ, तमाम स्त्रियाँ मार खाते-खाते जीवन यापन करती रहती हैं, मगर मुकुल न तो तुम उन पतियों जैसे जाहिल थे, न मैं ही उन पत्नियों जैसी लाचार... मैं तुम्हारे उस खूँखार पौरूष पुरूषार्थ को नहीं झेल पाई । सोरी डॉ. मुकुल । वेरी सोरी ।''(८३)

सुप्रसिद्ध लेखिका तसलीमा नसरीन ने भी कहा है कि – ''स्त्री शिक्षित हो, आत्मनिर्भर हो, तभी वह अपने अधिकार के प्रति सचेत होगी । वरना उसे क्या पाना है और क्या नहीं, यह वह स्वयं ही नहीं जान पायेगी – जैस की अधिकत्तर स्त्रियाँ नहीं जानती ।''(८४)

तसलीमा नसरीन के कथन की पुष्टि 'विजन' उपन्यास की डॉ.आशा के चरित्र से होती है । चूँकि डॉ. आभा शिक्षित एवं आत्मनिर्भर नारी है । अत: अपने अधिकारों के प्रति पूर्णरूपेण सचेत है । फलस्वरूप पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होकर, अपने पति से डायवोर्स की कामना करती दृष्टिगत होती है ।

तो कहीं ग्रामीण परिवेश में पली–बड़ी हुई नारियों की सोच आधुनिक धरातल पर खड़ी है । क्योंकि उनके जहन में पाश्चात्य रहन–सहन असरकर्ता रहते है । इसीलिए उक्त नारी चरित्र तो पूर्णतया आधुनिक बनते है । उनकी सोच–एवं विचार का प्रचार–प्रसार हो, इसीलिए वे प्रयत्नशील भी रहती हैं । जैसे 'झूलानट' उपन्यास की शीलो, ग्रामीण होते हुए भी बालू को आधुनिक बनने की नसियत देते हुए कहती है कि – ''बूरे की बात नहीं । मैं तो यह कहती हूँ कि हल हाँकते हो, इसका मतलब यह तो नहीं कि बूढ़े हो गए । धोती–कुर्ता ही पहनोगे । रघु के पिताजी को देख लो, नाती–नतूलों के हो गए, शिब्बु की बेलबोटम पैंट कसे रहते हैं । चिरगाँव से कमीज–पैंट काहे नहीं सिलवा लाते । और देखो मूँड पर उस्तरा फिरवाने की जरूरत नहीं । हमें नहीं सुहाती घुटी मुड़ी ।''(८५)

प्रस्तुत सन्दर्भ से स्पष्ट होता कि शीलो आधुनिक विचारधारा के साथ कदम-से-कदम मिलकर उनके व्यक्तित्व का विकास कर सकती हैं ।

इस तरह कहना हो तो लेखिका का सृजन क्षेत्र पूर्णरूप में ग्रामीण अँचल ही है । किन्तु ग्रामीण चरित्रों में भी लेखिका ने आधुनिक विचारों को उजागर किया है । फलस्वरूप ग्रामीण वातावरण में पले लोगों के चरित्रों में आधुनिक युग की वैचारिकता विकसित होती है ।

४.९ जूझारूपन एवं अड़िगता :

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने नारी चरित्रों में जूझारूपन और अड़िगता के विलक्षणों को ठुस-ठुसकर भरे हैं । वैसे पुष्पाजी के नारी चरित्रों की पहचान ही उनका जूझारूपन और उनकी अड़िगता है । इन विलक्षण विशेषताओ के जरिए, उक्त नारी चरित्र समाज की परंपराओं एव समाज के आततायियों से लड़ने के लिए संकल्प-सिद्ध होती है ।

'इदन्नमम' उपन्यास में 'बऊ', एक अडिग नारी के रूप में उभरती है । अपनी पुत्रवधू, बऊ के सामने मुकदमा दर्ज करती हैं । तब वह बिना झिझक और निर्भयता के साथ, किसी भी विकट परिस्थिति में अपने पथ पर प्रस्थान करती है । जैसे – " अचानक बेचारापन त्यागकर बऊ अक्खड हो उठी । जोर-जोर से कहने लगी, चीफ तुम फिकिर जिन करो । लड़ने दो उस कंजरी को । और ऐन लड़ा लेवे अपने यारों को । जब तक इस काया में पिरान बाकी हैं, लडेंगे हम भी । पुरी जिन्दगानी हमने लड़ाई लड़ी है । हँसी- खेल नहीं है जिमींदारिन बने रहना । वैसा ही रौब-रूतबा रखना । आनबान से रहे हैं ।"(८६)

उपर्युक्त सन्दर्भ में बऊ के चरित्र में अड़िगता स्पष्ट दृष्टिगत होती है । उसी प्रकार बऊ के चरित्र में जूझारूपन के भाव भी निहित है । क्योंकि बऊ विधवा होते हुए भी बेटे का पालन पोषण एव जमींदारी को कायम रखने का अथाग प्रयत्न करती है । दुसरी ओर विधवा होने से समाज के आततायियों से लड़कर, घर इज्जत आबरू को बचने के लिए प्रयत्नशील भी रहती है । जैसे-" तुम बच्चा हो हमारे लेखें, तुम्हें का-का बता देवें ? कैसे- कैसे कपटी-अन्यायियों को झेला है हमने । कैसे कैसों से जड्‌ड ली है । इतेक जिन्दगानी ऐसें ही नहीं काढ़ी । हँसी-खेल नहीं है विधवा जनी का इज्जित-आबरू से रहना, अपनी देहरी की नाक को सूधी रखना । ऐन भोगना भोगी हैं, पर मजाल है कि कोऊ उँगरिया उठा जाए ।[८७]

प्रस्तुत सन्दर्भ से बऊ के चरित्र में जूझारूपन एवं अडिगता आदि विशेषताएँ दृष्टव्य होती है । पुष्पाजी ने कहीं ऐसे नारी चरित्रों का गढ़न किया है । जिनमें बऊ के चरित्र की तरह अड़िगता और द्दढ़ संकल्प भावना भी है । उदाहरण के तौर पर 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास की भूरी के चरित्र में दृढ संकल्प के गुण विध्यमान है पति की मृत्यु के पश्चात्, वह हारकर बैठती नहीं है । वरन् उतनी तीव्रता से लड़ने के लिए खड़ी होती दिखाई पड़ती है । जैसे - "भूरी अंधी की तरह चार महिने के रामसिंह को गोद लेकर वीरसिंह के ध्यान में खड़ी थी । खड़ी - खड़ी कौल भर रही थी - पतिविरता लुगाई अपने आदमी के संग आती सती होती है । मैं अपने मर्द की ब्याहता खुद को तब मानूँगी, जब रामसिंह

को पढ़ा-लिखाकर इसी कचहरी के दरवाजे खड़ा कर दूँगी । भले इस सफर में मुझे दस मर्दों के नीचे से गुजरना पड़े ।''(८८)

इस प्रकार भूरी एक अड़ग नारी चरित्र है । जो पति के मृत्यु के पश्चात् हारकर भागती नहीं किन्तु समस्याओं से डटकर जूझना अपना कर्तव्य समझती है । और अपने संकल्पको पूर्ण करने के लिए, शारीरिक बलिदान का जज्बा भी रखती है । अतः प्रस्तुत विश्लेषित मुद्दे में नारी चरित्रों में विध्यमान, अड़िगता एवं जूझारूपन को प्रदर्शित किया गया है । जो नारीचरित्रों को गरिमा प्रदान करता है । एक प्रकार से वीरोचित ? गुण में सम्मलित करते है ।

४.१० नारी चरित्रों में मनोवैज्ञानिकता :

हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रेमचन्द के आगमन के साथ ही मनोविज्ञान का भी प्रवेश हुआ । मनोविज्ञान के माध्यम से व्यक्ति का अंतर्मन अभिव्यक्त होता है । मनुष्य के व्यक्तित्व में अन्तरवृतियों का प्रमुख स्थान है । समस्त बाह्य व्यापार इन्हीं अन्तर प्रवृतियों की बाह्याभिव्यक्ति है । मनोविश्लेषण ने मानव अन्तर्जगत में चेतना मन के साथ अचेतन मन की स्थिति को भी रूप दिया ।

हिन्दी उपन्यासकारों ने मनोविज्ञान के इन्हीं सिद्धान्तों को कथा साहित्य में प्रस्तुत करने के लिए नारीजीवन को भी नवीनरूप में लिया । नारी के परम्परागत स्वरूप को त्यागकर, नारी की मानसिक जटिलताओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, परीक्षण एवं मूल्यांकन किया गया है । इस मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की नयी व्याख्याएँ

उभरकर आईं । मनोविज्ञानने आदर्श के स्थान पर यथार्थ को स्थापित किया है । व्यक्ति को उसकी संपूर्ण विकृतियों, विरांगतियों एवं मनोविकारों के साथ कथा साहित्य में प्रस्तुत किया जाने लगा ।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों के नारी पात्र की इन्हीं विशेषताओं के साथ चित्रित किये गये हैं । किन्तु ये नारी पात्र फ्रायडियन सिद्धान्तों से अधिक प्रभावित नहीं दिखाई देते । इनके सभी नारी-पात्रों में नारी सुलभ मानसिकता दृष्टिगत होती है ।

पुष्पाजी कृत 'चाक' उपन्यास चेतना प्रवाह शैली में रचित उपन्यासों का एक उत्कृष्ट उदाहरण है । उपन्यास के केन्द्रिय पात्र पर उनकी कुष्ठित मन:सिथतियों को लेकर चलनेवाला अंतर्द्वन्द्व सारे कथानक पर छाया रहता है । जैसे - सारंग अपने परिवार एवम् सफल गृहस्थी को बचाने के लिए मानसिक तौर से परेशान होती है । जैसे कि - ''उनकी ही आवाजें... सारंग का संकल्प । तुम दामन बचा रहे हो श्रीधर - रंजीत के क्रोध से डर रहे हो । सारंग की गृहस्थी के उज़ड जाने का अपयश दहला रहा है तुमको । तुम चुपचाप हो, लेकिन वह अपने जीवन की धार मोड़ने में लगी है । ऐसा न होता तो चंदन को तुम्हारे हाथ सौंपना चाहती ? तुम पर विश्वास है, उसके बच्चे को सही आकार दोगे ।[८९]

उपन्यास में अन्य जगह पर मानसिक रूप से त्रस्त होकर, सारंग अपने अस्तित्व और अपनी विचार शैली को लेकर अंतद्वंन्द्व के बीच फस जाती है । जैसे - ''तुम क्या चीज हो श्रीधर ? अंगारा ? चिनगारी ? या कोई धमाका ? कितनी जिंदगियों में आग लगाओगे ?''[९०]

संदर्भोनुरूप सारंग का व्यक्तित्व स्वयं को श्रेष्ठ और सभ्य बताने के लिए जिस जीवन शैली का निर्माण करता है; उसमें सामाजिक और वैयक्तिक आदर्शों का सामंजस्य नहीं हो पाता । जिसक फलस्वरूप सारंग अंतर्द्वन्द्वों की जाल में फँसती है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने जहाँ नारीचेतना को प्राधान्य दिया है । वहीं नारी की मन:स्थिति के विभिन्न रूपों को उद्‌भाषित किया है । जैसे 'झूलानट' उपन्यास की 'अम्मा' (बालकिशन की माँ), जो विधवा नारी है । किन्तु परिवार एवम् सामाजिक सभ्यता और इज्जत को लेकर मानसिक तौर पर अस्त-व्यस्त रहती है । क्योंकि नारी के लिए घर की आबरू, अपने अस्तित्व से भी ज्यादा महत्त्व रखती है ।अत: अम्मा, शीलो के परिवार और घर की इज्जत, आबरू के लिए अंतर्द्वन्द्वों से हंमेशा लड़ती नजर आती है । जैसे - ''जोर से यह भी बोलीं कि लला, आबरू के घंटे तो हम जनियों के गले में ही लटक रहे हैं, जिन्हें उतारते बने, न होते । वह जानता है, अम्मा लाचार हैं । सुमेर भइया की करनी का घड़ा अपने गले में बाँधकर डूबी जा रही है । विधवा रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण, बिना मर्द की इज्जतदार जिंदगी ! लुट गईं वे ।''(९१)

वस्तुत: 'झूलानट' उपन्यास की अम्मा जो पुख्तैनी मर्यादा एवम् आबरू के लिए, अपने आप से लड़ती है । जिनके कारण वह अपने आंतरिक जगत् में ही रह जाती है । तो 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में लेखिका ने 'उर्वशी' को प्रस्तुत किया है । जो भूतकाल और वर्तमान काल की परिस्थितियों के बीच सामंजस्य नही बिठा पाती । जिसकी वजह से मनोमंथन की शिकार होती है । क्योंकि भूतकाल इसके लिए

सर्वदमन है और वर्तमानकाल बरजोरसिंह है । दोनों के बीच में वह फँसी हुई है । जैसे उर्वशी की मन:स्थिति "फिर... ? आज क्या हुआ ? जिन सर्वदमन के साथ मिलकर महामाई के मन्दिर में हाथों के चिह्न बनाये थे वे मिट गये क्या ? जिन शिवजी को उनके हाथ में हाथ देकर पूजा थे, वे ही शंकर भगवान भूल गये क्या ? सास के थान पर बरार बऊ के कहने से पूरे वचन देकर आयी थी कि जिठानी से मिलकर रहेगी । देवताओं को दिलासा दी थी कि मर्यादा के अनुरूप आचरण करेगी .. इस गाँव के देवताओंने सब बिसरा दिया ... ?"[९२]

प्रस्तुत संदर्भ मूलत: उर्वशी के अन्तर्द्वन्द्वों को प्रस्तुत करता है । क्योंकि उर्वशी न तो भूतकाल को मिटा पाती है और न ही साम्प्रत परिस्थिति के अनुसार अपने आप ढाल सकती है । इसीलिए वह पूर्णतया मानसिक रूप से त्रस्त रहती है । दरअसल वह दारूण परिस्थितियों का सामना करने लिए सक्षम नहीं हो पाती है । फलस्वरूप उर्वशी अन्तर्द्वन्द्वों से लड़ती हुई दृष्टिगत होती है । उर्वशी की तरह 'अल्मा कबूतरी' की कदमबाई भी द्वन्द्वों के बीच में फँसी है । कदमबाई की मन:स्थिति भी वर्तमान और भूतकाल के बीच फँसी है । जो एक ओर अपने पति को मन से निकाल नहीं पाती । तो दूसरी ओर मंसाराम को अपनाकर उसके साथ समाज के सामने खड़ा रहना मुश्किल लगता है । परिस्थितियों के मानसिक द्वन्द्व को लेखिका लिखती है । जैसे कदमबाई का बयान है कि – " मैं तुम्हें भूल जाती तो अच्छा था माते । पर भूलती कैसे, वह रात तो जी का जंजाल बन गई । उस रात ने न जंगलिया को भूलने दिया न तुम्हें । उस बैरी को याद कर–करके तुम्हें याद

करती रही । इधर छाती सुलगती, तुम्हारी हँसी उठती । राणा गरम में टँगा गया । माँ न होती तो तुम्हें काट डालती माते । राणा को ही खत्म कर डालती । ... पर उसे खत्म करने से क्या मलाल घट जाता ? सो मेरा जीना–मरना तुम्हारे संग बँध गया । तब जीन नहीं चाहती थी, जीने देना नहीं चाहती । अब मरना नहीं चाहती और न तुम्हारा मरण.... राणा कैसी बेड़ी बन गया.... अटूट बेड़ी ।''(९३)

इस प्रकार लेखिका ने कदमबाई की मन:स्थिति चित्रित की है । जो अपने अन्तद्वन्द्वों के बीच फँसकर, वर्तमान एवम् भूतकाल दृश्यों में अटकी हुई है । वस्तुत: कदमबाई साम्प्रत स्थिति में अपने – आप को ढालने में असमर्थ रहती है । परिणामत: वह मानसिह द्वन्द्वों के बीच छटपटाती है । पुष्पाजी ने 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में 'ऋतु' को भी इसी स्थिति के अन्तर्गत निरूपित किया है । उपन्यास में ऋतु एक अन्वेषक नारी है । जो ईसुरी और रज्जों की प्रणयकथा पर संशोधन कर रही है । जो समय के विभिन्न परिवर्तित रूपों के साथ कदम–से–कदम मिलाने मे नाकायाब होती है । निष्कर्षत: वह अपनी असफलता को अपने अस्तित्व के साथ जोड़कर मानसिक रूप से त्रस्त होती है । जैसे कि – सोचती हूँ – अगर इनके पंख थक जाएँ तो ? अगर इन पर कोई दूसरा ताकतवर पंछी हमला कर दे तो ? अगर ये ऊँचाई से गिरें तो – सवालों के जवाब में अपना ही वजूद घिसट रहा था, जो घायल होकर दम तोड़ने की हद से गुजरने लगता । मैं क्या खो बैठी हूँ ऐसा, जो मिलना अब मुमकिन नहीं लग रहा ?''(९४)

तो दूसरी ओर लेखिका ने ऋतु को उलझनों के बीच में फँसी हुई चित्रित किया है । क्योंकि ऋतु के लिए समस्या है कि किसे अपनाया जाए और किसे छोड़ दिया जाए । सामान्यतः ऋतु के लिए माधव सर्वस्व है, किन्तु माधव को अपनाकर आगे की जिंदगी शून्यावकाश हो जाएँगी और बिना माधव के अधूरापन सताएँगा । इन परिस्थिति का वर्णन लेखिका ने इस प्रकार किया है कि - ''मगर खुद उलझ रही हूँ । न जाने किस जोखिम से डर रही हूँ । या दुविधा के हवाले हूँ कि निर्णय नहीं हो पा रही, किस दुनिया को छोडू, किसको अपनाऊँ ? बहरहाल मेरी जिन्दगी रोजमर्रा की सामान्य जिन्दगी से कटती चली जा रही है । हो सकता है मैं आम लड़की जैसे जीवन के लिए तरसती रह जाऊँ । अपने प्रेम के साथ रिवाजों का तारतम्य न बिठा पाने के कारण कहीं रजऊ की तरह की जीवन सांसत में न पड़ता चला जाए । मैं अपनी माँ की सम्पूर्ण क्रांति का नतीजा देखती हूँ । या माधव की जिन्दगी उजड़ती हुई देखकर डरती हूँ ?[९५]

प्रस्तुत सन्दर्भ ऋतु की उलझनों को प्रस्तुत करता है । जहाँ ऋतु के लिए माधव को अपनाकर आगे चलना, काँटा के पथ चलना साबित होता है । या छोड देना नामुमकिन - सा लगता है । लेखिका ने इस प्रसंग को बड़े सजीवता एवं रोचकता के साथ पाठकगण सामने प्रस्तुत किया है । जिसमें ऋतु के अंतद्वन्द्वों के बीज अंकुरित होते है । जिसके अन्तर्गत ऋतु, रजऊ की तरह प्रेम और रिवाजों के बीच में तादात्म्य बिठाने में असफल होती है । परिणामतः ऋतु अन्तर्द्वन्द्वों में फँसी हुई दृष्टिगत होती है ।

मानव को चेतन और अचेतन के असमंजस्य ने इतना रहस्यमय असाध्य और दुर्बोध बना दिया है कि मनुष्य की इच्छाशक्ति बाह्याभिव्यक्ति न पाकर अंतर्मुखी हो जाती है और अचेतन में अक्षुण्ण रहकर कुंठाओ को जन्म देती है । व्यक्ति की बाह्याभिव्यक्ति को योग्य रास्ता या मंजिल न मिलने के कारण, व्यक्ति में कुण्ठा का जन्म अनायास ही हो जाता है ।

'इदन्नमम' की मन्दा भी उपर्युक्त कुण्ठा का शिकार होती है । वह घर से दूर होकर, अन्य जगहों पर अपने आपको – साम्प्रत परिवेश और परिस्थितियों के अनुसार ढालने में असमर्थ होती है । फलस्वरूप उनमें कुण्ठा का जन्म होता है । जैसे वह सोचती है कि – ''मन उदास हो गया । बैठे–बैठे हो गई । सोचते – सोचते हलकान ...सच ही तो कह रहे हैं मकरन्द । एकदम सच । बुरा क्यों लगा उसे ? किसी बालक पर है उसके जैसा पहरा ? पड़े है किसी के पीछे सिपाही ? किसी की अम्मा इस तरह गई हैं अपने बच्चे को छोड़कर ? वह खेलने– कूदनेवाली बिरादरी से इसी कारण काटकर फेंक दी गई है । इसी कारण अछूत और बेमेल है वह ।''[९६] 'मन्दा' के लिए बाह्याभिव्यक्ति असफल रहती है । परिणामतया वह मानसिक रूप से हताश एवम् निराश हो जाती है । जिसकी बदौलत वह मानसिक रूप से कुण्ठा का शिकार होती है । लेकिन अंततः वह कुण्ठा का आवरण तोड़कर, अपने–आपको समष्टि में विलीन करती है ।

फ्रायड ने दो अन्य मनोग्रंथियों को महत्त्व दिया है । स्वपीड़न या आत्मपीड़न तथा परपीड़न । स्वपीड़न या आत्मपीड़न में व्यक्ति अपने

आप को पीड़ित करने की ओर प्रवृत रहता है तथा परपीड़न में और प्रवृत रहता है । फ्रायड ने निर्दयता और विनाशकता के सभी अन्य रूपों का समावेश परपीड़त - प्रियता में किया हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र स्वपीड़न या आत्मपीड़न और परपीड़न दोनों रूपों से ग्रस्त है । 'झूलानट' उपन्यास की 'अम्मा' (बालकिशन की माँ), जो परपीड़ित नारी है । जो अपनी पुत्रवधू एवम् अन्य लोगों के द्वारा मानसिक तौर से हारकर त्रस्त हो जाती है । जैसे कि -''सुमेर, तू यह सोच कि मैंने अपना अखेल नादान बेटा काए को बाँधा था इस हथिनी के पाँवों में ? बस, इसी कारन कि तेरे हिस्सा की धरती न चर जाए । पर बेटा, इस हथिनी की देह में चालाक लुखरिया का मगज है, यह पता नहीं था । मैने तो दुखिया समझकर इस पर भरोसा कर लिया । तब तो दुसमनि रो-रोकर बैन कर रही थी - अम्माजी सात भँवरें, आँगिन साच्छी और बरातियों के आगे वचन भरकर संगी मुझे त्याग गया, तो अछिया-बछिया का क्या विश्वास करूँ ?

''हाय, मैं सिर्रिन नहीं जानती थी कि साँपिन को दूध पिलाकर बिस भर रही हूँ बेटों की जिंदगानी में ... एक दिन यही डँस लेगी ।''(१७)

पुष्पाजी के नारीपात्र आत्मपीड़न से त्रस्त तो है ही । किन्तु परपीड़न से त्रस्त होते नारी चरित्रों का गठन भी किया है । जैसे 'बेतवा बहती रही', उपन्यास की उर्वशी, जो समाज एवम् सगे भाई अजित के अत्याचारों की शिकार होती है । क्योंकि वे बरजोरसिंह के पास से थोडे पैसे और जमीन के बदले उर्वशी को बेचने को तैयार होता है । सारी

गडमथी के कारण उर्वशी पीड़ित नारी के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । उर्वशी अपने आप को शून्यावकाश में देखती है । जैसे – ''उर्वशी गूँगी – बहरी बनी तट पर खड़ी रही । लाल थाली-सा सूरज नदी के पानी पर तैरने लगा । वह आगे बढ़ गयी सती के चौरे के पास ऊँची चट्टान पर खड़ी टकटकी बाँधे पानी को देखती रही – ''ओ बेतवा मइया, अब किसी पर आस-विश्वास नहीं, अपना माँ – जाया भाई ही दुसमन बन बैठा तो अब कहाँ ठौर ... जहाँ कहीं गयी दो घड़ी चैन से न कट सकीं । प्रानों के लिए पल-पल भारी .... समेट माँ मेरे पाप-पुन्न.... ।''(९८)

प्रस्तुत सन्दर्भों में क्रमशः झूलानट में अम्मा, पुत्रवधू और समाज की तानाशाही के कारण आत्मपीड़न या स्वपीड़न से त्रस्त होती दिखाई देती है । बल्कि 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी परपीड़न से ग्रस्त नारी पात्र है । क्योंकि भाई के जरिए बहन का सौदा, भाभी के माध्यम से मानसिक रूप में प्रताड़ित करना आदि ।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य में नारी पात्रों के निर्माण के लिए एक विशेष बात पर समीक्षकों का ध्यान केन्द्रित किया है । जहाँ अंचल विशेष को केन्द्र में रखकर उपन्यास का सजृन करती है । वहीं सिर्फ अंचल को बरकरार या कायम रखने के अथाग प्रयत्न भी करती है । किन्तु मनोवैज्ञानिकता को पात्र के साथ वर्णित करके उपन्यास को रोचक एवम् सजीवता प्रदान करती है । जैसे 'त्रिया-हठ' उपन्यास में लेखिका ने मीरा की मनःस्थिति के आधार पर उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया है । क्योंकि 'बेतवा बहती रही' की मीरा और 'त्रिया-हठ'

की मीरा, दोनों उपन्यास की मीरा के चरित्र समयानुसार बदलाव, लेखिका की पैनी लेखन शैली की उपज है । जैसे – फैलसबेक कथा को नये शिरे 'त्रिया–हठ' में सँवार के प्रस्तुत किया गया है'' लेखिका के शब्दों में – ''बरसों की बनाई मूरत टूटकर जिस सूरत में सामने आई हैं, कलेजा छिन्न–भिन्न हो गया । तब चेहरे से निगाह हटाने का मन नहीं करता था, आज निगाह जुडती नहीं । तब क्या लड़कियों का कुँआरापन और लड़के का मुक्त भाव एक–दूसरे को खींच रहे थे ? क्या अपना अकेलापन दूसरे के अकेलेपन को पुकार रहा था ? क्या नई – नई तरूणाई में उठती – बनती उमंगे उल्लास और उत्साह से ऐसी लबरेज थीं कि बंधन तोड़ना ही उनका मकसद था ?''[९९]

उपर्युक्त सन्दर्भ में लेखिका ने मीरा के मानसिक द्वंद्व को प्रस्तुत किया है । दरअसल वर्तमान एवम् भूतकाल की प्रासंगिक घटनाओं को आधार बनाकर, लेखिकाने मीरा की मन:स्थिति को निर्देशित किया है । मूलत: की तरूणअवस्था और युवावस्था, दोनों समय में मीरा की मानसिक स्थिति क्या थी ? उक्त मुद्दे को सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत किया गया है ।

उपसंहार के रूप में कहना हो तो पुष्पाजी ने नारी चरित्रों का परिवेश के आधार पर उनकी मानसिक गतिविधियों का अपने उपन्यासों में निर्देश किया हैं । उन्होंने उच्चवर्गीय एवम् निम्नवर्गीय दोनों वर्गों की नारियों के मनोभावों का गठन अति सूक्ष्मता एवम् सजीवता के साथ किया गया है । विशेष रूप में 'बेतवा बहती रही' और 'त्रिया–हठ' दोनों उपन्यास में वर्णित नारी चरित्र–मीरा और उर्वशी के मनोभाव

पाठकगण को सोचने पर मजबूर करते हैं । क्योंकि दोनों उपन्यासों के बीच बारह वर्ष के समय का फासला है ।

निष्कर्ष :

अत: निष्कर्षत: कह सकते है कि प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत मैनें पुष्पाजी के उपन्यासों में प्रस्तुत नारी पात्रों की विशेषताओं को विश्लेषित किया हैं । विशेषरूप से उनकी आंतरिक एवं बाह्‌य विशेषताओं से नारी चरित्रों की अलग पहचान बनती है । जैसे नारी चरित्रों का बाह्य सौन्दर्य उनकी बाह्य विशेषताओं से संलग्न रखता है । उसी प्रकार वात्सल्य एवं ममत्व, विध्वंशता एव साहसिकता, बहुजन हिताय और सहानुभूति, विद्रोहभावना, सांस्कृतिक चेतना, अस्तित्व की सार्थकता ए वं अस्मिता संघर्ष; आधुनिकता, जूझारूपन एव अडिगता और मनोवैज्ञानिकता आदि स्वभावगत विशेषताओं की उक्त अध्याय के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है ।

मैत्रेयी पुष्पाने न केवल प्रस्तुत नारी चरित्रों की विशेषताओं को प्रदर्शित किया है किन्तु ये विशेषताएँ सहि अर्थो में आँचल-विशेष से साक्षात्कार कराती दृष्टव्य होती है । दरअसल पुष्पाजी के नारी चरित्रो उनकी स्वभागत विशेषताओं के साथ-साथ आँचल - विशेष को भी प्रस्तुत करते है । मैत्रेयी पुष्पा के नारी चरित्रों में अधिकत्तर वात्सल्यता साहसिकता, बहुजन हिताय, विद्रोहभावना, अस्तित्व-अस्मिता आदि गुण दृष्टिगत होते है ।

संदर्भ सूची

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८६
२.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१५
३.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३४३
४.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४
५.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४३-१४४
६.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३७
७.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२१
८.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२३
९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२१
१०.	जेनेन्द्र के उपन्यासों में नारी पात्र	डॉ.सावित्री मठपाल	२०
११.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१५७
१२.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२३
१३.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२९४-२९५
१४.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६९
१५.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५५-५६
१६.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३४
१७.	हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ.वीना रानी यादव	४१

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१८.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८३
१९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१२
२०.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३४४
२१.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५
२२.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२८-२९
२३.	आधुनिक समाज की नारी चेतना	डॉ. सुशील वर्मा	१६८
२४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३६
२५.	हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति	डॉ. वीना रानी यादव	५७
२६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३३
२७.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७७
२८.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३१०-३११
२९.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११८
३०.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४०
३१.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०५
३२.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८०
३३.	आधुनिक समाज की नारी चेतना	डॉ. सुशील वर्मा	१५४
३४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१९०
३५.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०१

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
३६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१७
३७.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०
३८.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५६
३९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२४
४०.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२३३
४१.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०–४१
४२.	नारी चेतना और कृष्ण सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१५२
४३.	देवश ठाकुर के उपन्यासों में नारी	डॉ. माधवी बागी	७८
४४.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८
४५.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४१
४६.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४०७
४७.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१५
४८.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३८८
४९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३५१
५०.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३२–१३३
५१.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०
५२.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५८
५३.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४–७५

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
५४.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२३
५५.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४२
५६.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१७
५७.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६१
५८.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४२-४३
५९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२४४
६०.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६
६१.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२८
६२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८६
६३.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१
६४.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०८
६५.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३५९
६६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४६-१४७
६७.	नई सदी के उपन्यास	सं.डॉ.नवीनचन्द्र लोहनी	१९४
६८.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२२-१२३
६९.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१७
७०.	नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१६२
७१.	धर्म और समाज	डॉ. राधाकृष्णन	२०४

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
७२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२
७३.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०९
७४.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७५
७५.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०९
७६.	अगनपाखी(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११५
७७.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५७
७८.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४८
७९.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८२
८०.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३८
८१.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६३
८२.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०५
८३.	विजन(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२९
८४.	नारी चेतना और कृष्ण सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१५२
८५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८९
८६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८८
८७.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०६
८८.	अल्मा कबूतरी(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४
८९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८५

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
९०.	चाक(उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५८
९१.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६५–६६
९२.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०८
९३.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१६२
९४.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६२
९५.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८०
९६.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४८
९७.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११४
९८.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११३
९९.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१

पंचम अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में निरूपित नारी–समस्याएँ ।

- प्रस्तावना

५.१ अंतर्जातीय विवाह की समस्या

५.२ अनमेल विवाह की समस्या

५.३ नारी शिक्षा की समस्या

५.४ विधवानारी की समस्या

  ५.४.१ विधवापन एक अभिशाप

५.५ नारी शोषण की समस्या

  ५.५.१ स्त्री पर शारीरिक अत्याचारों की समस्या

  ५.५.२ बलात्कार की समस्या

  ५.५.३ वेश्यावृत्ति एक समस्या

५.६ नारी स्वातंत्र्य की समस्या

५.७ स्त्री–पुरूष सम्बन्ध की समस्या

  ५.७.१ पति–पत्नी के सम्बन्धों की समस्या

  ५.७.२ स्त्री–पुरूष के अवैध या अनैतिक सम्बन्धों की समस्या

५.८ समानता और न्यायिक अधिकारों की समस्या

५.९ स्त्री की रोजगार–विषयक समस्या

- निष्कर्ष

पंचम अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में निरूपित नारी–समस्याएँ ।

प्रस्तावना

नारी–जीवन और उसकी समस्याएँ सदा से ही साहित्य की विषयवस्तु के रूप में ग्रहीत की गई हैं । समूचे विश्व का उपन्यास–साहित्य इस बात का साक्षी है । हिन्दी के अधिकांश कथाकारों ने भी नारी को केन्द्र में रखकर रचनाएँ की हैं और बदलते परिपेक्ष्य में आधुनिक दृष्टिकोण से नारी को देखने–परखने की कोशिश की है । लेखकों ने नारी के दृष्टिकोण से देखा हैं । इन्होंने नारी के मन की गहराई में जाकर नारी समस्याओं के प्रति उदासीनता व पुराने मानसपट को छाँटकर एक नयी दृष्टि से नारी के अंतर्मन में झाँकने का प्रयास किया है ।

निर्विवाद सत्य है कि नारी हृदय की व्यथा–कथा जितनी ईमानदारी के साथ नारी लिख सकती है , उतना पुरूष नहीं । लेखिका स्वयं नारी हैं, अतः नारी के स्वभाव, उसकी समस्याओं का सजीव–सक्षम व ईमानदार प्रस्तुतीकरण करने की क्षमता लेखकों की अपेक्षा उसमें अधिक रहती है । स्वातंत्र्योत्तर कथा–लेखिकाओं ने इस तथ्य को शत–प्रतिशत प्रमाणित किया है । राजेन्द्र यादव भी उक्त कथन का समर्थन करते हुए लिखते हैं –

''पुरूष कथाकारों की तरह अपनी स्थिति और नियति के प्रति सामाजिक-मानसिक रूप से प्रबुद्ध इधर की कथा-लेखिकाओं के आने से पहले हिन्दी कथा साहित्य प्रायः हवाई, प्रियदर्शिनी और प्रदर्शनी नारियों से भरा रहा हे । यह भी कहा जा सकता है कि सजीव व्यक्तित्ववालें नारी-पुरूष संबंधों के वास्तविक तनाव, लगाव और उन्हें निर्धारित करनेवाले दबाव पहलीबार सामने आ रहे हैं । इस दिशा में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नु भण्डारी, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, निरूपमा, मालती जोशी के नाम लिये जा सकते है ।''[१]

स्वातंत्र्योत्तर महिला-कथाकारों में प्रसिद्धि प्राप्तकर्ता लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का महत्वपूर्ण स्थान रहा है । इन्होंने नारी और उससे जुडी समस्याओं को अपनी रचनाओं में विशेष स्थान दिया हैं । यूँ भी स्वातंत्र्योत्तर नारी की धीरे-धीरे बदलती जीवन-दृष्टि, उनका मानसिक व बौद्धिक दृष्टिकोण, वैयक्तिक स्वतंत्रता एवम् निजी व्यक्तित्व के प्रति जागृति, पितृसत्तात्मक तथा आज की तमाम आधुनिकता एवम् प्रगतिशीलता के बावजूद उसकी स्थिति आदि ऐसी समस्याएँ हैं, जो तकरीबन हर स्वातंत्र्योत्तर कथाकारों को नारी जीवन एवम् तत्संबंधी प्रश्नों पर सोचने के लिए विवश कर रही हैं । मैत्रेयी पुष्पा भी अपने कथा-साहित्य में इन तमाम समस्याओं से रू-ब-रू हुई हैं । उन्होंने भी नारी-जीवन के संत्रास को पारदर्शक रूप में प्रस्तुत किया हैं ।

५.१ आन्तर्जातीय विवाह की समस्या :

भारतीय इतिहास की पृष्ठभूमि में जिस सामाजिक व सांस्कृतिक परंपरा को रिक्थ जनमानस में प्राप्य है, उसमें अविवाहिता नारी एक

विचित्र और अनोखी स्थिति का घोतन करती है । भारतीय सामाजिक जीवन में विवाह जैसे सामाजिक प्रश्न को धार्मिक आचारों एवं जातिवर्णों के साथ बड़ी दृढ़तापूर्वक बाँधा गया हैं । यहाँ विवाह एक धार्मिक अनुबन्ध ही नहीं है अपितु स्त्री का जीवन क्रमशः पिता पति और पुत्र के आधीन है । ऐसी सामाजिक विचारधारा में आंतरजातीय विवाह मानों भारतीय परपरा के विरूद्ध है । समाज के बदलते मूल्य, नवजागरण, राष्ट्रीयचेतना, सांस्कृतिक आदान–प्रदान का नियम और कानुनी अधिकार विवाह के प्रति बदलती आस्था आदि प्रश्नों में नवशिक्षिता भारतीय नारी को अपने मूल्य का, अपनी स्थिति का, अपनी प्रतिभा का पर्यवेक्षण करने को अभिप्रेत किया है ।

अन्तजॉतीय विवाह उसे कहते है, जिसमें स्त्री–पुरूष अलग–अलग जाति के होते है । अपनी जाति से बाहर, अन्य जाति में किया गया विवाह, अन्तर्जातीय विवाह कहलाता है । अंतर्जातीय विवाह अधिकांश प्रेम विवाह ही होते हैं । ऐसे विचार को समाज आज भी सहजता से स्वीकार करता नहीं हैं । सुन्दरता और अच्छे गुणों से प्रभावित होकर ही स्त्री–पुरूष में प्रेम पनपता है । साहसी प्रेमी युगलों के लिए जाति अथवा धर्म की दीवारें रूकावट नहीं बन पाती। जब जाति अथवा धर्म की संकीणताओं के कारण ये सम्बन्ध टूट जाते हैं, कटुता पैदा होती है, तब ऐसा विवाह एक समस्या का रूप धारण करता हैं ।

उक्त समस्या को पुष्पाजी ने अपने उपन्यास साहित्य में प्रदर्शित किया है । 'चाक' उपन्यास में इसी समस्या को प्रस्तुत किया है । गुलकंदी नाइन जाति की लड़की है और बिसुनदेवा खाटिक जाति का

लड़का । दोनों भागकर गंधर्वब्याह करते है । किन्तु परंपरा से रूग्ण समाज दोनों के विवाह को स्वीकार नहीं करता है । परिणामतया दोनों प्रेमियों को मृत्युदण्ड देकर परंपरा को कायम रखते है । जैसे लेखिका लिखती हैं कि – ''लौंगसिरी बीबी ने गुलकंदी के भागने के भागना नहीं माना, कहती हैं, गुलकंदी ने गंधरव ब्याह किया है । गंधरव ब्याह ? श्रीधर मास्टर भी कहता है – अपनी रजा से लड़की ब्याह करे तो उसे 'भागना' कहकर बदनाम करना है । गंधर्व विवाह कहो, गंधर्व विवाह ।''(२)

पुष्पाजी ने सभी उपन्यासों में अंतर्जातीय विवाह का समर्थन नहीं किया है । सिर्फ 'चाक' उपन्यास में ही आंतर्जातीय विवाह का उल्लेख देखने को मिलता है । लेकिन इस प्रकार के विवाह सम्पन्न होने में युवकों की संकीर्ण मानसिकता – धर्म, जाति आदि किस प्रकार रूकावटें उत्पन्न करती है, उसकी ओर संकेत भी किया है । समाज में प्रचलित दहेजप्रथा तथा उससे उत्पन्न समस्याओं से छुटकारा पाने के रास्ते की ओर निर्देश किया गया है ।

५.२ अनमेल विवाह की समस्या :

बाल–विवाह और दहेज–प्रथा का प्रतिफल है अनमेल विवाह । हिन्दू समाज में कन्या का विवाह धार्मिक दृष्टि से अनिवार्य माना गया है । इसीलिए माँ–बाप किसी–न–किसी प्रकार लड़की को विवाहित देखना चाहते है । 'हिन्दू समाज में जन्म होने के अभिशाप की मुक्ति है विवाह ।' यही भावना युगों से हमारें समाज में काम कर रही थी और आज भी उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है । इसीलिए समाज में

बेमेल विवाह की घटना साधारण बात है । अनमेल-विवाह के सन्दर्भ में डॉ. एम. वेंकटेश्वर अपनी पुस्तक 'हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार में कहते है कि - ''भारतीय समाज में अनमेल विवाह की परिणति प्राय:दुखद ही होती है । ऐसे विवाहों में स्त्री का असंतोष बाहर खुलकर व्यक्त नहीं हो पाता और वह अंदर ही अंदर घुटती रहती है । जिससे उसका पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन विषाक्त हो जाता है । साथ ही अनेक कुरीतियाँ भी पनपने लगती हैं । प्रेमचन्दजी ने अनमेल विवाह का बहुत विरोध किया और 'निर्मला' उपन्यास के माध्यम से अनमेल विवाह के कुपरिणामों को बड़ी सहज अभिव्यक्ति दी है ।''(३)

हिन्दी उपन्यासों में अनमेल-विवाह के कई रूपों का चित्रण मिलता है । (१) कहीं सात से दस वर्ष की बालिका का विवाह किसी बूढे से होता है तो (२) कहीं वयस्क कन्या का विवाह निरे बालक से हो जाता है । (३) कहीं-कहीं दाम्पत्य जीवन में स्वभावगत विभिन्नता को भी अनमेल - विवाह की कोटि में माना गया है । सभी प्रकार के बेमेल विवाहों का परिणाम दु:खद होता है । पुष्पाजी के उपन्यासों में अनमेल-विवाह की दारूण समस्या का पर्दाफाश हुआ है । बेमेल-विवाह की अन्तिम परिणति दु:खद ही होती है । इसके फलस्वरूप परिवार में तनाव, धृणा, कलह, पापाचार और अनाचार जैसी कुप्रवृतियाँ निरंतर पनपती है । मैत्रेयी पुष्पा रचित 'अगनपाखी' उपन्यास में अनमेल-विवाह की समस्या को प्रस्तुत किया गया है । दरअसल भुवन का विवाह पागल विजयसिंह के साथ सम्पन्न होता है । किन्तु विवाहपरांत भुवन

का जीवन अनमेल विवाह की आग जलता रहता है । जैसे – ''भुवन अपनी माँ से कहती है कि – ''ये गहने धरो चाहे लौटा दो, पर एक खरी बात सुन लो; भले टका ही सही मैं वहाँ जानेवाली नहीं । भुवन ने माँ की आखों में आँखें डालकर कहा – पता हैं तुम्हें, पर मेरे मुँह से सुन लो, वह सिर्री है, पागल । सुख साकों पर बिक जाऊँ ? पागल की सेवा करना सुख साके होता है तो किसी पागलखाने में नौकरी कर लेती ।''(४)

तो कहीं पागल पति की हरकतों से त्रस्त भुवन अपने असफल विवाह की गाथा को प्रदर्शित करते हुए कहती है कि – ''जिज्जी वह कुढ़िया की तरह भी सुख आनन्द कहाँ जानता है । खुद को दुख ही देता रहता है । सर्दी की रात पूरी की पूरी हाथ–पाँव धोते–धोते निकाल देगा । शीत रात में आँगन के कोने में मुँह देकर बैठा रहेगा । जो खुद करेगा, मुझसे कराएगा । कहता है, हर जगह कीड़े हैं, हर जगह खून है, हर जगह आदमी का.... आगे कहनेवाली बात नहीं है जिज्जी ।''(५)

इस प्रकार लेखिका ने 'अगनपाखी' उपन्यास में अनमेल – विवाह की गम्भीर समस्या को प्रस्तुत किया है । आज के बौद्धिक समाज के प्रबुद्ध लोगों के लिए, उक्त समस्या जटिल है । किन्तु उसमे घटौती अवश्य आयी है । तो दुसरी जगहों पर लेखिका ने समाज के लालचु मानसपट की धिन्नौनी प्रवतियों को चित्रित किया है । 'त्रिया–हठ' उपन्यास में अजीत और बरजोरसिंह (मीरा के पिता), जो व्यक्तिगत स्वार्थवश विधवा उर्वशी का शोषण करते है, उर्वशी, अपने भाई अजीत की दोखजनीति का शिकार होकर, बचपन की सहेली मीरा की सौतेली माँ बनकर, नारी शोषण के हथकण्डों में फँस जाती हैं । 'त्रिया–हठ'

उपन्यास में स्मिता उक्त घटना को विश्लेषित करते हुए कहती है कि – ''विधवा–विवाह के नाम पर तमाम बूढों की दयनीय कामुकता और उजड़ते हुए घरों के ही उपाय खोजे जाते रहे हैं । दादाजी और उनसे पहले की सारी पीढ़ियाँ इस बात पर गौर तक नहीं करती तो हम भी चुप बने रहे ? उर्वशी को विजय या उदय के संग बसाया जाता तो निश्चित ही विधवा–विवाह की सार्थकता थी । हाँ, अजीत अपना अहसान न उतार पाते । उलटा बरजोरसिंह का एक अहसास चढ़ जाता, क्योंकि यहाँ भी पुरूष वर्चस्व काम कर रहा होता, जो हजारों साल का संस्कार है ।''(६)

इस तरह स्मिता, उर्वशी और बरजोरसिंह के अनमेल विवाह को विश्लेषित करके पाठकों के सामने अनमेल–विवाह की समस्या को प्रस्तुत करती है । हाँलाकि उम्र की असमानता एवं वैचारिक असमानता दोनों ही पति–पत्नी के सम्बन्धों में मानसिक वैमनस्य स्थापित कर देती हैं । पुष्पाजी ने उक्त समस्या को उपन्यासों में प्रस्तुत किया है । साथ–साथ समस्या के मनोवैज्ञानिक पक्ष को भी उभारा गया है ।

५.३ नारी शिक्षा की समस्या :

मानव जाति के इतिहास से विदित होता है कि एक समय जीवन इतना साधारण था कि किसी को पढ़ाई–लिखाई की आवश्यकता ही नहीं थी । जेसे–जैसे मानवीय क्रिया–कलाणें में वृद्धि हुई उनके साथ जीवन को जटिलताएँ बढ़ने लगी । ज्ञान–विज्ञान की उन्नति हुई और मानव विज्ञान की उन्नति के शिखर पर पहुँच गया । शिक्षा की आवश्यकता दिन–प्रतिदिन बलवत्तर होती गई ।

भारतीय समाज में नारी शिक्षा का प्रचलन वैदिक काल से था । वैदिक युग की गार्गी, मैत्रेयी, अपाला आदि उच्चस्तरीय ज्ञान-विज्ञान की विदूषियाँ इस बात का प्रमाण है । बाद में वर्ण व्यवस्था एवं जाति-प्रथा की जड़ता के कारण नारी के लिए शिक्षा के द्वार बन्द हो गये । युग परिवर्तन के साथ नारी शिक्षा की जरूरत महसूस हुई । किन्तु इस प्रक्रिया में भी अधिकांश महिलाएँ पीछे रह गई । यही कारण था कि वे पूर्णतः पुरूषाधीन तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र एवं आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में शोषण व अत्याचारों का शिकार हुई । महात्मा गांधी ने नारी शिक्षा को प्राधान्य देते हुए कहा था कि - ''एक लड़की की शिक्षा, एक लड़के की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की को शिक्षा देने से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है ।''(७)

उपरोक्त कथन के अनुरूप 'आशारानी व्होरा' ने अपनी किताब 'स्त्री-सरोकार' में नारी शिक्षा का समर्थन करते हुए लिखा है कि- ''सुप्रसिद्ध समाजसेवी दुर्गाबाई देशमुख ने एक नारा दिया था । ' एक लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है, जबकि एक लड़की की शिक्षा एक पूरे परिवार की शिक्षा है, क्योंकि माँ के नाते स्त्री परिवार को धूरि हे ।''(८)

पुष्पाजी का बाल्यजीनव ग्रामीण परिवेश में व्यतित हुआ है । अतः पूर्णतया ग्रामीण नारी की शिक्षा समस्या से हु-ब-हु हुई है । इसीलिए उन्होंने नारी शिक्षा की समस्या को अपने उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है । उन्होंने अपने उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में स्त्री शिक्षा की

समस्या को उजागर किया है । उपन्यास में स्त्री के मुकाबले पुरूष को अधिक महत्त्व दिया गया है । उर्वशी के भाई अजीत की पढ़ाई के लिए पूरा परिवार एक जुट होता है । किन्तु उर्वशी के लिए सभी लोग नकारात्मक अभिगम अपनाते है । जैसे उपन्यास में लेखिका लिखती है कि – ''घर में धोर कंगाली थी फिर भी पिता ने अजीत को पढ़ाने का भरसक साहस किया । जी–जान लगाकर प्रयत्न करते रहे कि पुत्र पढ़ जाए – किसी भी तरह ।

अजीत की ही पढ़ाई रेत की नाव–सी घिसट रही थी तो उर्वशी के हाथ में कलम–काग़ज पकड़ाने का दुस्साहस कौन करता । बेटी तो वैसे ही 'पराये घर का दरिद्र' मानी जाती है ।''(९)

प्रस्तुत सन्दर्भ नारी शिक्षा की समस्या को प्रस्तुत करता है । साथ ही स्त्री–पुरूष जाति की असमानता के भाव को भी प्रदर्शित करता है । क्योंकि समाज की रूग्ण परंपरा स्त्री को पुरूष के समकक्ष कदापि स्वीकार नहीं करेंगी । सन् १९९१ ई. को जनगणना के अनुसार देश में ५२ प्रतिशत लोग साक्षर है । ६० प्रतिशत बालकों की तुलना में ४० प्रतिशत बालिकाएँ ही स्कूल जा सकती हैं और गाँवों में दस लड़के पर एक लड़की विद्यालय जाती है । उच्च शिक्षा तक १२ प्रतिशत ही लड़कियाँ पहुँच पाती हैं । तो कहीं पर घर–कामकाज एवं खेती–बाड़ी की जिम्मेदारी, लडकियों को शिक्षा से वंचित रखती है । एक तरह से परिवार की रूग्ण मानसिकता भी कारणभूत होती है । जैसे 'अगनपाखी' उपन्यास में भवन पढना चाहती है । किन्तु पारिवारिक कामकाज और आर्थिक स्तरीयता में सुधार लगाने हेतु पढ़ाई को छोड़ना पड़ता है ।

जैसे – ''यही देखकर नानी ने उसे स्कूल से बिठा लिया था, कहने को मास्टरजी ने उसे छठ़ी कक्षा में दाखिल करने के लिए कहा था, मगर नानी राजी नहीं हुई और यह कहकर मास्टर को चुप कर दिया कि – हमारे घर में हम दो ही हैं । भुवना पढ़ेंगी तो काम कौन करेगा ? मैं घर में भी करूँ और खेत में भी ?''[१०]

लेखिका ने 'अगनपाखी' उपन्यास में स्त्री शिक्षा की समस्या को भुवन के माध्यम से प्रस्तुत किया है । आजभी ग्रामीण अँचलों में गृहकार्य और परिवार की निम्न आर्थिक स्थिति के कारणवश अधिकत्तर लड़कियाँ शिक्षा से वचित रहती हैं । तो 'इदन्नमम' उपन्यास में लेखिका ने मंदाकिनी जैसी अनेक लड़कियों की शिक्षा समस्या को प्रदर्शित किया है । दरअसल उपन्यास मे बऊ अपनी खेती और समाज के आततायियों से लड़ने में ही अपना जीवन व्यतित करती है । इसीलिए मन्दाकिनी की पढ़ाई के विषय में कोई ठोस कदम नहीं उठा पाती है । मन्दाकिनी बऊ से कहती है कि – ''बऊ, हम पढ़ने जाया करेंगे । हाँ बऊ ! यहीं के स्कूल में । छः मे दाखिला हो जाएँगे । कल से ही जाएँगे बऊ ! मकरन्द किताबें ला देंगे मोठ से पहसा दे देना ।

'बेटा, ना ! ना मन्दा !'

'ना ! क्यों बऊ ?'

बिटिया, और बालकों को होड़ जिन करो । तुम्हारा बाहर कढना ही मुसीबत हो पडेगा मन्दा ! फिर निर्बल स्वर में बोली,' तो बऊ हम कभी नहीं पढ़ सकेंगे ?''[११]

इस प्रकार लेखिका ने नारी शिक्षा की समस्या को प्रदर्शित किया हे । जहाँ बऊ सामाजिक आततायियों से लड़कर अपने अधिकारों के प्रति जागृतता बरतती हैं । वहीं मन्दाकिनी की शिक्षा के लिए, बऊ कम उत्साही के रूप में दृष्टव्य होती है । अन्य उपन्यास में लेखिका ने कम उम्र में शादी हो जाने की वजह से नारी शिक्षा से वंचित रहने की समस्या को उजागर किया है । 'कही इसुरी फाग' उपन्यास की मीरासिंह उक्त समस्या की शिकार होती है । किन्तु आत्मबल एवं साहसिकता के कारण पढ़ने में कामयाब होती दिखलायी पड़ती है ।

जैसे - ''पन्द्रह-सोलह साल की उम्र में गाँव की लड़की तरह उसकी शादी सत्रह के लड़के से हुइॅ । लड़का नवीं कक्षा में पढ़ता था और मीरा आठवीं पास थीं । मीरा ने देखा, पति का मन पढ़ने में बिल्कुल नहीं लगता है और उसका अपना मन पढ़ाइॅ के लिए ललचाता रहता है । पति के बदले ससुराल के लोग उसे स्कूल भेज दें काश ! मगर कहीं ऐसा होता है, जो उसके लिए होता ?''(१२)

उपरोक्त सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि नारी शिक्षा की समस्या का समाधान असंभव-सा है । किन्तु मीरासिंह जैसी औरतें, समाज एवं परिवार से लड़कर पढ़ाई की ओर साहसिक कदम उठाएँगी, तभी उपर्युक्त समस्या का समाधान संभव होगा । लेखिका ने मीरासिंह के जरिए नारी शिक्षा को समस्या को प्रस्तुत करके, खुद मीरासिंह के माध्यम से समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है ।

इसी तरह हम देख सकते है कि पुष्पाजी ने समाज में फैली नारी शिक्षा की दारूण समस्या को प्रस्तुत अवश्य किया है । क्योंकि पुरानी परंपरा में बँधे समाज की मानसिकता रूग्ण एवं पिछड़ी है । इसीलिए वह लड़का-लड़की को कदापि समान दरज्जे पर नापेंगे नहीं । परिणामतया लडकों को जो सुविधाएँ प्रदान की जायेंगी, वह सवलते लड़कियों के लिए अप्राप्य होगी । जो समाज लड़कों की शिक्षा के लिए अग्रसर होता है । वह लड़कियों के लिए कदापि आगे नहीं आयेगा । फलस्वरूप नारी शिक्षा की समस्या बरकरार रहेगी । किन्तु नारीवादी लेखिका पुष्पाजी ने प्रस्तुत समस्या को अपने उपन्यास में स्थान देकर, मीरासिंह जैसी सशक्त नारी पात्रों के जरिए समाधान का प्रयास भी किया है ।

५.४ विधवा नारी की समस्या :

विधवा समस्या भारतीय समाज की एक विषम समस्या है । हिन्दू समाज में तो इसका बड़ा ही भयंकर रूप दृष्टिगोचर होता है । यूँतो वर्तमान समाज में समग्र नारी-जीवन पुरूष वर्ग के तिरस्कार, दमन और उपेक्षा का शिकार हो रहा है । लेकिन सबसे अधिक अत्याचार व शोषण की शिकार विधवा ही होती हैं ।

प्राचीन काल में विधवा स्त्री को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी । आधुनिक नारी जागरण काल में भी अनेक विधवाएँ पुनर्विवाह के लिए तैयार नहीं होती है । विधवा नारी को हमारे समाज में एक अलग ही दृष्टि से देखा जाता है । यहाँ तक कहीं-कहीं तो उनका चेहरा तक देखना अपशकुन माना जाता है । जैसे डॉ. एम.वेंकटेश्वर विधवा नारी

की उपस्थिति को चित्रित करते हुए लिखते है कि – ''विधवा का खाना–पीना, पहनना–ओढ़ना, कहीं आना–जाना सामाजिकों के लिए आज भी आलोचना की वस्तु है । किसी मांगलिक कार्य में विधवा का प्रवेश आज भी निषैध है । इन्हीं सब कुण्ठाओं और अनास्थाओं के कारण प्राचीन काल में नारी संभवतः पति के साथ सती होना ज्यादा पसंद करती थीं । कम से कम सती होने के बाद समाज के अत्याचारों से तो मुक्ति मिल जाती थी ।''(१३)

आज विधवा नारी न तो सती हो पाती है और न ही वैधव्यग्रस्त यंत्रणाओं से मुक्त हो सकती हैं । दोनों के बीच पीसी जाती है । आधुनिक युग में विधवा नारी, अपनी जिन्दगी अपनी इच्छानुसार जीने का दावा करती है और कानूनी एक भी हासिल कर चुकी हैं । फिर भी भारतीय विधवा सदा से उपेक्षित और पीड़िता रही हैं । उसे सामान्य जीवन यापन के उपयुक्त सुविधाएँ भी परिवार और समाज से प्राप्त नहीं होती । पुष्पाजी ने ऐसे विधवा चरित्रों को उपन्यास साहित्य में प्रस्तुत करके पाठकगण एवं प्रबुद्ध लोगों को सोचने पर मजबूर किया है ।

५.४.१ विधवापन एक अभिशाप :

नारी वस्तुः उपभोग की चीज नहीं है । उनके अंदर भी हृदय है, उनकी भी विशेष कामनाएँ होती है । किन्तु परम्परागत सोच के आधीन पुरूष–वर्ग की सिर्फ इस्तेमाल की वस्तु ही समझता है । अतः उन्हें घर की चार दीवारों में निष्प्राण व्यक्ति के रूप प्रस्थापित करता है । जबकि भारतीय संविधान में नर–नारीं को पूर्णतया स्वतंत्रता का अधिकार

प्राप्त हुआ है । तो फिर नारी के लिए बंधन क्या उचित होगा ? तो नारी और उस पर घातक वैधव्य, इस दोहरी प्राणघात नियति के चक्कर में विधवा नारी पीसी जाती है । विधवा नारी के लिए बनाये गये निषेध ही उनका भाग्य है । विधवा नारी स्वतंत्रता के लिए अथाग प्रयत्न करे । किन्तु आखिरकार उसके लिए परतंत्रता की सजा मुकरर होती है ।

पुष्पाजी ने अपने उपन्यास साहित्य में विधवा स्वतंत्रता की समस्या को मुखरित किया है । उन्होंने ऐसे विधवा चरित्रों के द्वारा उनकी स्वतंत्रता के लिए पाठक एवं समाज को विवश किया है । जिसने कभी स्वतंत्रता को महसूस ही नहीं किया । जैसे 'चाक' उपन्यास की विधवा नारी रेशम (सारंग की फूफेरी बहन) आकस्मिक रूप से विधवा हुई थी । फलस्वरूप उसे परिवार एवं समाज के बनाये गए निषेधों के तहत ही अपना जीवन-यापन करना पड़ता है । जैसे - ''रेशम विधवा थी - जमाने के लिए रीति-रिवाजों के लिए, शास्त्र-पुराणों के चलते घर और गाँव के लिए । विधवा सिर्फ विधवा होती है । वह और नहीं रहती फिर । यह बात पता नहीं उसे किसी ने समझाई कि नहीं ? किसी ने कहा नहीं कि इच्छाओं के रेशमी तारो में आग लाग दे रेशम ?''(१४)

इस प्रकार देख तो विधवा नारी के लिए स्वतंत्र जीवन-यापन करना कतिपय समाज को स्वीकार्य नहीं है । अतः विधवा स्वतंत्रता की समस्या सामने आती है ।

अन्य जगहों पर पुष्पाजी ने विधवा की समस्या को बड़े मार्मिक एवं सहानुभूति के साथ चित्रित किया है । 'इदन्नमम' उपन्यास की बऊ

एक विधवा है । जिसके लिए वैधव्यग्रस्त जीवन-यापन करना मानो अनेक आततायियों से लड़ना अनिवार्य ही नहीं आवश्यक बन पडा हैं । बऊ, कहना चाहती है कि विधवा नारी के लिए सुखमय जीवन की कामना कदापि नहीं की जा सकती हैं । क्योंकि उनके लिए हर दिन संघर्ष ही नियति बनता है । बऊ, मन्दाकिनी को समझाते हुए कहती है कि - ''तुम बच्चा हो हमारे लेखें, तुम्हें का-का बता देवें ? कैसे-कैसे कपटी-अन्यायियों को झेला है हमने । कैसे-कैसों से जड्ड ली है । राँड विधवा तो हम भी हुए थे बेटा ! और चढ़ती उमर में हुए थे । जनी के लाने आसनाई करनेवालों की कमी नहीं होती । पर हम जानते थे ऊँच-नीच । बात को परखने की बुद्धि नहीं खोई थी हमने । जाहिर थी यह बात कि उन दुष्टों की आँख हमारी देह और जायदाद पर थी ।''[१५]

उपन्यास की अन्य विधवा नारी प्रैम (मन्दा की माँ) जीवन से त्रस्त होकर, निषेधों को तोडना अपना कर्तव्य समझती है । जैसे मन्दा कहना चाहती है कि - ''क्या पता बऊ को यही दु:ख हो कि वे विधवापन के लिए बनाए गए निषेधों को सहती -झेलती रहीं, अम्मा ने जिन्हें नकार दिया । जिन दैहिक सुखों को बऊ ने इच्छा या अनिच्छा से कुचला, उन्हीं को अम्मा ने जरूरी समझ लिया । उनका गम यह भी हो सकता है कि विधवापन के चलते सामाजिक विधान की भागीदारी वे ही अकेली क्यों हुई ? यह दंड उनकी बहू ने क्यों नहीं भोगा ? हवेली की मर्यादा की रक्षा में होने की सजा केवल उनके लिए और जायदाद का बँटवारा बराबर-बराबर ! यह कहाँ का न्याय है ?''[१६]

उपन्यास के अंत । में बऊ और प्रैम वैधव्यग्रस्त जीवन के चक्कर में पीसती दृष्टिगत होती है । दरअसल बऊ प्रौढ़ विधवा स्त्री हैं । इसीलिए परिवार की इज्जत एवं मर्यादा के लिए प्रयत्नशील रहने के कारण, मानसिक और आर्थिक शोषण का शिकार बनती है । जबकि प्रैम उन्मुक्त विधवा नारी होने के कारण सामाजिक आततायियों से शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक शोषण का भोग बनती है ।

मैत्रेयी पुष्पा के 'झूलानट' उपन्यास में बालकिशन की माँ ऐसी विधवा नारी के रूप में उभरती है । । जिसने विधवा रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण किया, बिना मर्द के इज्जतदार जीवन यापन करती है किन्तु सगे-सम्बन्धियों की सहानुभूति उन्हे, अत्याचारों की पीडिता के रूप में निषिद्ध करते हैं । संस्कृति की चौखट का उल्लंधन करना विधवाओं के लिए महापाप समझा जाता है । जैसे बालू की माँ विधवा जीवन वृत्तांत को प्रस्तुत करते हुए कहती है कि - ''आबरू के घंटे तो हम जीनयों के गले में ही लटक रहे हैं, जिन्हें उतारने बने न ढोते - विधवा रहकर दोनों बेटों का पालन-पोषण, बिना मर्द को इज्जतदार जिंदगी ! लुट गईं वे ।''(१७)

विधवा नारी की सामाजिक स्थिति अत्यंत दयनीय एवं दमित है । महात्मा गांधी ने विधवा उद्धार को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि -'' हिन्दू समाज में केवल अछूत ही पीड़ित नहीं है; विधवाएँभी उनके समान अस्पृश्य एवं पीड़ित है ।''(१८) भारतीय हिन्दू समाज में विधवा को संत्रस्त एवं कष्टमय जीवन व्यतीत करना पड़ता है । उसके बाल कटवाने, आभूषण न पहनने, सफेद वस्त्र पहनकर जमीन पर सोना, व्रत

रखने और शुभ कार्यों पर उपस्थित न रहने का विधान आदि विधवाओं के लिए नियति बन जाती है ।

विधवा नारी के लिए जीवन का कोई अंश प्रभावोत्कर्ष रहता नहीं है । पुष्पाजी ने 'बेतवा बहती रही' उपन्यास को उर्वशी के मूल्यहीन जीवन को प्रस्तुत किया है । उपन्यास के अन्तर्गत उर्वशी शादी-ब्याह जैसे शुभ अवसर पर उपस्थित नहीं हो सकती है । क्योंकि ऐसा करना नियमों के खिलाफ है । जैसे - ''उर्वशी नहीं गयी । सोचती ही रह गयी घर के भीतर - कैसी पगली है मीरा समझती ही नहीं सगुन-सात की बेराँ कैसे जाय वह ? कोई टोक धरे तब ? मीरा नहीं जानती कि सुहाग-भाग में उसके जाने पर निषधाज्ञा है ?''[१९]

विधवा नारी का जीवन अन्य व्यक्ति पर आश्रित रहता है । क्योंकि पुरूष-वर्ग चाहे तब, विधवा-नारी मुक्त जीवन बसर कर सकती है । अन्यथा स्वतंत्र जीवन-यापन करना एक धोर अपराध ही समझा जाता है । पुष्पाजी ने 'त्रिया-हठ' उपन्यास में विधवा नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है । जिस में विधवा नारी को चार दीवारों में कैद किया जाता है । पुष्पाजी ने उक्त समस्या को 'त्रिया-हठ' उपन्यास में प्रदर्शित किया है । जैसे ''पहेरदारी होने लगी । उन सीमाओं में रहना था, जो विधवा बहू के लिए दाऊ और दाऊ जैसों के परिवारों में तय कर दी जाती हैं । दूसरे आदमी से एँसी दिल्लगी करना, उसके साथ आना-जाना, यहाँ तक कि बोलना - बतियाना गुनाह है ।''[२०]

इस प्रकार देखे तो विधवा नारी का जीवन संत्रस्त और दयनीय स्थिति के साथ प्रस्थापित किया जाता है । पुष्पाजी के उपन्यासों में विधवा समस्या की दीनता को सामाजिक परिवेश में प्रायः अत्याचार एवम् उत्पीड़न के रूप में प्रस्तुत किया गया हैं । सामाजिक परिवेश में विधवा नारी को मुक्ति की साँस के लिए पुरूष-प्रधान समाज व्यवस्था के आधीन रहना पड़ता है । पुष्पाजी ने 'चाक', 'इदन्नमम', 'झूलानट', 'बेतवा बहती रही', 'त्रिया-हठ' आदि उपन्यासों में विधवा समस्या को प्रस्तुत करके, समाज के प्रबुद्ध पाठकवर्ग को आकृष्ठ करने का प्रयास भी किया है ।

५.५ नारी शोषण की समस्या :

(शारीरिक एवं मानसिक के सन्दर्भ में)

आज स्त्रियाँ पढ-लिखकर हर क्षेत्र में पुरूषों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही हैं - उच्च पदों पर आसीन हो रही है; बड़ी-बड़ी कम्पनियों को सँभाल रही है, सेना में भर्ती होकर देश-रक्षा में सक्रिया योगदान दे रही हैं । अर्थात् जीवन का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र न हो जहाँ स्त्रियाँ पहुँच न पाई हैं । मगर अफसोस है कि ये अभूतपूर्व सफलताएँ भी भारतीय पुरूषों की नारी-संबंधी परंपरागत सोच को बदल नहीं पाई हैं । ऊपरी तौर पर आधुनिक दिखाइॅ देनेवाले, यहाँ तक कि अपने-आप को इक्कीसवीं सदी का आधुनिक पुरूष कहने और माननेवाले पुरूष भी भीतर से उसी सोलहवीं सदी दक्यिानूसी मानसिकता से ग्रस्त हैं ।

प्रसिद्ध मनोचिकित्सक 'अरूणा ब्रुटा' ने भी नारी शोषण के पक्ष को लेकर, कहा है कि - ''पुरूष सफल औरतों को सशंकित होकर देखते है । - पुरूष एक खूबसुरत गुड़िया चाहता है जो हर निर्णय में उस पर निर्भर करे । यह दिखाना चाहता है कि बागडोर उसी के हाथ में हैं ।''(२१)

विशेष तौर पर पुरूष-वर्ग के अहम् की टकराहट ही नारी-शोषण का कार्य करती है । क्योंकि परंपरागत रूप में पुरूष सदैव नारी को अपनी स्तरियता से निम्न अंकित करता आया है । इसीलिए जब भी नारी पुरूष - वर्ग की स्तरियता के सामने समान या बराबर होने का हक्क जतायेगी । तब-तब नारी शोषण होगा ही । क्योंकि परंपरागत अहम् का ध्वंश होने से पुरूष प्रतिशोध के रूप में नारी का शारीरिक, मानसिक और आर्थिक शोषण करता हैं ।

५.५.१ स्त्री पर शारीरिक अत्याचारों की समस्या :

नारी शोषण की परंपरा मूलतः पुरूष-प्रधान समाज व्यवस्था की मानसिकता पर निर्धारित है । इसीलिए नारी चाहे घर की चार दीवारी में रहें, चाहे घर से बाहर निकलकर पुरूष के साथ कदम से कदम मिलाने का प्रयास करें, शोषण का शिकार तो उसे आज भी होना ही पड़ता है । शोषण तो जैसे संपूर्ण नारी-जाति की नियति बना हुआ है । स्त्री चाहे घरेलू हो या कामकाजी, शिक्षित हो या अशिक्षित, शहरी हो या ग्रामीण, किसी-न-किसी प्रकार के शोषण का शिकार होती ही है । शायद कोई भी ऐसी जगह नहीं, जहाँ नारी शोषण से मुक्त हो । ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

नारी विषयक साहित्य सृजनकर्ता पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में नारी पर हो रहे शारीरिक अत्याचारों को चित्रित किया गया हैं । मूलतः लेखिका का उद्देश्य सिर्फ शारीरिक शोषण को चित्रित करना नहीं है, वरन् प्रस्तुत समस्या से पुरूष-वर्ग को सचेत करनाऔर समाधान के लिए प्रयत्नशील रहना भी है । लेखिका के अधिकत्तर उपन्यासों में नारी के शारीरिक शोषण की समस्या को वाणी प्रदान की गई हैं । जिनमें ज्यादात्तर नारियों का सम्बन्ध ग्रामाँचलों के साथ रहता हैं । ग्रामाँचलों से सम्बन्धित अधिकत्तर नारियाँ अशिक्षित एवं पुरूषों के आधीन हैं । उक्त सन्दर्भ को विश्लेषित करें तो शारीरिक अत्याचार याने मार-मीट, बलात्कार और शारीरिक अमानुषिक यंत्रणाएँ देना आदि है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने 'चाक' उपन्यास में स्त्री पर हो रहे शारीरिक अत्याचारों की समस्या को अभिव्यक्त किया हैं । उपन्यास में रेशम विधवा हैं । रेशम की सास हूकमकौर रेशम से मार-पीट करती दिखाई गई है । जैसे - फिर क्या था ! रेशम की रगें जवान थीं और हूकमकौर बूढ़ी थी, मगर थी तौ जाटिनी लपककर रेशम की चुटिया पकड़ ली - 'फस्सा तू मेरी देहरी पर लेंडिया (हरामी) जनेगी ? बोल, छिनार, बोल !' चोटी को बेददी से झटके दिए और उसकी गोरी नरम बाँह में अपने घिसे, मगर तेज दाँत गाड़ दिए । अंत में दोनों गुत्थमगुत्था हो गईं ।''[२२]

तो कहीं पुरूष अपने परिवार को मान-मर्यादा एवं दहलीज की इज्जत को बरकरार रखने के प्रयास में नारी पर अमानुषि और अकथित शारीरिक अत्याचार करता है ।

जैसे 'चाक' उपन्यास की पांचन्ना बीबी, जो अन्य जाति के पुरूष के साथ अवैध सम्बन्ध बाँधती है । फलस्वरूप पिता के द्वारा अजधन्य अत्याचारों का शिकार होती हैं । पांचन्ना बीबी बाप ने गुस्सा अपनी बेटी पर उतरा । नथिया भंगिन को बुलाकर कठोर सजा मुकर्र्र कर दी । जैसे ''चिमटा आग में दहकाया और उन लाल जलती हुई लोहे की पत्तियों को बड़े सहारे से नथिया भंगिन ने पांचन्ना बीबी की छातियों की काली जगह पर रख दिया – चूचियाँ दाग ढी गईँ । सब निश्चिंत हुए, अब न फूटेंगी जवानी की गुद्दियाँ । बहुत फड़कती थी ।''(२३)

तो लेखिका ने कहीं रक्षक को भक्षक के रूप निरूपित करके पुलिस की कार्य प्रणाली को झकझोरकर रख दिया है । क्योंकि पुलिस, जो सुरक्षा की आड़ में आम–जनता की औरतों का शारीरिक शोषण करती है । अतः रक्षक ही भक्षक बने तो, आवाम–न्याय के लिए किसके पास जाये ? पुष्पाजी ने 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में कबूतरा जनजाति की औरतों का पुलिस एवं प्रशासन के द्वारा किए गए शारीरिक शोषण को प्रस्तुत किया है । जैसे पुलिस के आतंक का हु–ब–हु चित्रण करते हुए लेखिका लिखती है कि – ''जो पकड़े गए, पीटे गए विनती कर रहे हैं – अरे रे ! छोड़ दो, पाँव चाटता हूँ मालिक ।

– वो गई ! पकड़ो साली को ।

– पेटवाली है, मटके जैास पेट । लाओ इधर । हम बच्चा पैदा करते हैं । आदमी पैन्ट खोलने लगा ।

बच्चे कहाँ ? मुगियाँ कहा ? कबूतरियों को अपना संसार याद आने लगा । बकरी .... बकरी का सिर उड़ गया । अरहर की पतियाँ हरी से लाल हो गईं । सरमन की औरत रो भी न सकी डंडेवाला पीछे था, जाँधों में डंडा घुसाने लगा । सरमन की औरत पूरी ताकत लगाकर चीखी – खसियाडडआ !''(२४)

उपर्युक्त सन्दर्भ में नारी का शारीरिक शोषण, वह भी समाज के रक्षक यानी पुलिस के द्वारा किया जाता है । जब नारी का शोषण रक्षक ही करे तो, नारी न्याय एवं सुरक्षा के लिए किसके द्वार पर जाए ? यह सवाल गंभीर समस्या की ओर निर्देश करता है । उपन्यास में कबूतरा जनजाति की औरतों का शारीरिक शोषण करना मानो सभ्य समाज के पुरूष–वर्ग के लिए जायज माना जाता है । उसके साथ मार–पीट करना तो आम बात हो जाती है । 'अल्मा' के हाथ पर गूँदवा दिया जाता है कि वह कबूतरी है । जिनकी कोई अहमियत नहीं है । जो पशु–तुल्य, भोग का साधन मात्र ही है । औरतों पर अत्याचार करना, मानो पुरूषों का जन्मसिद्ध अधिकार हो, ऐसा 'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास में प्रतित होता है ।

उपन्यास की नायिका रज्जो अपने ककाजू जेठजी के अत्याचारों की शिकार बनती दृष्टिगत होती है । जैसे रामदास बोलता है कि –'' इन नीच औरतों को तो मैं देख लूँगा । काट–काट के टुकडा पेंडा कर दूँगा, हाँ । कहते हुए उसने दाँती भींची और धरती पर बैठी रज्जों पर टूट पड़ा । लात, धूँसा, थप्पड़ ...

चुटिया पकड़ ली, जेठ बहू को पीट रहा है ! दारी, हड्डी चूरन कर देंगे हम । नाइन के घर बैठकें दिखा रही है कि ते कितनी नीच हो सकती है ! ऐ ? हमारी देहरी बैठकें इतेक रंडीपना कर पाएगी ते ? सो बात छुट्टा गाय की तरह फिरना चाह रही है ।''(२५)

इस प्रकार पुष्पाजी के अधिकांश उपन्यासों में नारी के शारीरिक शोषण की समस्या को उठाया गया है । जिन में मार-पीट करना, शारीरिक यंत्रणा देना आदि का वर्णन है । किन्तु प्रस्तुत समस्या की प्रस्तुती के माध्यम से समाधान का प्रयास भी किया गया है । लेखिका ने एक अन्य समस्या को अपने उपन्यासों में चित्रित करने का प्रयास किया है । नारी पर घरलू हिंसा एवं अत्याचारों की समस्या । जिसमें मुख्य रूप से या तो दहेज या अनुशासन का रूत्तबा कायम करने के लिए , नारी पर अत्याचार किए जाते हैं । जैसे 'चाक' उपन्यास में सारंग के द्वारा पति (रंजीत) के पौरूषत्व को ललकारने के कारण सारंग को पीटाता जाता है । उक्त समस्या से स्त्री अभिव्यक्ति की समस्या भी मुखरित होती है । जैसे सारंग के द्वारा अनशन सुनाने के बाद, रंजीत अपने पौरूषत्व को कायम रखने की वजह से सारंग के साथ मार-पीट करता है । -'' ले, दिखाऊँ मर्दानगी । देख मर्दानगी । तड़ातड थप्पड़ों की बारिश में घिर गई सारंग । चंदन बाप की टाँगों से लिपट गया, चाचाऽऽऽ.. चाचा, अम्मा को मत मारो । मत्त मारो चाचा ऽऽ...।''(२६)

स्त्री पर पुरूष का अनुशासन हो और अगर स्त्री महज की अनुशासन को बंधनकर्ता न हो तो, पुरूष अवश्य ही स्त्री को प्रताड़ित करता है । 'चाक' उपन्यास में रंजीत अपनी पत्नी पर मालिक भाव स्थापित करते

हुए, उसे प्रताड़ित करता है । जैसे - ''साली आ इधर । बाहर निकल बदकार । तेरी माँ को .. बहनचो... निकल !

रंजीत ने उछलकर सारंग पर झपट्टा मारा और चुटिया पकड़कर खींच लाए दरवाजे से बाहर ।

बेटी चो... मेरे हाथों इतनी मार खाई, फिर भी तेरी यह हिम्मत ।''(२७)

स्त्री पर घरेलू अत्याचारों की समस्या को 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास में भी चित्रित किया गया है । जिसमें प्रताप अपनी पत्नी रज्जो पर संदेह करके, उसके साथ मार-पीट एवं शारीरिक रूप से प्रताड़ित करने पर उतरू होता है । जैसे - ''सब्र उखड़ गया । मुँह से गालियाँ फुट पड़ी; - कुतिया, हम चले गए तो तेरे लिए हर दिन फवार का दिन हो गया ... । तमाम पाल लिए रंडी ने ।

वह जंगली बिल्ले की तरह रज्जो की ओर झपटा और उससे इस तरह टकराया कि अनाज के भरे बर्तन फूटने ले, वह पीछे की ओर गिरी । चूडियों भरी कलाई पर फूर्ती से खाट का पाया रख दिया और उस पर प्रताप खुद बैठ गया । दादा और पिता ने ऐसी ही सजा तो औरतों के लिए करागर बताई है ।''(२८)

पुष्पाजी ने 'अगनपाखी' उपन्यास में भी घरेलू हिंसा की समस्या को मुखरित किया है । प्रस्तुत समस्या उपन्यास में अजयसिंह अपनी पत्नी पर अनुशासन बरकरार रखने के लिए, उसके साथ मार-पीट करते है । जैसे - '' और कहने के बाद ही भरपूर थप्पड़ की आवाज आई ।

जेठ जी गाली बकने लगे – साली, हरामजादी, तू कह क्या रही है : आगे बोली तो जुबान खींच लूँगा ।''(२९)

इस प्रकार कहे तो पुष्पाजी ने नारी के शारीरिक शोषण के सम्बन्धित विभिन्न वारदातों को बाकायदा स्पष्ट एवं तटस्थता के साथ अपने उपन्यासों में प्रदर्शित किया है । जिसमें अधिकांशतः पुरूष-प्रधान समाज व्यवस्था के निषेधों से पीड़ित पुरूष, अपने अहम एवं पौरूषत्त्व की जूठी शान के खातिर स्त्री को प्रताड़ित करते हुए दृष्टव्य होते है । जिनके चलते मार-पीट करना, गाली-गलौच करना, शारीरिक अत्याचार करना आदि समस्याओं को चित्रित करके प्रबुद्ध लोगों की अति आधुनिक युगीन मुक्त विचारधारा पर करारा व्यंग्य भी किया है ।

५.५.२ बलात्कार की समस्या :

पुरूष अपनी यौन-लोलुपता की तृप्ति और विजातीय आकर्षण के कारण, नारी-जाति का सदियों से बलात्कारी शोषण करता आया है । पुरूष की सत्ता के चलते हुए भारतीय समाज में औरतों पर जो अमानुषी अत्याचार होते आये है, वह आज अपने आप में भी सभी सीमाएँ लांघ गया हैं । कहने को औरतों पर हो रहे अत्याचारों के विरूद्ध आवाज़े भी उठती हैं, लेकिन वह सिर्फ पानी में पत्थर फेंकने से उठती तरंगे मात्र हैं जो थोडी देर के बाद अपने आप शांत हो जाती हैं । नारी चेतना की परिचायिका तसलीमा नसरीन ने भी स्त्री अत्याचारों का विरोध करते हुए कहा है कि – ''घर में रह रही स्त्री भी तिरंतर बलात्कृत हो रही है और घर के बाहर रास्ते, या कार्यक्षेत्र, या महानिर्देशक के दफ्तर में भी

वह बलात्कृत होती है । स्त्री की सुरक्षा कहाँ है ? कहाँ जाकर खड़ा होने पर स्त्री के बलात्कृत होने की आशंका नहीं है । कहा है इस दुनिया में वह स्थान ?''(३०)

शारीरिक बलात्कार भी एक प्रकार का नारी-शोषण ही है । या युँ कहें कि नारी शोषण का सबसे भयानक षड्यंत्र है । पुरूष-प्रधान समाज में सदा से नारी दबाकर रखने का प्रयास किया गया है । पारिवारिक प्रतिष्ठा का बोझ स्त्री के कन्धों पर रखा जाता हैं । इन सबसे बढ़कर सतीत्व को बरकरार रखना स्त्री के लिए, महत्वपूर्ण माना जाता है । इन सारी जिम्मेदारी पर अगर नारी खरी नहीं उतर पाती है । तो परिवार और समाज से धिक्कार के योग्य समझी जायेंगी । लेखिका श्री गीता सोलंकी ने उक्त सन्दभे में लिखा है कि – ''धर्म और समाज जो चीज सबसें ज्यादा सँभालकर रखना सिखता है, वह है सतीत्व । इसे सँभाले रखने पर ही लड़कियों का समाज में सबसे ज्यादा मूल्य होता है । दुनिया में प्रचलित सभी धर्मों में लड़कियों से सतीत्व को सबसे ज्यादा महत्व दिया गया है । लेकिन किसी भी धर्म में पुरूष के लिए किसी तरह के सतीत्व का विधान नहीं है ।''(३१)

हमारा समाज एवम् प्राचीन धर्मग्रंथों में भी स्त्री को काँच की ऐसी गुड़िया माना गया है, जो पर पुरूष के स्पर्शमात्र से गिरकर बिखर जाती है । बचपन से ही रोपे जानेवाले इन संस्कारों के आधीन नारी ने अपने आपको दबाकर, ढाँककर रखा । बलात्कार स्त्री शरीर के साथ किया गया अपराध नहीं बल्कि उसके मन पर प्रभाव डालनेवाला कुकृत्य है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में बलात्कृत नारी को चित्रित करके, उनकी समस्या को प्रसारित किया है । उनके 'चाक' उपन्यास में नौकरी पैसा या कामकाजी नारियाँ असुरक्षित है । ऐसा उपन्यास की पृष्ठभूमि पर प्रतिबिंबित होता है । परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु नारियाँ घर की चार दीवारों से बाहर निकलती है । किन्तु मनोविकृत नरपीचाशियों की काम-लोलुपता के कारण बलात्कार का शिकार बनाकर कुण्ठित हती हैं । जैसे - ''एक बार ग्रामसेविका केन्द्र खुलवा लिया था । ग्रामसेविका बहनजी का निवास फत्ते की बैठक में ही था । बी.डो.ओ.आकर बलात्कार कर गया ।''(३२)

ऐसा नहीं कि सिर्फ नौकरी पेशा नारियाँ ही बलात्कार का भोग बनती है । ग्राँमांचलों के अंतगॅत खेत में काम करनेवाली नारी भी बलात्कार की शिकार बनती है । पारिवारिक राग-द्वेष के चलते भी नारी भोग्या बनकर, अपनी नियति कौंसती रह जाती है । जैसे 'चाक' 'उपन्यास' में सारंग बलात्कार की भोग्या बनते हुए, अपने-आप बाल-बाल बचाती है ।'' - दूसरे की पल सारंग का ब्लाउस पकड़ लिया गले से । फाड़ता चला गया । चीर-चीर कर डाला । सारंग की नंगी छातियाँ **....** उसने झटपट पल्ला ढक लिया । शैतान भाग गया ।''(३३)

वस्तुतः नारी के लिए पुरी दुनिया में सुरक्षित स्थान अप्राप्य है । नारी चाहे घर में रहे या घर से बाहर, उनके लिए बलात्कृत होना एक नियति बनकर रह गई है । तो कहीं नारी पारिवारिक सम्बन्धों की आड़ में भी बलात्कार का शिकार होती है । रिश्तों की अहमियता के झूठे

सम्बन्ध, अपने सतीत्व को बिखरने के लिए विवश करते है । जैसे 'इदन्नमम'' उपन्यास में मन्दा के दूर के रिश्तेदार मामा ही, उन पर बलात्कार जैसी घिनौनी हरकत करता है । मन्दा की सतर्कता के बावजूद भी कैलाश मास्टर, उनको अपनी हवश को भोग बनाना चाहता है । कि – ''मामा, पाँव छोड़ दो । छोड़ दो मामा !

नहींऽऽ... नहींऽऽ... नहींऽऽ... नहीं मामाऽऽ !

उसने लाते जोर–जोर से चला दीं, जितना बल था उतनी जोर से ।

...मगर अब की बार... अब की बार नहीं चूके कैलाश मामा पकड़ अधिक मजबूत । संसी से भी कठोर गुँजलक ।

वह मछली–सी छटपटाने लगी ।

बीमार देह प्रतिरोध करते–करते निरस्त हो गई ।

... और पूरा–का पूरा मरदाना शरीर मन्दाकिनी के ऊपर उलट पड़ा । वह चीख उठी, जैसे दीवार ढही है । आसमान टूटा है ।''[३४]

इस प्रकार मन्दा रिश्तेंदारी की आड में बलात्कार का भोग बनती है । सवाल यह खड़ा होता है कि आनेवाले समय में क्या परिवार में माँ–बहन सुरक्षित रह पायेंगी ? क्योंकि पाश्चात्य विचारधारा, अश्लील साहित्य और उन्मुक्त वातावरण से प्रभावित पुरूष–वर्ग क्या परिवार के सदस्यों को बक्सेंगा ? अगर ऐसा होता है तो, अवश्य ही सृष्टि का विनाश जल्द ही होगा ।

साम्प्रत समय में नारी का शारीरिक शोषण शैक्षणिक संस्थानों में भी होने लगा है । गुरू-शिष्य के पवित्र सम्बन्ध, अब यौन-लोलुपता के लांछन से लज्जित होता जा रहा है । तो कहीं मंदिर जैसे भक्तिमय और आध्यात्मिक केन्द्रों में प्रसाद के रूप में नारी को बलात्कृत कर दिया जाता हैं । आश्रम की पवित्र भूमि को काम लोलुपता से लांछित करनेवाले लंपट साधुओं की लीलाओं को लेखिका ने 'झूलानट' उपन्यास में प्रदर्शित किया हैं । उपन्यास में पारीछा-घट स्थित आश्रम के नैसर्गिक सौन्दर्य का वर्णन किया गया है । ऐसे आश्रम में एक लड़की मन की निर्मलता के उद्देश्य से पारीछा-घट आती है । किन्तु लंपट साधु की वासना का शिकार बनकर कुण्ठित होती है । जैसे - ''टीकमगढ़ के शेठ़ की बेटी आई थी यहाँ । बेचारी बाबाजी के चरण छूने मढ़िया में घुस गई । परसादी की इच्छा की अबोध ने । बारह साल की कच्ची उम्र और मनमोहिनी रूप । कली को मसल देने की उत्कष्ट कामना..... लँगाटे ढीला हो गया । देह में भरी वासनाएँ मन पर सवार हो गई । परसादी के बदले वीर्यदान !''(३५)

आज नारी वासनांध साधुओ से भी बलात्कार का शिकार बनती हैं । वस्तुतः समाज का हरेक पुरूष नारी को भोगना ही चाहता है । क्या नारी सिर्फ उपभोग की चीज-वस्तुएँ बनकर रह गई हैं ? जिसे पुरूष जब चाहे, तब भोग सके ! नारी पर हो रहे शारीरिक अत्याचारों का मुख्य कारण भी नारी ही है । क्योंकि नारी की सुन्दरता से आकृष्ठ पुरूष अपने आपे से बाहर होकर, बलात्कार जैसे जधन्य अपराध का आचरण करता है । 'अल्मा कबुतरी' उपन्यास की 'अल्मा' के लिए

सुन्दरता ही अभिशाप बन जाती है । जिसके चलते, उनका कदम-कदम पर शारीरिक शोषण होता है । जैसे कि - "... सारे कपड़े लड़की के बदन से फाड़कर अलग करना बलिष्ठ आदमी अल्मा की कुर्ती का गला पकडकर श्रीराम शास्त्री के आगे खींच लाया ।

धरती पर पड़ी अल्मा के सारे कपड़े चिथड़े-चिथड़े... और फिर बेपर्दे देह ...

सूरजभान तलाशी लेने के बहाने इस देह का रोम-रोम नाप चुका था । उसके साथी परसराम ने शरीर का नग-नग टटोला था । नंगापन पहली बार लगता है, बार-बार नहीं, अल्मा खड़ी की गई, समझ रही थी, खड़े होकर ज्यादा नंगी हो जाती है देह... । जो अंग छिपाने चाहिए, वे उघड़े पड़े हैं तो सिर झूकाकर भी क्या होगा ?"(३६)

'बलात्कार' नारी जीवन पर लगा हुआ ऐसा कलंक है, जो पूरी जिंदगी को अभिशापित कर देता है । स्त्री चाहे, कितनी ही कौशिश कर ले, लेकिन इस कलंक से मुक्त नहीं हो पाती । हमारा समाज बलात्कारी को सजा देने के बजाय बलात्कृता स्त्री को जीवनभर ताने देने में, उसे अपमानित करने में सुख का अनुभव करता है । बलात्कार का शिकार बनी स्त्री समाज की सहानुभूँति का पात्र होने के बजाय, समाज की धृणा और मनोरंजन का पात्र हो जाती है और अंततः या तो अपना मानसिक संतुलन खौ बैठती है या फिर अपना जीवन ही समाप्त कर लेती है । जबकि बलात्कारी खुलेआम सिर उठाकर, अपनी मर्दानगी पर इतराता फिरता है । नारी-जीवन के लिए इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है ?"

५.५.३ वेश्यावृति एक समस्या :

वेश्यावृति नारी-जीवन से जुडी ऐसी समस्या है, जो हर युग में प्रवर्तमान रही है । प्रेमचंदकालीन उपन्यासों से लेकर आज तक के आधुनिककालीन उपन्यासों में, इस समसया का विवरण किसी-न-किसी रूप मे होता रहा है । अधिकत्तर स्त्रियाँ अपनी खुशी से वेश्यावृत्ति को नहीं अपनाती । इसेक पीछे प्रायः पुरूषों की धोखेबाजी अथवा आर्थिक विवशता ही मुख्य कारण होते है । विश्व-प्रसिद्ध समीक्षक बर्टेण्ड-रसेलने भी इस सत्य का समर्थन करते हुए लिखा है -" पुरूष की भोगवादी दृष्टि ही नारी को वेश्या बनाती है । .. कोई भी नारी अपनी इच्छा से वेश्या का रूप स्वीकार नहीं करती उसके पीछे पारिवारिक - आर्थिक - सामाजिक कारण कार्य कर रहा होता है या पुरूष का मात्र उपभोग करके छोड़ देना ।"[३७]

गहराई से झाँकने पर ज्ञात होता है कि वेश्याओं का जीवन दुःख, पीडा, संत्रास और शोषनीय यातनाओं के अलावा कुछ भी नहीं हैं । समाज की पवित्र परिपाटी पर वेश्याएँ सदैव तिरस्कृत होती रही है । वेश्याओं को एक स्त्री या मानवी न समझकर, सिर्फ पुरूषों की काम-वासना शांत करने का साधन-मात्र माना जाता है । दरअसल वेश्याएँ जन्मजात रूप से इस व्यवसाय को अपनाती नहीं है । किन्तु आर्थिक दुर्बलता, सामाजिक रूप में पुरूषों के दबाव और पुरूषों की दोरंगी नीति के कारण, स्त्री वेश्या बनती है ।

पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में वेश्या समस्या पर अधिक प्रकाश नहीं डाला है । परंतु 'इदन्नमम', कही ईसुरी फाग और 'अल्मा-कबूतरी' आदि उपन्यासों में आंशिक चित्रण देखने को मिलता हैं । 'इदन्नमम' उपन्यास में बन्ने मास्साब की बेटी बिब्बन निम्न आर्थिक परिस्थिति से विवश होकर, न चाहते हुए भी वेश्यावृत्ति के व्यवसाय में कदम रखती है । जैसे कुसुमा भाभी कहती है कि - ''बिन्नू, पेट पापी होता है । हम तो यहाँ तक समझ गए हैं कि पेट की होरी बुझाने को आदमी अपना मांस तक खा जाता है ।

नहीं तो क्या बन्ने मास्साब की बिटियाँ, चीफ साब की भीतीजी धन्धा कर लेतीं ?''(३८)

पुरूष, स्त्री देह को उपभोग का साधन मात्र समझता है । जो जब चाहे थोडे से पैसे खर्च करके, स्त्री को भोग्या बनता है । पुष्पाजी ने 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में भूरी को वेश्या नारी के रूप में चित्रित किया है । जो आर्थिक उपार्जन के कारण वश अनेको लोगों को अपना शरीर प्रदान करती है । जैसे - ''आदमी की जिंदगी खोजने निकली थी, अरहर के खेतों में, खदानों में, थाने की कोठरियों मैं कैद होती रही ।

उसने समझ लिया मद को और खुद को लुटाना जरूरी है । राह पगडंडियों के खेतों-मैदानों के, गाँवपुरा के मालिकों की भूख नहीं रहेगी तो हम भी नहीं रहेंगे । खरपतवार को तरह उखाड़कर सुखाकर जला दिए जाएँगे ।''(३९)

वेश्या समस्या नारी जीवन का एक अभिशप्त अंग है । किसी भी समाज के लिए यह एक कलंक की बात है कि नारी को जीवन निर्वाह के लिए शरीर का सौदा करना पड़े । गांधीजी ने उक्त समस्या को खण्ड़ित करते हुए कहा है – ''मुझे यह मंजूर है कि पुरूष जाति का नाश हो जाये, मगर यह मंजूर नहीं कि भगवान की पवित्रतम सृष्टि को अपनी वासना का शिकार बनाकर हम पशुओं से भी गये बीते बन जाय ।''(४०)

एक ओर समाज के प्रबुद्ध और बुद्धिजीवी लोग प्रस्तुत समस्या की गंभीरता को ध्यान में रखकर, नारी को नरकमय संत्रासभरी जिंदगी से मुक्ति दिलाने का सामर्थ्य दिखलाते है । तो दूसरी ओर वहीं नर वेश्या स्त्री पर अपना अधिकार कायम रखने के लिए प्रयत्नशील भी होते है । पुष्पाजी ने 'कही ईसुरी फाग' में प्रस्तुत वेश्या समस्या पर पुनः विचार–विमर्श किया है । उनके अनुसार नारी सिर्फ उपभोग का साधनमात्र नहीं है । उन्हें भी शिष्ट समाज में स्थापित करना चाहिए । नहीं कि उन पर अधिकार स्थापित करना ! जैसे – प्रवीण अपने नरकीय जीवन के यथार्थ को अंकित करते हुए राजा से कहती है कि – ''हाँ मैं वेश्या हूँ । रानी नहीं । वेश्या किसी की पत्नी नहीं होती राजन्, सो किसी की गुलाम भी नहीं होती । वह अपनी मर्जी की मालिक आजाद स्त्री होती है । इस धरती की सबसे ज्यादा आजाद औरत । मेरा एक आप नहीं छीन सकते, क्योंकि मैंने अपनी मुद्राओं और सुख'सुविधाओं के बदले कुछ पल, कुछ घड़ियाँ या कुछ दिन आपको दिए हैं, जिंदगी नहीं बेची । जैसे कि एक पत्नी बेचती है, जिसे आप धर्म पत्नी कहते हैं ।''(४१)

मैत्रेयी पुष्पा, दरअसल नारीवादी लेखिका है । उन्होंने नारी–चरित्रों की विभिन्न समस्याओं को अलग–अलग दृष्टिकोण से परखने का प्रयास किया है । वेश्या समस्या का चित्रण उनके उपन्यासों में आंशिक मात्रा से हुआ है । किन्तु आंशिक चित्रण सजीव एवं यथार्थ रूप में हुआ है । पुष्पाजी ने 'इदन्नमम', अल्मा–कबूतरी और 'कही ईसुरी फाग' आदि उपन्यासों में वेश्यावृति की समस्या को चित्रित करके, भारतीय – समाज–व्यवस्था पर प्रहार किये है । उन्होंने समाज–व्यवस्था की नग्नता को प्रदर्शित करते हुए वेश्यावृति की समस्या को नारी की आर्थिक समस्या के साथ जोडा है । मतलब जब तक नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर न हो, तब तक वेश्यावृति की समस्या का समाधान असंभव –सा है, इस बात की पुष्टी भी की है ।

५.६ नारी स्वातंत्र्य की समस्या :

आज की महिला कथाकारों की कृतियों में स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तितत्व को स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है । आज के परिवेश में पति और पत्नी दोनों ही अपने–अपने व्यक्तितत्व को स्वतंत्र परखना चाहते हैं । पुरूष की भाँति स्त्री भी समाज में अपनी स्वतंत्रता स्थापित करना अपना अधिकार समझती है । रूढ़िवादी सामाजिक संस्कारों के प्रति अब नारी जागृत हो रही है । वह अपने व्यक्तितत्व की स्थापना का पूर्ण प्रयास कर रही है । अब नारी अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए समाज में आमूल परिवर्तन की कामना करती है । डॉ. एम् वेकेंटेश्वर लिखते है कि – ''नारी और पुरूष अपनी–अपनी जगह पूर्णत्व की खोज में

प्रयत्नशील हैं किन्तु खोज की हर दिशा उनके व्यक्तित्वों को खण्ड़ित कर रही हैं । परम्परागत वर्णनाओं से आज की नारी जैसे-जैसे मुक्त हो रही है, उसके सम्मुख नई-नई समस्याएँ उभर कर आ रही हैं ।''(४२)

मैत्रेयी पुष्पा ने नारी की विभिन्न समस्याओं को अपने उपन्यासों में उजागर किया है । उन्होंने नारी स्वतंत्रता की समस्याओं को विविध भागों में विभाजित करके प्रस्तुती दी है । जिनमें नारी की आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक और व्यक्तिगत स्वतंत्रता आदि बातों पर गौर किया गया है । पुष्पाजी ने 'चाक' उपन्यास में सारंग मुक्ति के लिए पति के साथ मथापची करती हुई चित्रित किया गया है । दरअसल नारी को क्या सिर्फ पशुतुल्य ही समझना चाहिए ? क्या नारी के लिए स्वतंत्र व्यक्तित्व की कामना करना अपराध है ? जैसे - ''जानवरों के बाद अगर किसी को खूँटे से बाँधा जाता है तो वे हैं आँगन लीपती, घर सहेजती, खेतों में काम करती औरतें । प्रौढ शिक्षा, नारी शिक्षा पर व्याख्यान देने से क्या फायदा ? यहाॅ तो बेटी का जन्म होते ही खेरापतिन दादी चंदना की कथा याद कराने लगती हैं कि इसको कितने और कहाँ तक पाँव बढ़ाने हैं । छोटी कौम से लेकर बड़ी जाति तक की औरतों की एक सी दशा । एक से बंधन । एक से कसाव है ।''(४३)

इस तरह नारी के उत्थान से सम्बन्धित विविध संस्थानों के अथाग प्रयत्न से आंशिक रूप में परिवर्तन अवश्य आया हैं । दरअसल परिवर्तन के नाम पर भी नारी की स्वतंत्रता छीन ली जाती है । कहीं नारी को आधुनिक एवं प्राचीनतम् मूल्यों की दूहाई के नाम पर परतंत्र बनाया जाता है । जिसके चक्कर काटते - काटते, नारी खुद अपना स्वतंत्र

व्यक्तितत्व खो देती है । जैसे 'इदन्नमम' उपन्यास में कुसुमा कहती है कि – ''बिन्नू हमें एक बात समजाओ, अरथाओं कि ये रिस्ते–नाते, सम्बन्ध और मरजाद किसने बनाई ? किसने सिरजी है बन्धनों की रीत ? जो नाम लेती हो उनने ? मनु–व्यास ने ? देवताओं ने कि राच्छओंने ? [४४]

आधुनिक एवम् प्राचीनकालीन बुद्धिजीवीओं ने बनाये नियमों और रीत–रिवाजों के चलते नारी आज भी परतंत्रता की आड़ में जीवन–बसर करती है । जिनके लिए स्वतंत्रता एक अभिशाप है । 'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास की सरस्वती देवी, जो परंपरागत रीत–रिवाजों और मान्यताओं के तहत, खुद को गुलाम समझती है । क्योंकि सांस्कृतिक परिवेश में भी स्त्री का सम्मलित होना एक जधन्य अपराध समझा जाता है । अतः उपन्यास में वह कहती है कि – ''फागें, स्वाँग नौटंकी देखने की नहीं करने की तमन्ना रही मेरी, बचपन से ही । मगर बचपन माँ–बाप के हवाले था । जवानी पति के हवाले हुई, हमारे मायके और ससुराल में नाटक, नौटंकी और फाग, सहर को औरतों के लिए नहीं बताया गया । अपराध भी है, पाप भी है ।''[४५]

हमारे समाज और प्रबुद्ध पाठकगण के सामने सवाल यह उपस्थित होता है कि क्या औरतें किसी भी अवस्था में स्वतंत्र नहीं है ? क्या वह एक मूक पशू के तुल्य ही है । इनमें कोई आशा–आकांक्षा निहित नही रही है ? ऐसे सवालों के जवाब लेखिका ने सरस्वतीदेवी के माध्यम से दिया है कि अतः नारी एक गुलाम ही है । इसके लिए महत्वकांक्षाओं की कल्पना भी अपराध ही है । वह न तो सांस्कृतिक परिवेश में, नहीं की

सामाजिक परिवेश में पुरूषों के समान है । सिर्फ पुरूषों की अनुजा बनकर गुलाम ही रहना सुयोग्य समझा गया है ।

सिर्फ ऐसा ही नहीं कि नारी ही खुद नारी स्वातंत्र्य की वकालत करे । यद्यपि जगत की कोमल प्रतिकृति के स्पंदनों को महसूस करते हुए पुरूष भी स्त्री मुक्ति के लिए अथाग प्रयास करता है । 'त्रिया हठ' उपन्यास में बरजोसिंह, स्त्री और खेती की तुलना करते हुए कहता है कि – ''औरत जात की रखवाली गाय भैंस की रखवाली नहीं हैं, जिसे खूँटे से बाँध दो और रस्से की मजबूती जाँच लो । जनी की निगरानी, खेती की निगरानी जैसे नहीं होती।''(४६)

नारी का जीवन विभिन्न मुसीबतों से धीरा रहता है । क्योंकि महाभारत का युद्ध नारी को लेकर ही हुआ । तो रावण के वंशजों की समाप्ती भी नारी को लेकर ही हुई । इस प्रकार किसी भी अच्छे और बूरे कार्य में नारी को दोषित ठहराया जाता है । ऐसी ही विडंबना से दुखी उर्वशी है । 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी का शारीरिक, मानसिक और आर्थिक शोषण किया गया हैं । सिर्फ इस्तेमाल की चीज–वस्तु समझकर उनका भोग किया गया है । अपने भाग्य को कोसते हुए उर्वशी कहती है कि – ''भगवान काहे के लाने बिटिया को जनम देता है ? वो नहीं जानत कि लड़की पैदा होकें कितों को विपदा में डार देगी ।''(४७)

प्रस्तुत सन्दर्भ नारी–जीवन की विडंबना के साथ उनकी परतंत्रता की ओर भी इंगित करता है । क्या नारी सिर्फ भोग्या के अलावा कुछ भी नहीं है ? पुरूष जब चाहे उसका उपभोग करे और पशु के समान,

निषेधों की खूँटी से बाँध दे । उपर्युक्त सनदर्भ में लेखिका ने यही समस्या को प्रस्तुत किया है । 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी की तरह 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवनमोहिनी भी मुक्ति के लिए छटपटाती है । वह चन्दन को समझाकर कहती है कि – ''चन्दर, रेशम पहनकर क्या करूँगी ? मुझे आदत भी कहाँ है किमती चीजें पहनने की ? जो चाहिए, वह मिला नहीं । चन्दर, कौन तोडेगा ये किले जैसी भींते ? कब मिलेगी इतनी सारी ताकत ।''(४८)

इस प्रकार पुष्पाजी ने अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम से नारी स्वातंत्र्य की समस्या को वाचा प्रदान की है । उन्होंने पुरूष की परंपरागत सोच के हथकण्डों से नारी को बाहर निकाल ने का प्रयास भी किया है । जो परतंत्रता के पिंजरे में बँध है । उस पिंजरे को तोड़कर बाहर निकल आने का आहवान भी किया है ।

५.७ स्त्री–पुरूष सम्बन्ध की समस्या :

आज भी हमारा भारतीय पुरूष–वर्ग अपनी परंपरावादी मानसिकता से उबर नहीं पा रहा है । पुरूष की दृष्टि में घर की चार दीवारी ही स्त्री का कार्यक्षेत्र है । उसका मानना है कि घर में पति की सेवा करना, बड़े–बुजुर्गों का आदर करना और बच्चों की देखभाल करना ही स्त्रियों का सबसे बड़ा कर्तव्य है । लेकिन आज की नारी अपने व्यक्तितत्व की स्वतंत्रता एवं समान अधिकार के प्रति सजग हुई है । अतः नारी अब विवाह जैसी धार्मिक क्रियाओं के बिना भी पुरूष के साथ सम्बन्ध स्थापित करती है । जिसे समाज मान्यता दे या न दे । किन्तु नारी के

लिए स्वच्छंदता ही स्वतंत्रता की उत्घोषक है । स्त्री-पुरूष सम्बन्ध के अन्तर्गत या तो समाज से मान्य सम्बन्ध स्थापित होता है । तो उसे विवाह के नाम से बाँधा जाता है । लेकिन अगर समाज की अनुमति के बिना सम्बन्ध स्थापित होता है, तो उसे अवैध सम्बन्ध की परिपाटी पर रखकर विरोध किया जाता है ।

५.७.१ पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या :

उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या का गांभीर्यता से चित्रण हुआ है । ज्यादात्तर दंपति सामाजिक और आंतरिक कारण वश एक दूसरे के प्रति मन-मुटाव रखते हुए दिखाई पड़ते है । पुष्पाजी के उपन्यासों में अधिकत्तर दंपति पारिवारिक और परंपरागत निषेधों को लेकर त्रस्त होते दिखलाई पड़ते हें ।

वर्तमान युग में पति-पत्नी के सम्बन्धों में तनाव-सा आ गया हैं । चाहे नारी नगरीय परिवेश रहती हो या ग्रामीण परिवेश में । क्योंकि नारी उत्थान के प्रवाह से पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता कुण्ठित हुई है फलस्वरूप पति-पत्नी के सम्बन्धों में उब वं कुण्ठा पैदा हुई है । पुष्पाजी ने 'चाक उपन्यास में उक्त मुद्दे की सामर्थ्यता के लिए समझूती दी है । क्योंकि सारंग की कामयाबी से रंजीत की अहम् भावना को ठेस पहोंचती है । अत: उसके पारिवारिक व्यवहार और दाम्पत्य जीवन में एक खायी बनती है । जैसे - ''ईधर रंजीत ने चौके में खाना-पाना, सारंग के हाथ की छुई चीजों का त्याग करना और रात को बाहर सोना... ऐसे ही दंड चुने हैं, जो उसे उसकी औकात बताते रहते हैं ।

संबंध-विच्छेद भी नहीं, उपेक्षा के नोकदार भाले पर सारंग को टाँगे रहना उन्हें ज्यादा संतोष देता है शायद ।''(४९)

इस प्रकार सारंग की कामयाबी रंजीत सह नहीं पाते, तो उसके साथ उपेक्षात्मक रवैया इख्तियार करते है । सारंग की तरह 'इदन्नमम' की कुसुमा भी पति-पत्नी के सम्बन्धों में पत्नी की उपेक्षा को व्याख्यायित करते हुए कहती है कि -''गलत बनाई हे मन्दा   एकदम पच्छपात से रची हैं ।'

बताओं तो अगिन साच्छी धरकें गाँठ बाँधने का क्या मतलब ? पति और पत्नी को साथी-सहचर कहें तो विरथा है कि नहीं ? कितेक उलटा है बिन्नू, बेअरथ ! यह सम्बन्ध बड़ा थोथा है । लो, एक तो खूँटे बाँधा पाँगुर, दुसरा सरग में उड़ता पंछी ढोर और पंछी सहचर नहीं हो सकते मन्दा... ।''(५०)

पति और पत्नी के सम्बन्धों में आयी कड़वाहट समझाते हुए डॉ. माधवी बागी लिखती है कि - ''विवाह अब एक धार्मिक या सामाजिक कर्म न होकर स्त्री-पुरूष की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति का एक सर्वमान्य साधन है । नारी अब पति को देवता स्वीकार करनेवाली और अपने व्यक्तितत्व को पति के व्यक्तितत्त्व में विलीन कर देनेवाली नहीं रही, अपितु उसने अपने व्यक्तितत्व को स्वतंत्र किया है । आर्थिक दृष्टि से वह पहले की अपेक्षा अधिक स्वतंत्र है । नारी का यह स्वतंत्र व्यक्तितत्व ही पति-पत्नी के बीच संघर्ष का उत्तरदायी है ।''(५१)

'इदन्नमम' की कुसुमा भी उपर्युक्त सन्दर्भ के अनुसार स्वतंत्र व्यक्तित्व के कारणवश अपने पति यशपाल से उपेक्षा का पात्र बनती है । परिणामतः पति के होते हुए भी अन्य पुरूष के साथ अवैध सम्बन्ध प्रस्थापित करती है ।

तो कहीं लेखिका ने ऐसे दृश्यों का चित्रांकन किया है । जिसमें पति-पत्नी के बीच में यदि कोई तीसरा व्यक्ति आये, चाहे वह पुरूष हो या स्त्री हो लेकिन उनके सम्बन्धों में विघटन अवश्य पैदा होता है । पत्नी की मौजुदगी में पति अन्य स्त्री के साथ अवैध सम्बन्ध स्थापित करे तो पति-पत्नी के बीच सम्बन्धों को लेकर जटिल समस्याएँ पैदा होती है । 'अल्मा-कबूतरी' उपन्यास की आनंदी भी उक्त समस्या से पीड़ित नारी है । जिसके पति मंसाराम कदमबाई कबूतरी से प्यार करता है । अतः आनंदी अपने परिवार की समस्या को ब्यान करते हुए कहती है कि - " जोधा, अब इस घर में तेरा बाप रहेगा या हम, काये से कि घर की पटरानी बनने कदमबाई कबूतरी आ रही है । बेटा, अब तुम छोटे बारे नहीं । पोल-पोस दिए । माँ का धरम निभ गया है बेतवा मइया तू ही आँचर देना ।"(५२)

महानगरीय जीवन में इस तनाव की सीमा तलाक तक पहुँच जाती है । पुष्पा जी का 'विजन' उपन्यास महानगरीय परिवेश में लिखा गया है । जिसमें डॉ. आभा और डॉ. मुकुल पढ़े-लिखे, समझदार दंपति होने के बावजूदभी, उनके सम्बन्धों में विच्छेद होता है । क्योंकि आभा, डॉ. मुकुल की अह्म भावना से त्रस्त होकर डायवोर्स की माँग करते हुए लिखती है कि - "मुकुल, आई वांट अ डायवोर्स । आई वांट डायवोर्स ।

आई वोट डायवोर्स .... मैं तलाक चाहती हूँ । .... क्योंकि कोई कितना ही प्यारा क्यों न हो, अगर धोखा देता है तो... कोई कितना ही अपना क्यों न हो, अगर यंत्रणा देता है तो.... मुकुल, किसी को हक नहीं कि दूसरे को ऐसा सदमा दे कि उसका संतुलन बिगड़ने लगे ।''(५३)

इस प्रकार नारी आर्थिक दृष्टि स्वतंत्र होने से, अब पुरूष की सत्ता में गुलाम रहना पसंद नहीं करती । परिणामतः ऐसे वारदातों में पति-पत्नी के सम्बन्धों में विच्छेद होता है । तो कहीं अनमेल विवाह के कारण पति-पत्नी के सम्बन्धों को लेकर गंभीर समस्या उत्पन्न होती है । जैसे 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवनमोहिनी का ब्याह पागल विजयसिंह के साथ सम्पन्न होता है । इस प्रकार पागल पति के साथ रहकर भुवन सुखमय संसार की कामना कैसे कर सकती है । इसीलिए उनके दाम्पत्य जीवन में पति का सहवास अप्राप्य रहता है । फलस्वरूप उनके सम्बन्धों में एक प्रकार का खलापन रहता है । अपनी अम्मा को समझाते हुए भुवन कहती है कि - ''मेरी दुनिया दुसरी जनियों जैसी नहीं । पति की कमजोरी जनी की लाचारी बन जाती है, फिर इस मामले में सहाय भी कौन करे ? एक ही गली बचती है - आदमी जैसा भी है उससे मिलकर रहो या फिर अलग होकर जिओ ।''(५४)

तो कहीं ग्रामीण परिवेश में नारी के सौन्दर्य को लेकर, पति-पत्नी के पवित्र सम्बन्धों में मन-मुटाव होता है, क्योंकि पुरूष सौन्दर्य की ओर आकर्षित होता है । उन्हें सुदरता के साथ विशेष प्रकार का लगाव, प्रेम और संतृष्टि का आभास रहता है, जिसके चलते नारी की करूपता ही उनके दाम्पत्य जीवन के लिए अभिशाप सिद्ध होती है ।

पुरूष सौन्दर्य से मोहित होकर करूपा पत्नी की उपेक्षा करता है । जैसे – 'झूलानट' उपन्यास में शीलो की असुन्दरता, उनके दाम्पत्यजीवन के विच्छेदन का प्रमुख कारण बनता है । अतः सुमेर के द्वारा शीलो की उपेक्षा करना स्वाभाविक लगता है । जैसे सुमेर, अम्मा से कहता है कि – "ठंडे दिमाग से सोचो, तुम्हारी छः उँगलियाँवाली कल्लू बहू मेरे दोस्त की रोटी परसोने ही आ जाती, तो वह कल के दिन मुझे बोलने न देता । काले गोरे दो रंग ... पर तुम्हारी बहु तो नीली है, बैंगनी ।"[५५]

शीलो की तरह, 'बेतवा बहती रही' उपन्यास की गजरा भी पति–पत्नी के सम्बन्धों की समस्या से दुखित नारी है । गजरा की करूपता अपने विवाहित संसार को तहस–नहस करती है । फलस्वरूप, गजरा का पति बैरागी उन्हें, छोड़कर सन्यासी हो जाता है । पत्नी की असुन्दरता और दोस्तों का मजाकीया रवैया, पति–पत्नी के सम्बन्धों में दरार पैदा करने के लिए जिम्मेदार होते है । जैसे – "पाँच साल बाद गौना हुआ । दुल्हन विदा हो आयी – मगर चने के पेढ़ी–सी बौनी । सीधे हाथ में पाँव की जगह छः उँगलियाँ । ऊपर से अमावसी रंग ।

यार–दोस्त हँसने लगे । खूब खिल्ली उड़ी । जिधर भी बैरागी पाँच धरते, उन्हें देखते ही लोग पत्नी की चर्चा छेड़ देते । रोजाना दो–चार वाक्य कानों को छेद ही जाते ।"[५६]

इस तरह पत्नी की असुन्दरता या करूपता भी पति–पत्नी के सम्बन्धों को विच्छेद करते हैं, ज्यादात्तर पुरूष–वर्ग की चाहना होती है कि उनकी पत्नी सुन्दर और सुयोग्य हो । किन्तु अधिकत्तर किस्सों में

स्त्री की करूपता उनके दाम्पत्य जीवन में अवरोध पैदा करती है । पुष्पाजी ने 'झूलानट' और 'बेतवा बहती रही' दोनों उपन्यासों में पत्नी की असुन्दरता के कारण वैवाहिक जीवन की असफलता को प्रस्तुत करके, पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या को प्रदर्शित किया है ।

निष्कर्षतः कह सकते है कि आधुनिक विचारधारा का प्रचलन पति-पत्नी के दाम्पत्य-जीवन की असफलता का द्योतक प्रमाणित होता है । क्योंकि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नारी चरित्र पुरूष प्रधान सत्ता के तले जीवन-बसर करना कतिपय स्वीकार नहीं करते है । परिणाम स्वरूप, दाम्पत्य-जीवन में दरारे, विच्छेद रिक्तता की समस्या उत्पन्न होती है । पुष्पाजी ने भी पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या को चित्रित किया हैं । जिससे आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न, नारी की असुन्दरता और अन्य स्त्री के साथ पुरूष का सम्बन्ध या अन्य पुरूष के साथ स्त्री का अवैध सम्बन्ध; आदि तथ्यों के आधार पर पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या का चित्रण किया गया है ।

५.७.२ स्त्री-पुरूष के अवैध या अनैतिक सम्बन्धों की समस्या :

मनुष्य के पारिवारिक आकर्षण-विकर्षण का आधार लैंगिक है । मानव समाज में रहता है और समाज ने उसके निमित कुछ बंधन निश्चित किये है । सभ्यता के विकास ने काम-वासना की तृप्ति पर कठोर नियंत्रण लगा दिये है । मनुष्य ने नर-नारी की पाशविक सहज प्रवृतियों पर रोक अवश्य लगायी हैं । अतः यौन आकर्षण की जटिल समस्या का प्रादुर्भाव हुआ है ।

सामान्यतः मानव समाज में रहकर शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति समाज की नैतिक मान्यताओं से प्राप्त पात्र से करता है । परंतु कतिपय किस्सों में, वह अन्य स्त्रियों अथवा पुरूषों से शारीरिक सम्बन्ध प्रस्थापित करता है । तो उसे अवैध या अनैतिक सम्बन्ध की व्याख्या में व्याख्यायित किया जाता है ।

समकालीन नारीवादी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास साहित्य में नर-नारी के अवैध सम्बन्ध की समस्या को उजागर किया है । एक ओर यौन-क्रांति के माध्यम से नारी अभ्युत्थान का कार्य किया गया है । तो दूसरी ओर प्रस्तुत नारी उत्थान का कार्य अवैध सम्बन्ध समस्या का जन्मदाता बनता है । उक्त समस्या से पीड़ित नारी को परिवार एवं समाज की अवहेलना का शिकार होना पड़ता है ।

मैत्रेयी पुष्पा ने 'चाक' उपन्यास में स्त्री-पुरूष के अवैध सम्बन्ध का चित्रण किया है । पांचन्ना बीबी और मेहताबसिंह के अनैतिक सम्बन्ध को चित्रित करते हुए, लेखिका ने विधवा की यौन सम्बन्धी समस्याओं को भी प्रस्तुत किया है । जैसे - ''पर जवानी के खेल पहरे क्या, कैदें क्या ? सात परदो को फाड़कर जगता नगला के मेहताबसिंह से आँखें लडा बैठी । सन्नु फकीर कहता था - उसने अपनी आँखों से देखी - मेहताबसिंह के संग ऐसे जुटी थीं, ज्यो जुग-जुग की प्यासी हों । एक-एक बूँद सोखने को उतावली ।''(५७)

पांचन्ना बीबी और मेहताबसिंह का अनैतिक सम्बन्ध सामाजिक दुराचार के रूप में परिणत होता है । फलस्वरूप पांचन्ना बीबी को

शारीरिक यातना के साथ मौत की सजा मुकरर होती हे जैसे – ''चिमटा आग में दहकाया और उन लाल जलती हुई लोहे की पत्तियों को बड़े सहारे से नथिया भंगिन ने पांचन्ना बीबी की छातियों की काली जगह पर रख दिया – चूचियाँ दाग की गईं । सब निश्चिंत हुए, अब न फूटेंगी जवानी की गुद्दियाँ । बहुत फड़कती थी । पांचन्ना बीबी पौहे–पसु की तरह दाग दी गईं कि जिंदा मर गईं ।''(५८)

प्रस्तुत उपन्यास में प्रौढ़ा कलावती चाची का अवैध शारीरिक सम्बन्ध केलासीसिंह पहेलवान से स्थापित होता हे । सामाजिक मान्यताओं की दृष्टि से अनैतिक सम्बन्ध कहा जाता है । किन्तु कलावती चाची यौन सम्बन्ध के जरिए केलासीसिंह में पौरूषत्व जाग्रत करती है । आगे चलकर सारंग ही उक्त सम्बन्ध से गुन्हेगार ठहरायी जाती है । जैसे कलावती चाची कहती है कि – ''मइया ! इतनी खुस तो मैं तब भी नहीं हुई थी, जब पहली बेर रिसाल के दादा .... । हार और जीतकर आनंद में डुबो लिया । रस ही रस फिर तो । ए मेरे भगवान, ऐसा दिन भी आना था मेरी जिंदगानी में ?''(५९)

तो कहीं उपन्यास की नायिका सारंग, अपने पति रंजीत की क्रूरता और संकीर्ण मानसिकता से ऊबकर एक शिक्षक श्रीधर से अवैध सम्बन्ध जोड़ती है । जैसे – ''लहरों पर लहरें ! अपने आप को तोड़कर श्रीधर को जिता रही है । उनकी नस–नस में अपना सत्त भर दे रही है । उनकी देह के रोम–रोम में बहती पीर सोखे ले रही है । होठों के बीच ताप की ध्वनियाँ... श्रीधर को रस–कलश पिलाकर रिता डाला ।''(६०)

श्रीधर और सारंग का अवैध सम्बन्ध, सारंग के दाम्पत्य जीवन को तहस-नहस करता है । दोनों के अवैध सम्बन्ध से रंजीत मानसिक तौर से त्रस्त होता है । सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाने के लिए खूँखारूपन अपनाकर, सारंग को संत्रस्त करता है । जैसे - ''हाथ में दोनाली बंदूक ! ललकार रहे हैं, साली आ इधरे । बाहर निकल बदकार । तेरी माँ को... बहनचो.. निकल ! आ !'

रंजीत ने उछलकर सारंग पर झपट्टा मारा और चुटिया पकड़कर खींच लाए दरवाजे से बाहर ।

बेटी चो... मेरे हाथों इतनी मार खाई, फिर भी तेरी यह हिम्मत ! परायी लुगाई को.. साले ठौर मार दूँगा अभी, चाहे फाँसी चढ़ जाऊँ । फाँसी का डर नहीं है ।''(६१)

दरअसल, सारंग की घुटनभरी जिंदगी का जिम्मेदार ही अवैध है । परिणाम स्वरूप पति-पत्नी के सम्बन्धों की समस्या का उद्‌भव भी होता है । उक्त समस्या से त्रस्त नारियों की मन:स्थिति को लेखिका ने बड़े मार्मिक ढंग से चित्रित किया है ।

मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' उपन्यास में ग्रामीण जीवन के अवैध यौन-सम्बन्धों की समस्या का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है । मंदाकिनी की माँ प्रैम और रतन यादव के अनैतिक सम्बन्ध की चर्चा सूक्ष्मता के साथ की गई है । प्रैम एक तरह से विधवा होने के बावजूद भी उन्मुक्त यौन सम्बन्ध स्थापित करके, नारी शोषण की समस्या को गतिमान बनाती है । आखिरकार रतन यादव के साथ भाग जाती है । जैसे -

''हम ऐन दु:ख समझते थे उसका, पर जीजा के संग ऐल–फैल की आजादी तो दे नहीं थे । अपनी बाखर में रंगरलियाँ तो नहीं रचाने देते । ज्वानी जोर मार रही थीं रंडी थी तो मोंड़ी के सामने ही बहनोई के संगै ...।[६२]

प्रैम का उन्मुक्त अनैतिक सम्बन्ध ही उनके शारीरिक, आर्थिक एवम् मानसिक यंत्रणाओं के लिए प्रमुख कारण बनता हैं । रतन यादव के बहकावे में आकर जायदाद के लिए केस दाखिल करती है । किन्तु जब ममता का ज्वारा उभरता है । तो सब राग–द्वेष को भूलकर संतान के लिए चिंतित हो जाती है । परिणामत: रतन यादव की यंत्रणाओं को भुगतते हुए शोषित नारी बनकर रह जाती है । जैसे – ''प्रैम केस वापस लेने की बात करती है; सो रस्सों से पीटते हैं कसाई । पीठ पर नीले–काले निशान लुहारिन ने खुद देते हैं । हत्यारे रोटी तक को तरसाते है । उन्ना कपड़ा तक नहीं देते पहनने को ।''[६३]

इस प्रकार प्रैम का शारीरिक एवं मानसिक का प्रमुख कारण अनैतिक सम्बन्ध है । जिसके चलते प्रैम पूरी जिंदगी यातना और पीड़ा को झेलती रहती है । उपन्यास में ''कुसुमा'' के अवैध सम्बन्ध की समस्या को भी चित्रित किया गया है । दरअसल कुसुमा, एक त्यक्ता और अवैध सम्बन्ध से पीडित नारी चरित्र है । 'इदन्नमम' उपन्यास में कुसुमा अपने पति यशपाल की क्रुरता का भोग बनती है । पति के उपेक्षात्मक व्यवहार से तंग आकर, अपने छोटे ससुर अमरसिंह (दाऊजू) से अवैध यौन सम्बन्ध स्थापित करती है । कुसुमा का अनैतिक सम्बन्ध सामाजिक मर्यादा को तोड़कर गर्भवती के रूप में परिणत होता है । यधपि बच्चे का जन्म कुसुमा के लिए शोषण का द्वार अवश्य खोलता है । शोषित होकर घर

में अवहेलना का पात्र भी बनती है और शारीरिक यंत्रणाओं का शिकार भी । जैसे ''अब नहीं कर रहे नीत-अनीत का ख्याल ? इस बदफैल ने इज्जत-आबरू, मान-मर्यादा धर दी धोकर ! तुम हो कि बन रहे हो उकसे ही पैरोकार !

''खून पी जाऊँगा इस दुष्टिनी का । या पीट-पीटकर गाँव से बाहर कर दूँगा कुलटा को ।''(६४)

कुसुमा का अवैध यौन सम्बन्ध ही, उनके शारीरिक शोषण का प्रमुख कारण बनता है । जिसके चलते परिवार और समाज से तिरस्कृत होती है । उपन्यास का अन्य नारी पात्र लीला राउतिन के अवैध सम्बन्ध की समस्या को प्रस्तुत किया गया है । अवैध यौन सम्बन्धों की आड़ में लीला राउतिन का शारीरिक एवं आर्थिक शोषण कदम-कदम होता दिखाया गया है । जैसे - ''जब ईमान-धरम मिट जाता है तब ऐसा ही दुलमुल हो जाता है आदमी । उसे साफ रास्ता नहीं सुझाई देता । अपने साथ न्याय कर पाता है न दूसरों के साथ । अभिलाख ने अपनी खास स्त्री को तो धोखे देने से बख्सा ही नहीं । लो, उसकी लीला राउतिन को राखें हैं । कुकरम नहीं है यह, या अधरम नहीं है ?''(६५)

अंत तक लीला राउतिन एक शोषित, पीडित और कुण्ठित नारी चरित्र के रूप में उपन्यास की पृष्ठभूमि पर उभरती है । दुसरा अनैतिक यौन सम्बन्ध अहिल्या और जगेसर ठेकेसर ठेकेदार का चित्रित हुआ है । दरअसल विध्य पहाडियों की मजदुरिन औरतों का ठेकेदार और मालिक वर्ग शारीरिक शोषण करके मानसिक यंत्रणाएँ देना अपना अधिकार

समझते है । फलस्वरूप मजदुरिन औरतें यौन सम्बन्धी गंभीर बीमारियों से त्रस्त होकर मौत की शरण में जाती हैं । जैसे - ''साली हराम की औलाद ! देख हमारी बाँहे ! हमारे हाथ ! हमारे होंठ ! जे बीमारी कितै से आई ? कौन से यार ने दिया है जे रोग ? तेरे कित्ते खसम.... दूध पियतन ही सीख लिया सब कुछ...[६६] तुलसिन भी बेटी की समस्या को ब्यान करते हुए कहती है । ...'' ओ ठेकेदार ! बता... जै तो बता, हमारी मोंड़ी ने तो तोय दै दई बीमारी ! लगा दऔ रौग ! पर अहिल्या कों .. अहिल्या कों की ने लगा दई प्रानलेवा दिकऽ ! की ने.. ।''[६७]

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में कुसुमा-दाऊजू, अभिलाख-लीला राउतिन, और जगेसर - अहिल्या आदि के यौन सम्बन्ध की समस्या को विश्लेषित किया है । मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' उपन्यास में मुख्य रूप से अवैध यौन सम्बन्धों की समस्या पर प्रकाश डाला गया है । लेखिका ने प्रस्तुत समस्या का गहराई से चिन्तन करके प्रबुद्ध पाठक गण के सामने प्रस्तुत किया है ।

पुष्पाजी के अन्य उपन्यास 'झूलानट' में ग्रामीण जीवन में स्थित अवैध यौन-सम्बन्ध की समस्या का चित्रांकन हुआ है । उपन्यास की शीलो एक त्यक्ता नारी है । पति के अवहेलनापूर्ण व्यवहार से कुण्ठित होकर देवर बालकिशन के साथ अवैध यौन सम्बन्ध जोडती है । परिणाम स्वरूप लोगों के तानें और सामाजिक प्रतिष्ठा के नाम पर शीलो का मानसिक शोषण किया जाता है । व्यवहारूपन को प्राधान्यता देकर समाज, शीलो के साथ ज्यादतीयुक्त हथकण्डें अपनाता है । जैसे

बछिया के नाम पर शीलो पर परिवार एवं समाज के लोग परंपरावादी रीति-रिवाजों से छलने का प्रयास करता हैं ।'' - 'बछिया होगी ।' ऐलान अम्मा का । नहीं तो गाँव के लोग; बिरादरी वाले पूछेंगे नही' कि सुमेर की दूल्हन बालकिशन की घरवाली कैसे हुई ? बछिया पुन्न होगी, पंडित मतंर पढ़ देगा ।''(६८)

उपन्यास की अन्य गौण नारी चरित्र विमली जिज्जी के अवैध यौन सम्बन्ध का चित्रण देखने को मिलता है । लेखिका लिखती है कि - ''विमली जिज्जी, उन्होंने एक नहीं, दो-दो आदमी वश में कर रखे हैं - पति के अलावा गाँव के लेखपाल जी ।''(६९)

नारी का अनैतिक सम्बन्ध मूलतः अबूझ कामना और सहानुभूति की पूर्ति ही है । उसके अलावा सिर्फ भोग्या समझकर उनका शारीरिक एवं मानसिक शोषण ही किया जाता है । ऐसा दृष्टिगत दृष्टांत 'झूलानट' की शीलो है, जो बालू के साथ अनैतिक सम्बन्ध जोड़ती है । फलस्वरूप पूरी जिंदगी सम्बन्धों से उत्पन्न होनेवाली समस्या से जूझना दुष्कार्य हो जाता है । अंत तक परिवार एवं समाज के दृष्टों से लडते-लडते खुद के अस्तित्व को जोखेम में डालती है । इसीलिए उक्त सम्बन्ध नारी के लिए शारीरिक शोषण की समस्या बनकर रह जाता है ।

लेखिका ने 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में भी इसी समस्या को सजीवता से चित्रित किया है । जिसके अंतर्गत कदमबाई और मंसाराम के यौन सम्बन्ध से कदमबाई गर्भवती बनती है । गर्भवती कदमबाई पर कज्जा लोग शारीरिक अत्याचार करना अपना अधिकार समझते है ।

जैसे – ''गर्भ के दिन कैसे निभा लिए ? भारी गगरी सा पेट लेकर मोठ से महुआ लाना आसान नहीं था, पर रोजी–रोटी का सवाल था । दो जीवों का आहार जुटाना था । भुख ने बेशर्मी पैदा कर दी– बस रूकी खड़ी थी । पहली सीढ़ी पर पाँव ही रखा कि बस मैं से आवाजें उठीं – कबूतरी है, कबूतरी ! गाड़ी में बच्चा पैदा कर देगी । अरे नहीं, नहीं, सब ढोंग है । घाघरा खुलवाओ । पेट पर कपड़ा बाँध रखा होगा बड़ी प्रपंचिन औरतें होती हैं ये ।''[७०]

उच्छृंखल अनैतिक सम्बन्ध स्थापित करने में नारी के लिए सहायक भूमिका निभाता है । किन्तु स्वच्छंदता की आड़ में नारी का शोषण अवश्य होता है । जिसका उदा. कदमबाई है, जो मंसाराम की रखैल बनकर, राणा को जन्म देकर समाज की उपेक्षा का शिकार होती है । उनके लिए शोषण ही नियती बनकर रह जाता है ।

'अगनपाखी' उपन्यास में भुवन के माध्यम से प्रस्तुत समस्या का चित्रांकन हुआ है । दरअसल भुवन का अवैध सम्बन्ध, अपनी बड़ी बहन के लड़के चन्दर के साथ आवेगात्मक रूप में प्रस्थापित करती है । परिणामत: शोषनीय उपहार को अंत तक भुगतना पड़ता है । क्योंकि भुवन और चन्दर के सम्बन्धों को लेकर नानी परेशान हो जाती है । समाज के आततायियों से लड़ने में अक्षम नानी, भुवन का ब्याह पागल विजयसिंह से सम्पन्न करती है । जिसके चलते भुवन विभिन्न यातनाओं को झेलकर, स्त्री जाति के अस्तित्व को खोजती रहती है । नानी ने भुवन ब्याह जबरदस्ती विजयसिंह से करवाया था । फलस्वरूप अनमेल

विवाह के साथ मानसिक असंतोष की समस्या भी उत्पन्न होती है । जैसे –' ये गहनें धरो चाहे लौटा दो, लाखों के होंगे , पर एक खरी बात सुन लो, भले टका की सही, । मैं वहाँ जाने वाली नहीं । पता है तुम्हें, पर मेरे मुँह से सुन लो, वह सिंरी है, पागल ।

सुख साकों पर बिक जाऊँ ? पागल की सेवा करना सुख साके होता है तो किसी पागलखाने में नौकरी कर लेती ।''(७१)

इस प्रकार कहे तो मैत्रेयी पुष्पा के ग्रामोंचल परिवेश में लिखे गये उपन्यासों में स्त्री–पुरूष अनैतिक सम्बन्धी समस्या पर अपना मंतव्य प्रस्तुत किया हैं । ऐसे सम्बन्धों की समस्या का विवरण प्रकाशित हुआ है । 'चाक' में कलावती चाची - केलासीसिंह, पांचन्नाबीबी - मेहताबसिंह, सारंग और श्रीधर मास्टर, 'इदन्नमम' में कुसुमा–दाऊजू, अभिलाख - लीला राउतिन, जगेसर - अहिल्या । 'झूलानट' में शीला–बालकिशन । अगनपाखी में भुवन–चन्दर आदि के अनैतिक समबन्ध की समस्या को चर्चित किया गया है । परंपरा को विध्वंश करने की प्रतियोगिता में अधिकांश नारियाँ सफल हुई है । किन्तु सफलता का हर्ष उल्लास क्षणिक होता है । यद्यपि अवैध सम्बन्ध को समाज की दृष्टि से अनैतिक घोषित किया जाता है । अतः अवैध यौन सम्बन्ध से पीड़ित नारियों का समाज और पुरूष–वर्ग अंत तक शारीरिक एवं मानसिक धरातल पर शोषण ही करता है । इस प्रकार उक्त समस्या पर लेखिका ने अपने उपन्यासों में प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत की है ।

५.८ समानता और न्यायिक अधिकारों की समस्या :

मानव जाति की उत्पति से लेकर आधुनिक युग की दहलीज तक दृष्टिपात करे तो, स्त्री-पुरूष एक दुसरे के पूरक घोषित किय गऐ है । किन्तु बदलते परिवेश ने पूरकता का ह्‌ास करके पुरूष को सर्वोपरि प्रस्थापित कर दिया है । जिसके चलते पुरूषों की सत्तात्मक मनोवृत्ति के हथकण्डों में नारी दमित हुई है । फलस्वरूप स्त्री-पुरूष समानता की भावना का 'उपहास' हो गया है । परिणामतः नारी आज भी असमानता की झंझिरों में बँध कर रह गई हैं ।

पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित प्रबुद्ध चिंतकों ने स्त्री-पुरूष समानता और समान अधिकारों की समस्या को पुनःउजागर करने का प्रयास किया है । किन्तु आज भी उक्त समस्या एक दिमक की तरह समाज को खायें जा रही है । भारतीय संविधान २६ जनवरी १९५० को क्रियान्वित किया गया है । इसमें स्त्री और पुरूष दोनों को कानूनी समानता प्रदान की गई है । भारतीय संविधान के १५ वें अनुच्छेद में स्पष्ट घोषणा की गयी है कि - ''राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा ।''[(७२)] किन्तु परंपरागत मान्यताओं एवम् पुरूषों के अह्‌म की शिकार नारी ही बनती है । फलस्वरूप नारी समानता और अधिकारों से वंचित रही हैं । प्रस्तुत समस्या का व्याप इतना बढ़ा है कि इनका उन्मूलन करना असंभव - सा जान पड़ता है ।

नारी चरित्रों की वकालत करते हुए मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में स्त्री समानता और अधिकारों की जटिल समस्याओं को स्थान दिया है । पुष्पाजी के ज्यादात्तर उपन्यासों में नारी को विद्रोही स्वरूपा के रूप में चरितार्थ किया गया हैं । 'चाक' उपन्यास में लेखिका ने नारी की न्यायिक समस्या के प्रश्नों का प्रतिपादन किया हैं । दरअसल स्त्री–पुरूष समानता की बातें करनेवाले प्रबुद्ध विचारक जब नारी का न्यायिक प्रश्न उठाते है । तब नारी के लिए हीन भाव प्रदर्शित करते है । लेखिका ने पुरूषों की षड्यंत्र भरी सोच को परास्त करते हुए सारंग के माध्यम से अपने विचार प्रस्तुत किए है । – ''चेन की साँस तब लूँगी जब हत्यारे को फाँसी या जनमकैद होगी । क्योंकि मुझे लगता है, मेरी बहन की मौत नहीं, उसका अपमान हुआ है । कोई मुझे बताए कौन–सा ऐसा कसूर कर दिया था कि ... और मौत की सजा पर गाँव गहरी नींद सोता रहा पर ऐसा तो नहीं था कि उस समय एक कुत्ता भी न निकला हो वहाँ से, पर सब चुप लगा गए ! गवाही के नाम पर सन्नाटा !''[७३]

उपन्यास में लेखिका ने नारी के न्यायिक पक्ष के प्रश्नों को सामर्थ्यता से प्रस्तुत किये हैं । आज भी विश्व के किसी समृद्ध देश की पारिवारिक धरात्तल को झाँकने पर नारी न्याय के नाम ढकोसला ही दृष्टिगत होता हैं । लेकिन लेखिका ने अपने उपन्यास में उक्त समस्या को दिखावे के आधार पर नहीं, किन्तु यथार्थ की परिसीमाओं पर आँकने का प्रया किया है । जिससे पाठक गण विवश होकर, उक्त समस्या पर सोचने में मजबूर होते है ।

मूलतः नारी परिवार की मुख्य धूरी के समान है । अपना घर बसाना और परिवार की भौतिक सुविधा एवम् समाज की एक सांस्कृतिक ईकाई बनकर रहना, नारी की जिम्मेदारी है । किन्तु पुरूषों की सोच को लेकर, नारी को समान नागरिकता के रूप में प्रतिपादित नहीं किया जाता है । फलस्वरूप समान अधिकारों से वंचित रहना पड़ता हैं । पुष्पाजी के उपन्यासों में उल्लेखित समस्या को मुखरित किया गया है । 'इदन्नमम' उपन्यास में पारिवारिक एवम् संपत्ति अधिकारों की समस्या पर चिंतन किया गया हैं । आलोच्य उपन्यास में नारी की अवहेलना पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है । कुसुमा धारा दाऊजू से अवैध यौन सम्बन्ध स्थापित करने के कारण, उसे जायदाद-संपत्ति से बेदखल करने की चर्चाएँ होने लगती है । वास्तविक रूप में कुसुमा का अधिकार पारिवारिक संपत्ति पर बाकायदा है ही । किन्तु अवैध रूप में संतान को जन्म देने के कारण नारी अधिकारों की समस्या प्रस्तुत होती हैं । जैसे कुसुमा कहती है कि - '' रही हिस्सा-बाँट की बात, सो निसाखातिर रहो, हम तुम्हारा कुछ नहीं बँटाएँगे । हमारे कुँवर के पिता तो, तुम्हारे हिस्से से कई गुना बड़ा हिस्सा है, घर में और खेत में । फिर छोटे हिस्से पर क्यों जाएँगे हम ?

दाऊजू का बेटा तुम्हारी खेरीज-खाते के टुकडों में से क्या बँटाएगा ? और ठीकरों में से तुम क्या दे पाओगी ?''(७४)

'झूलानट' उपन्यास में भी पारिवारिक संपत्ति पर नारी अधिकारों की समस्या का चित्रण हुआ है । उपन्यास की नायिका शीलों को जायदाद से खारिज करने के मंशुबों से सिद्धहस्त पति को प्रताड़ित

करके लेखिका ने शीलो के माध्यम से अपनी भावना को अभिव्यक्त करते हुए लिखा है कि – ''जमीन–जायदाद की बात यह रहने दो कि यह मामला तो अब भी हमारे–तुम्हारे बीच ही है । बाबूजी, बालकिशन सिरफ अपने हिस्से का मालिक है । वह कौन होता है – हमारे – तुम्हारे हिस्से में टाँग अडानेवाला ? बिलकुल ऐसे ही, जैसे तुम्हारी वह बिचारी कोई नहीं होती हमारे – तुम्हारे बीच ' ये जर–जोरू के मामले बडे बेंडे (कठिन) हैं, बाबूजी ''(७५)

पुष्पाजी के अन्य उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' में भी उक्त समस्या पर चिंतन प्रस्तुत किया गया है । पुरूष का पर स्त्रीगमन, नारी की विभिन्न समस्या को प्रोत्साहन प्रदान करना ही है । उपन्यास में मंसाराम का अवैध सम्बन्ध कदमबाई से स्थापित होता है । फलस्वरूप आनंदी (मंसाराम की पत्नी) को पारिवारिक अधिकार एवम् संपत्ति से बे–दखल किया जाता है । तब आनंदी अपने बेटे से कहती है कि – ''तेरा बाप हिरना कस्सप है । कोई उसकी गर्दन उड़ा दे तो धड़ मोंठ़ की कचहरी पहुँच जाएगा । कबूतरा बेटा के नाम धरती का बैनामा करने ।''(७६)

विश्लषेणात्मक रूप से देखे तो मंसाराम की सारी संपत्ति की उत्तराधिकारी, उनकी पत्नी आनंदी है । किन्तु पुरूषों की निम्न एवम् रूग्ण सोच का शिकार आनंदी होती है । जिसके चलते आनंदी जैसी अनेक अबला नारियों को संपत्ति अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है । आनंदी की तरह 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवन है, जो जेठ की हड़पनीति का शिकार होती है । जेठ जी सारी संपत्ति का अकेला वारिस

बनकर, भुवन को बे–दखल करने का षड्यंत्र करता है । किन्तु भुवन अपने अधिकारों के प्रति सचेत हकर, जेठ जी के सामने न्यायिक रवैया अपनाती है । जैसे – ''मैं भुवनमोहिनी, पत्नी स्वर्गीय विजयसिंह वल्ह स्वर्गीय दुरजयसिंह, निवासीग्राम विराटा, जिला झाँसी, यह दावा करती हूँ कि मैं अपने पति के हिस्से की चल–अचल सम्पत्ति की हकदार हूँ । मूझे इत्तला मिली है कि मेरे पति के साथ मुझे भी मृतक दिखाया गया है और मेरे जेठ कुँवर अजयसिंह ने अपने अकेले का हक बरकरार रखा है । क्योंकि स्व विजयसिंह की कोई सन्तान नहीं । कचहरी से अर्ज है कि अपने पति की जायदाद का हक मुझे सौंपा जाए । मैं कुँवर अजयसिंह की हकदारी पर सखत एतराज करती हूँ ।''[७७]

इस प्रकार देखे तो संविधान में स्त्री और पुरूष को समान हक एवम् अधिकार प्राप्त हुए है । किन्तु संविधान की धाराओं को अवमान्य करते हुए, पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था में स्त्रीओं को अधिकारों से वंचित रखा जाता है । उपर्युंक्त समस्या को लेखिका ने नवीनतम दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का अथाग प्रयास किया है । जिनमें चाहे संपत्ति की समस्या हो या वारिस की समस्या हो । लेखिका ने उक्त समस्या को प्रदर्शित करते हुए, उन्हें न्याय एवम् अधिकार प्राप्त हो, ऐसे सशक्त प्रयास उपन्यासों के जरिए किए हैं ।

५.९ स्त्री की रोजगार – विषयक समस्या :

प्राचीनकाल से लेकर आज के अति आधुनिकयुग में, स्त्री को लेकर पुरूषों की मनःस्थिति परंपरागत ही रही है । जहाँ स्त्री को घर

की चार दीवारी में कैद करके, उन्हें कुण्ठित एवम दमित किया जाता है । वस्तुतः पुरूषों की आर्थिक स्वतंत्रता, विकास के लिए फलदायी द्योतक होती है । वहीं स्त्री का आर्थिक स्वावलंबन, उनके शोषण का विकल्प बनता है ।

पुष्पाजी ने स्त्री के रोजगार – विषयक समस्या पर गहन चिंतन करते हुए अपने मंतव्यो को उपन्यासों में वर्णित किए है । लेखिका ने 'इदन्नमम' उपन्यास में पहाडों की खदानों में काम करनवाले नारी चरित्रों की समस्या पर प्रकाश डाला हैं । पहाडों पर लगे क्रैशर में काम करनेवाली नारियों का मालिक वर्ग के द्वारा शारीरिक एवं आर्थिक शोषण किया जाता है । दिन–रात काम करने के बाद भी मालिक लोग वेतन के लिए मना करते है । जैसे अवधा अपनी बेबसी को ब्यान करते हुए कहती है कि – ''जिज्जी, रात–दिन का भेद तियाग दिया हमने । लू–लपाट और जलती दुपहरिया में पथरा टोरे हमने । रात के बखत चार–चार टिरक की जाँगा आठ–आठ टिरक की लदाई करीं । हारी–बैमारी तक में टपरिया बैठना–सोना गुनाह समान समझा । और न इतेक दिन गया पइसा माँगा, चाहे हमें चेंच – करमेंथा उबेलकें खाना पडा ।[(७८)]

प्रस्तुत सन्दर्भ में नारी को लघुतम वेतन के रूप में कम पैसे देकर क्रैशर के मालिक कैसे आर्थिक शोषण करते है, उस पर प्रकाश डाला गया है । अंत में यह स्त्रियाँ स्वास्थ्य–विषयक गंभीर बीमारियों का शिकार भी होती हैं । पुष्पाजी ने 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में जनजाति नारी चरित्रों की रोजगार – विषयक समस्या का सजीव चित्र प्रस्तुत

किया हैं । जो एक प्रकार से यायावर किश्म का जीवन–यापन करते है यूँ कहे तो लुट–मार, चौरी–डकैती, शराब बनाना, बेचना आदि काम करते है । परंतु उन पीछड़ी जाति को योग्य काम मिले, ऐसा प्रयास कोई भी सशक्त जातियाँ करती नहीं हैं । अत: विभिन्न यातनाओं को झेलकर या फिर शराब बनाकर, बेचते हैं , जैसे – ''माँ की आँखों से वर्षा होनी लगी – बेटा रे, कमर कस ले । होली पर जब ठेकेदार ने हमलावर दल भेजा था, दरोगा पुलिस भेजी थी तो न जाने दोनों में से कौन हमारे ड्रम उठा ले गया ? तेरी अम्मा आज तक ड्रम उधारी माँगती है । धंधे की बात, ड्रम जान से प्यारा लगता है । कौन देता है जान से प्यारी चीज ?''(७९)

तो वहीं पर कबूतरा नारियाँ रोजगार के लिए साकी का काम विवशता से करती दृष्टिगत हैं । जहाँ उनके सौन्दर्य की मादकता के कारण शारीरिक एवं आर्थिक शोषण होता है । जैसे ''गोरकी और गोमता की बहू मछला के दिन में यहाँ रखाकर । भीखम की औरत मुंदरा दाऊ देने आती है । थोड़ी देर रूकी रहेगी तो क्या चला जाएगा ?''(८०)

इस प्रकार पुष्पाजी ने नारी की आमदनी – विषयक समस्या को उजागर किया है । दरअसल पुष्पाजी ने दो–तीन उपन्यासों में ही विषयक समस्या को प्रस्तुत किया है । फिर भी उन्होंने नारी के आर्थिक शोषण के विभिन्न हथकण्डों को चित्रित करके, पुरूषों की मानसिकता का पर्दाफाश किया हैं ।

निष्कर्ष :

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पुष्पाजी के उपन्यासों में भारतीय नारी और उसकी समस्याओं को पर्याप्त प्लेटफोर्म मिला हैं । इन्होंने नारी जीवन को बड़ी गहनता से आत्मसात किया है और अत्यंत कलात्मकता के साथ नारी की समस्याओं को उजागर किया हैं । पुष्पाजी के उपन्यासों में विशेष रूप से अन्तर्जातीय विवाह, अनमेल विवाह, नारी शिक्षा, विधवा नारी का शारीरिक एवं मानसिक शोषण, नारी स्वतंत्रता, स्त्री-पुरूष सम्बन्ध की समस्या, स्त्री समानता और न्यायिक अधिकार, वेश्यावृत्ति और रोजगार-विषयक समस्याओं का यथार्थरूप में चित्रांकन किया गया हैं ।

वैसे तो पुष्पाजी के ज्यादात्तर उपन्यास विध्यांचल के ग्रामीण परिवेश में लिखे गये है । इसीलिए वहाँ की नारियाँ घर की चार दीवारी से बाहर अवश्य निकली है । किन्तु आज भी आधुनिकता के मुखौटों से लिप्त प्रबुद्ध समाज, नारी शोषण के लिए पुख्तौनी परंपरा को अपनाता है । आधुनिक युग की परिवर्तित परिस्थितियों के कारण नारी-जीवन में परिवर्तन अवश्य आया है । फिर भी नवीनतम् विचारों की आड़ में कदम-कदम पर नारी शोषण होता रहता है । प्रबुद्ध विचारकों एवं सुधारकों के जहन की उपज के फलस्वरूप दारूण समस्या में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है । पुष्पाजी ने आधुनिक युगीन परिवर्तित समस्याओं को नये शिरे से प्रारूपित करने का सफल प्रयास किया हैं । जो एक वैचारिक क्रांति की धरातल पर सराहनीय एवं स्तुत्य है ।

संदर्भ सूची

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१.	हंस(पत्रिका-दिसंबर १९९६) में	संकलित अरविंद जैन का लेख	७९
२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२५६
३.	हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार	डॉ. एम. वेंकटेश्वर	२५३
४.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७१
५.	वही	मैत्रेयी पुष्पा	७२
६.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११०
७.	रामदरश मिश्र के उपन्यासों में नारी (शोध-प्रबंध)	मनहर के. गोस्वामी	२४५-४६
८.	स्त्री-सरोकार	आशारानी व्होरा	३०
९.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२
१०.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२
११.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५७
१२.	कही ईसरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६२
१३.	हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार	डॉ.एम. वेंकटेश्वर	२३१
१४.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१८

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
१५.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०६
१६.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३०७
१७.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६५-६६
१८.	महिलाओं से	गांधीजी--	१४४
१९.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९२
२०.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९४
२१.	नारी चेतना और कृष्ण सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१४०
२२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२१
२३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७०
२४.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४४
२५.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२०४-२०५
२६.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१६६
२७.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२५-२२६
२८.	कही ईसुरी फाग (उपन्यासा	मैत्रेयी पुष्पा	११५
२९.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४०
३०.	नारी चेतना और कृष्ण सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी	१४८
३१.	वही	डॉ. गीता सोलंकी	१४९

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
३२.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२८
३३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४६
३४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०५-१०६
३५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१५५-१५६
३६.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३६०-३६१
३७.	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविधरूप	डॉ. गणेशदास	४५
३८.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२९९
३९.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७५
४०.	स्त्रियाँ और उनकी समस्याएँ	गाँधीजी	१०५-१०६
४१.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१३०
४२.	हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार	डॉ. एम. वेंक्टेश्वर	३७
४३.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३४५
४४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९४-९५
४५.	कही ईसुरी फाग (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	५७
४६.	त्रिया-हठ (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४०
४७.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२८
४८.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४८

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
४९.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४१४-४१५
५०.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	९५
५१.	देवेश ठाकुर के उपन्यासों में नारी	डॉ. माधवी बागी	१६०
५२.	अल्मा कबुतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	८७-८८
५३.	विजन (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१२९
५४.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४
५५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३७
५६.	बेतवा बहती रही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२०
५७.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७०
५८.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७०
५९.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१०४
६०.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२४-३२५
६१.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२५-३२६
६२.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३१
६३.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४४
६४.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१४०
६५.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६२-२६३
६६.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२७५
६७.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२७७

क्रम	सहायक ग्रंथ	लेखक / संपादक	पृष्ठक्रमांक
६८.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७४
६९.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	४८
७०.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	३२
७१.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७१
७२.	आधुनिक समाज की नारी चेतना	डॉ. सुशील वर्मा	११२
७३.	चाक (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१७
७४.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	१६५
७५.	झूलानट (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११२
७६.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	११४
७७.	अगनपाखी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	७
७८.	इदन्नमम (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२६७
७९.	अल्मा कबूतरी (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	६१
८०.	वही (उपन्यास)	मैत्रेयी पुष्पा	२२५

उपसंहार

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी पात्र ''शीर्षक शोध-प्रबंध-लेखन करते समय, तथ्यात्मक विश्लेषण से नयी दिशाओं की परिकल्पना का अनायास ही उद्घाटन आवश्य हुआ है । प्रबंध लेखन के निष्कर्षात्मक तथ्य भी सामने आये है, जो मेरी परिकल्पना और विश्लेषणात्मक रूप का आधारस्तंभ है । किसी भी दिशा में किए गए संशोधन से, विषय सन्दर्भ की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति असंभव-सी है । किन्तु जो नये तथ्य, धारणाएँ एवं निष्कर्ष प्राप्त होते हैं । उनका ब्यौरा शोध-प्रबध-लेखन को उचित ठहराता है । अतः मेरे शोध-प्रबंध के तथ्यों की अवधारणा ही मूझे शोधार्थी की उपाधि प्रदान करती है ।

सृष्टि का निर्माण मतलब स्त्री कोमलता की प्रतिकृति है । जो प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल की चौखट पर पद्चिहन मंडित करती रही है । जिसको पुरूषों की मनःस्थिति के अनुसार विभिन्न विभागों में विभाजित करके, पुरूषों की अनुगामिनी करार दिया गया है । साहित्यकारों ने स्त्री के मनमोहक सौन्दर्य को साहित्य में प्रतिबिम्बित करके नारि चरित्र की विभिन्न अवधारणाओं को प्रस्तुत किया हैं । उपन्यास के उद्भव से लेकर वर्तमान तक देखे तो नारी का स्वरूप निरंतर बदलता रहा है । प्रारंभ में प्राचीन परंपरागत आदर्शवादी रूप से शुरू हुई यात्रा आज इस मकाम पर पहूँची है कि आज नारी बंधी-बंधाई प्राचीन लकीर से बाहर निकलकर विश्व के प्रांगण में विचरण की लालसा मन में संजोये पथ पर अग्रसर है । मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में भारतीय नारी के

परंपरागत प्राचीन एवं अति आधुनिक दोनों रूपों का नवीनतम दृष्टिकोण से चित्रांकन दृष्टिगोचर होता है । दोनों रूपों में लेखिका ने समकालीन पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश का आँचलिकता निहित किया है । आँचलिकता की आड़ में लिखे गये उपन्यासों के नारीपात्रों में युगानुरूप नवचेतना की प्रवृति के साथ सामाजिक अधिकार, आत्मसम्मान की भावना, आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास की प्रवृति समाविष्ट हुई है ।

वैसे तो साहित्य में महिला-साहित्यकारों का प्रादूर्भाव कोई विशेष बात नहीं है । किन्तु उन साहित्यकारों की संवेदनात्मक सृजनशीलता ही, उनकी साहित्ययात्रा को मुखारित करती है । । बींसवीं शती के उतरार्द्ध में महिला लेखिकाओं ने स्त्री-विमर्श का एक प्रवाह प्रवाहित किया है । जिन में अधिकत्तर लेखिकाओंने नारी-चेतना के स्वर को मुखरित किया है । नारीवादी धारा की प्रखर उदबोधक मैत्रेयी पुष्पा ने नारी-विषयक महिला साहित्यकार के रूप में अपनी अलग पहचान बनायी है । पुष्पा जी का जन्म झाँसी जिले के 'सिर्कुरा' नामक गाँव में हुआ था । वैसे तो साहित्यकारों के व्यक्तितत्व और कृतित्व में समानता होती है । चूँकि व्यक्तिगत अनुभव और अभावग्रस्त ही उनके साहित्य निर्माण की नींव है । अतः पुष्पाजी ग्रामीण परिवेश के साथ वहाँ के नारीजीवन की साम्प्रत स्थिति से पूर्णतया वाकिफ थी । परिणामस्वरूप नीजी अनुभवों की अनुभूति ही, उन्हें लिखने के लिए प्रेरणाबल प्रदान करती है । उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में ग्रामांचलों के नारीपात्रों के विभिन्नरूप, उनके शारीरिक और आर्थिक शोषण की समस्याएँ, पुरूषसत्ता के आधिन नारी की मुक्ति की छटपटाहट, यौन स्वचछंदता आदि भावों को विध्यमान

किया है । पुष्पाजी की रचनाधर्मिता उनके विचारों के अनुरूप हैं । उनका समष्ठिपरक चिंतन उनके उपन्यासों में प्रतिफलित हुआ है । उनकी रचनादृष्टि एवं जीवनदृष्टि में अन्योन्य रूप से घनिष्ट सम्बन्ध है ।

उपन्यास साहित्य के उपरांत उन्होंने कहानी, आत्मकथा, कविताएँ, स्त्री-विमर्श संगोष्ठियाँ आदि में उनहोंने नारी के जीवन में बनते - बिगडते रिश्तों, स्त्री-सम्बन्ध में आयी शिथिलता, जीवन मूल्यों में आये हुये परिवर्तन, यौन-स्वैराचार के परिणाम स्वरूप आधुनिक ढंग में वेश्यावृति आदि को अपने गद्य-पद्य साहित्य में प्रस्तुत करके समकालीन समाज में नारी जीवन के विविध सन्दर्भों को रेखांकित किया हैं ।

पुष्पाजी का साहित्य सृजन भौगोलिक एवं सामाजिक परिवेश विशेषतः विध्यांचलों के क्षेत्रिय भू-भागों को प्राधान्यता देता हैं । पुष्पाजी के 'विजन' उपन्यास को छोड़कर, देखे तो सभी उपन्यास विध्यांचल और बून्देलखण्डीय परिवेश के मुखातिब होते है ।

क्षेत्रिय-प्रांतियता को सजीवता एवं रोचकता प्रदान करने हेतु पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में सांस्कृतिक परिवेश, सामाजिक परिवेश और ग्रामीण संस्कृति को सूक्ष्मता के साथ प्रस्तुत किया है ।

तत्कालीन परिवेश के आधारित प्रांतियता एवं अंचल-विशेष को संकेतार्थ करनेवाली भाषा के रूप को अपनाया गया है । बून्देलखण्ड की प्रादेशिक बोलियाँ और हिन्दी भाषा का समन्वित रूप, कथावस्तु को प्रज्जलवित करता हैं । विशेष रूप में 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास के फागों की भाषा तो पूर्णरूप से बून्देलखण्ड परिवेश की परिचायक बनती है ।

पुष्पाजी के उपन्यासों में स्त्री-पात्रों की प्रधानता अधिक रही है । स्त्री-जीवन सम्बन्धी विसंगतियों को नारी चरित्रों के द्वारा अभिव्यक्त किया है । 'चाक' में सारंगनैनी, रेशम, कलावती चाची 'इदन्नमम' में मन्दाकिनी, कुसुमा, बऊ, प्रैम, 'अल्मा-कबूतरी' में अल्मा, कदमबाई, 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी और मीरा, 'अगनपाखी' में भुवनमोहिनी, नानी, दामिनी, 'कही ईसुरी फाग' में रजऊ और ऋतु, 'विजन' में डा. नेहा और डा. आभा, 'झूलानट' में शीलो, अम्मा, और 'त्रिया-हठ' में मीरा और स्मिता आदि नारी-चरित्रों का संघर्षपूर्ण प्रयास, पुरूषसत्ता को परास्त करता हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी के विविधों रूपों का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि व्यक्ति एक होता है लेकिन उसके रूप अनेक होते है । क्योंकि मनुष्य जीवन को कभी एक स्तर पर नहीं जीता है । मनुष्य को प्राथमिक रूप में युग सापेक्षता में जीवन जीना पड़ता हैं ।

नवम दशक के बाद के हिन्दी उपन्यासों में परिवार एवं परिवारेत्तर नारी के रूपों में नारी सम्बन्धी परम्परागत मिथ टूट गये हैं । नारी के व्यक्तितत्व के रूपगत इस बदलाव ने उसके संस्कारों एवं मानसिकता को झकझोरा हैं । मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में पारिवारिक संबंधी की दृष्टि से नारी के कई रूपों को कन्या, पत्नी, माँ, बहन आदि के रूप में चित्रित किया है ।

मैत्रेयी पुष्पा के अधिकांशतः उपन्यास अँचल-विशेष को केन्द्रित करके लिखे गये है । आँचलिकता का सामर्थ्य सत्य प्रस्थापित करने के लिए,

उक्त नारियों की आँचल-विषयक विशेषताओं को सूक्ष्म-से-सूक्ष्म रूप में चित्रित किया गया हैं । पुष्पाजी ने नारी को परंपरागत रूप में प्रस्तुत न करके, आधुनिक विद्रोही नारी के रूप में चित्रित किया गया हैं । अधिकांश पत्नियाँ आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं स्वावलंबी नहीं है । किन्तु उन नारी चरित्रों में विशेष प्रकार का जूझारूपन और अड़िगता के भाव विध्यमान है । जो साम्प्रत परिस्थिति से लड़कर अपना अस्तित्व कायम करती है । पुष्पाजी की नारियाँ रूढिवादी एवं रूढिमुक्त दोनों प्रकार की है । रूढि मुक्त विचारधारा के तहत 'चाक' की सारंग, कलावती चाची, पांचन्ना बीबी, 'इदन्नमम' की कुसुमा, प्रैम, लीला राउतिन, 'अल्मा-कबूतरी' की कदमबाई, भूरी, 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी, 'कही ईसुरी फाग' की रज्जो, 'अगनपाखी' की भुवन, 'झूलानट' की शीलो, 'त्रिया-हठ' की स्मिता आदि नारियाँ मुक्त - यौनाचार की ओर झूकाव रखती है । एक तरह से यौनक्रांति के माध्यम से नारी सशक्तीकरण के बीज बौती है ।

पुष्पाजी की नारियाँ परंपरागत मूल्यों एवम् निषेधों से मुक्ति के लिए साहसिक रूख अपनाकर, कामकाजी, दार्शनिक और राजनीतिज्ञ के रूप में उभरती है ।

प्रस्तुत विषय का अध्ययन करके मैंने यह पाया कि वे नववें दशक और उसके बाद के दशक की उपन्यासकार है । पुष्पाजी के नारीपात्रों की चरित्रगत विशेषताएँ निम्न रूप में दिखाई देती है । उनकी नारियाँ अपने जीवन में अपेक्षित परिवर्तन करने की शक्ति रखती हैं । तो साहसी और संघर्षशील भी है । वे पुरूषों द्वारा होनेवाले यौनात्याचार एवं शोषण का विरोध करती है । वे पुरूष की दासता का विरोध करती हुयी समान स्तर

एवं हक की माँग करती है । वे अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए वे आत्मनिर्भर एवं स्वावलंबी जीवन व्यतीत करती है । उ.दा. 'विजन' की डॉ. आभा, इदन्नमम की मन्दा, 'चाक' की सारंग, 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा, कदमबाई 'कही ईसुरी फाग' की सरस्वती देवी आदि ।

वैसे तो लेखिका के अधिकत्तर उपन्यास ग्रामीण संस्कृति को उजागर करते है । बाकायदा उन उपन्यासों में वर्णित नारी-चरित्रों का आँचलिक परिवेश के साथ निःसंदेह सम्बन्ध स्थापित रहता है । किन्तु आँचलिकता के रीत-रिवाजों को कायम करते हुए भी पूर्णतया आधुनिक विचारधारा में सम्मलित होते हैं । किन्तु पात्रों की मानसिकता को साम्प्रत समय की विचारधारा के साथ जोडकर, लेखिका ने पात्रों को नवीनतम दिशा की ओर प्रवाहित भी किया है । पुरानी मनःस्थिति से पीडित समाज को नवीनतम राहों पर प्रस्थापित करने के लिए, लेखिका ने अपने नारी-चरित्रों में विद्यंशता, साहसिकता, विद्रोहभावना, सांस्कृतिक चेतना, अस्तित्व - तत्परता, जूझारूपन एवं अड़िगता और आधुनिकता जैसी विशेषताओं को ठुस-ठुस के भरा हैं । पुष्पाजी के उपन्यासों के नारी पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं के बारे में इस प्रकार कहा जा सकता है कि उक्त नारीपात्र नयी चेतना सम्पन्न नारियाँ हैं । अपनी अस्मिता एवं स्त्रीत्व के प्रति सजग रहकर समानता और अधिकारों की माँग करनेवाली मानवी के रूप में नजर आती हैं ।

प्रस्तुत उपन्यासों के अध्ययन के बाद मैंने नारी पात्रों के माध्यम से नारी जीवन की समस्याओं को विश्लेषित किया है । साथ-साथ उनके समाधान

की दिशाओं को भी सूचित किया हैं । पुष्पाजी के अधिकत्तर उपन्यास ग्रामीण परिवेश की पृष्ठभूमि में लिखे गये हैं ।

पुष्पाजी के अधिकत्तर नारीपात्र मध्यमवर्गीय और पीछडे वर्ग से सम्बन्ध रखते हें । परिणाम स्वरूप आर्थिक अभावों एवं परावलंबन से पीडित नारियाँ शारीरिक, आर्थिक और सामाजिक स्तर पर अमानुषि अत्याचारों की शिकार बनती हैं । लेखिका ने आदर्शवादी विचारधारा को छोडकर यथार्थवाद के आधार पर नारी जीवन से जूडी विभिन्न समस्याओं को प्रत्यक्ष रूप में चित्रित किया हैं । जिन में विधवा समस्या की उत्पीडन, स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की विवशता, नारी स्वतंत्रता की छटपटाहट, अभावग्रस्ता से जुडी वेश्या समस्या, पति-पत्नी के दाम्पत्य जीवन की दरारें, नार शिक्षा की अवगणना अंतर्जातीय विवाह की दरिद्रता, अनमेल विवाह का मुखौटा, स्त्री-पुरूष समान अधिकारों की समस्या, पुरूष अत्याचारों के फलस्वरूप बलात्कृत नारी आदि कतिपय समस्याओं ने उग्र स्वरूप धारण किया हैं ।

वास्तव में समकालीन महानगरीय एवं ग्रामीण नारी जीवन को अनेक यातनाओं, पीडाओं, तनावों एवं संत्रास से गुजरना पड रहा हें । फलस्वरूप वर्तमान समय में आज भी नारी पीड़ित, शोषित, कुण्ठित एवं तनावग्रस्त जीवन-यापन कर रही हैं ।

पुष्पाजी, नारी की विभिन्न समस्याओं की प्रस्तुती पूर्णतया नहीं कर पायी हैं । किन्तु नारी समस्याओं की प्रस्तुती देकर समस्या के भीतर ही समाधान का संकेत अवश्य दिया हैं । आम तौर पर उन्होंने स्त्री-पुरूष के अवैध यौन

सम्बन्ध का विस्तृतीकरण करके यौनक्रांति की पृष्ठभूमि की प्रतिक्रियाएँ सचेतपूर्ण रूप में दि है । जिसके चलते विभिन्न समस्या के समाधान को उल्लेखित किया गया हैं । लेखिका ने विशेष रूप से नारी समस्या को यथार्थ के धरातल पर खोजने का प्रयास किया है । उक्त साहस उन्हें, बोल्डनेस साहित्यकार की सीमाओं में सम्मलित अवश्य करता है । किन्तु साम्प्रत समय की आवश्यकताओं को नजरअंदाज करके, निर्भीकता के साथ प्रस्तुत स्वर को साहित्य में मुखरित किया है ।

अंत मैं इतना कहना पर्याप्त होगा कि 'अनुभूति की सच्चाई' मैत्रेयी पुष्पा के समस्त साहित्य की आधार-शिला है उन्होंने बदलते परिवेश और मूल्यों के अनुरूप बदलते मानवीय सम्बन्धों को नये सन्दर्भों के बीच रखकर समझने और परखने की ईमानदारी से कोशिश की हैं । उन्होंने आधुनिक वातावरण के अनुरूप स्त्री की स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया है । जिस प्रकार साहित्य का समाज पर सच्चा प्रभाव पडता है । उसी प्रकार अपने साहित्य के जरिए नारी-विमर्श का झंडा लहराया है । आगे भी लहराती रहेगी । उनके समस्त साहित्य में नारी केन्द्र में रही है । बाकायदा उनका उद्देश्य नारी चेतना ही रहा है । फिर भी मैंने तो सिर्फ प्रयास ही किया है ।

परिशिष्ट

ग्रंथानुक्रमणिका

(अ) आधार ग्रंथ : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास :

१.	बेतवा बहती रही	१९९३
२.	इदन्नमम	१९९४
३.	चाक	१९९७
४.	झूलानट	१९९९
५.	अल्मा कबूतरी	२०००
६.	अगनपाखी	प्र.सं.–२००१
७.	विजन	प्र.सं.–२००२
८.	कही ईसुरी फाग	प्र.सं.–२००४
९.	त्रिया–हठ	प्र.सं.–२००६

(ब) सहायक ग्रंथ :

१.	अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य	सं.राजेन्द्र यादव / अर्चना वर्मा
२.	आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण	डॉ. महम्मद अज़हर ढेरीवाला
३.	आधुनिक समाज की नारी चेतना	डॉ. सुशील वर्मा
४.	उतर शती के हिन्दी उपन्यास	एन. मोहनन्
५.	उर्वशी	रामधारी सिंह 'दिनकर'
६.	कामायनी	जयशंकर प्रसाद

७.	गोदान	प्रेमचन्द
८.	जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारीपात्र	डॉ. सावित्री मठपाल
९.	देवेश ठाकुर के उपन्यासों में नारी	डॉ. माधवी बागी
१०.	धर्म और समाज	डॉ. राधाकृष्णन सर्वपल्ली
११.	नई सदी के उपन्यास	सं. डॉ. नवीनचंद्र लोहनी
१२.	नारी चेतना और कृष्णा सोबती के उपन्यास	डॉ. गीता सोलंकी
१३.	नारी और न्याय	डॉ. विष्णुदत्त शर्मा
१४.	नारी शोषण समस्याएँ एवं समाधान	सं. डॉ. राजकुमार
१५.	प्रसाद के नाटकों के नारी पात्र	डॉ. श्रीमती मुकुलरानीसिंह
१६.	बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिन्दी उपन्यासों का प्रवृतिमूलक अनुशीलन	डॉ. क्षितिज यादवराव धुमाळ
१७.	मनुस्मृति में नारी	डॉ. सुमंगला झा
१८.	मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारीपात्र (लघुशोध-प्रबंध-एम.फिल्.)	भरत वी. भेडा
१९.	महिलाओं से	गांधीजी
२०.	रामदरश मिश्र के उपन्यासों में नारी (शोध-प्रबंध-पीएच.डी.)	प्रा. मनहर के. गोस्वामी
२१.	विष्णुपुराण: स्त्रि शिक्षणात्री वटवाल	सरोजिनी बाबर
२२.	समकालीन महिला - लेखन	डॉ. ओमप्रकाश शर्मा

२३. स्त्री–सरोकार — आशारानी व्होरा

२४. स्त्रियाँ और उनकी समस्याएँ — गांधीजी

२५. स्त्रीत्व का उत्सव — राजकिशोर

२६. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी चरित्र की अवधारणा — डॉ. नीलिमा वर्मा

२७. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रूप — डॉ. गणेशदास

२८. हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति — डॉ. वीना रानी यादव

२९. हिन्दी उपन्यास की दिशाएँ — डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ

३०. हिन्दी उपन्यास में नारी चित्रण — डॉ. बिन्दु अग्रवाल

३१. हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार — डॉ. एम़ वेंकटेश्वर

३२. हिन्दी साहित्य में महानगरीय नारी जीवन — डॉ. बाबासाहेब कोकाटे

३३. हिन्दी उपन्यास और नारी समस्याएँ — डॉ. स्वर्ण कांता तलवार

(क) शब्दकोश :

१. हिन्दी–गुजराती कोश — सं. मगनभाई देशाई

२. बड़ाकोश — सं. प्रा. रतिलाल नायक

(ड) पत्र–पत्रिकाएँ :

१.	अक्षरा	अक्टू–दिस–२०००
२.	ताप्तीलोक	सितम्बर–२००५
३.	मधुमती	जनवरी–२००८
४.	शोध–क्षितिज	दिसंबर–२००४
५.	सम्मेलन पत्रिका (शोध–त्रैमासिक भाग ९२ : संख्या १–२००७)	
६.	हंस	दिसम्बर–१९९६
७.	हंस	सितम्बर–२००६
८.	हिन्दूस्तानी – त्रैमासिक भाग ६८ – जू.सि. २००७	